आज की वैज्ञानिक महिलाएं

संसार की 11 वैज्ञानिक महिलाओं के
जीवन और कार्य का परिचय

एडना योस्ट

'WOMEN OF MODERN SCIENCE' का अनुवाद

अनुवादक

कातिमोहन

मूल्य : पाँच रुपये ○ तीसरा संस्करण 1972

AAJ KI VAIGYANIK MAHILAEN (Biography) by Edna Yost

5.00

प्राक्कथन

वैज्ञानिक महिलाओ की जीवनी से सम्बन्धित सामग्री बडी ही सीमित मात्रा मे उपलब्ध है। जीवनी अनेक पाठको का प्रिय विषय है, और जब विज्ञान को सामान्य जन की समझ मे आने योग्य भाषा और विचारो मे प्रस्तुत किया जाता है तो पाठको को उसमे भी विशेष आनन्द आता है। इस तथ्य की जानकारी ने इस लेखिका को वैज्ञानिक महिलाओ के इन सक्षिप्त रेखाचित्रो को प्रस्तुत करने की प्रेरणा दी। आशा है, जिन पाठको को विज्ञान का साधारण ज्ञान है उन्हे भी यह पुस्तक सहज और रोचक लगेगी।

प्रकाशक महोदय ने मुझसे कुछ ऐसी वैज्ञानिक महिलाओ को चुन लेने के लिए कहा था जिन्होने विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रो मे काम किया हो, और जिनका कार्य युवा छात्र-छात्राओ को विज्ञान को अपना जीवन-धर्म बनाने की दिशा मे प्रेरित कर सके। स्पष्ट है कि मेरा उद्देश्य विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रो मे से सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक महिलाए चुनना नही था। (शायद सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक महिलाओ का निर्धारण सभव भी नही है।) प्रकाशक और मै इस बात पर सहमत थे कि चुनी गई महिलाओ मे से कुछ तो ऐसी हो जिन्होने अपना वैज्ञानिक कार्य लगभग पूर्ण कर लिया हो, और कुछ ऐसी जिनका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य अभी भविष्य के गर्भ मे हो। हा, सभी वैज्ञानिक महिलाए ऐसी हो, जिन्हे अपने-अपने क्षेत्र मे प्रतिष्ठा प्राप्त हो चुकी हो। साराश यह कि इस पुस्तक के लिए हमे ऐसे श्रेष्ठ वैज्ञानिक चाहिए थे जिनमे ये दो बाते हो—(१) वे महिला हो, (२) उन्हे अपने क्षेत्र के पुरुष और महिला वैज्ञानिको मे अग्रणी मानकर सम्मानित किया जा चुका हो। इस प्रकार के वैज्ञानिको की तलाश मे मुझे कई लोगो से सहायता मिली, किन्तु अतिम चुनाव की ज़िम्मेदारी मुझपर ही है।

अगला कदम और मुश्किल था। एक-एक करके मुझे इन महिलाओ को आश्वस्त करना पडा कि इस पुस्तक की तैयारी मे उनकी सहायता आवश्यक है, ये सभी अपने क्षेत्र की लब्धप्रतिष्ठ वैज्ञानिक थी और इनका जीवन अत्यधिक व्यस्त था। किन्तु, इस सबसे कोई विशेष अन्तर नही पडता। क्योकि, एक बार

इस वात से आश्वस्त हो जाने पर कि जो काम किया जा रहा है वह समीचीन है और उनकी सहायता के विना सुचारु रूप से सम्पन्न नही हो सकता, जो लोग जितने वडे और जितने अधिक व्यस्त होते हैं वे उतनी ही आसानी से सहयोग देने को तत्पर हो जाते है। मेरे मार्ग मे सवसे वडी वाधा यह थी कि अधिकाश वैज्ञानिक न केवल आत्मप्रचार नही चाहते वल्कि उससे कतराते भी हैं, और दुर्भाग्य मे आज 'सक्षिप्त जीवन-परिचय' शब्द उस साहित्य के ही लिए प्रयोग किया जाता है जिसका उद्देश्य अतिरजित तथ्यो द्वारा आत्मप्रचार होता है।

अन्तत मुझे उनका सहयोग पाने मे सफलता प्राप्त हुई। मैंने इस वात पर जोर दिया कि प्रचार और जीवनी दो अलग-अलग चीजे है और मेरा उद्देश्य प्रचार नही है वल्कि उनकी वैज्ञानिक उपलव्धियो पर विशेप प्रकाश डालते हुए उनका यथार्थ जीवन-परिचय देना ही है। मैंने आश्वासन दिया कि यदि उनमे से हरेक अपने विकासशील वैज्ञानिक के क्रमिक विकास का अध्ययन करने मे मुझे सहायता देंगी तो मै वैज्ञानिक महिलाओ की जीवनी-विपयक साहित्यिक रिक्ति को पूर्ण करने का प्रयत्न करूगी।

उस सहयोग का परिणाम है—वैज्ञानिक सफलता प्राप्त करनेवाली महिलाओ से सम्वद्ध यह पुस्तक। लेखिका उन महान वैज्ञानिक महिलाओ की अत्यन्त कृतज्ञ है जिन्होंने उसे समान स्तर पर सहयोग दिया और आधुनिक युग को व्यापक रूप मे समझने के लिए एक गहरी अन्तर्दृष्टि प्रदान की।

—एडना योस्ट

न्यूयार्क सिटी
जनवरी, १६५६

क्रम

विज्ञान मे रसायन, भौतिकी और शरीर-क्रिया-विज्ञान एव चिकित्सा इन तीन विषयो पर नोवल पुरस्कार दिए जाते है। ये पुरस्कार सन् १६०१ से प्रारम्भ हुए है और तब से जाति, धर्म या राष्ट्रीयता के आधार पर बिना कोई भेद-भाव किए प्रदान किए जाते हैं। विज्ञान के क्षेत्र मे ये ससार के सर्वोच्च पुरस्कार माने जाते हैं। यदि पुरस्कारो की निर्णायक समिति इस परिणाम पर पहुचती है कि किसी क्षेत्र-विशेष मे कोई ऐसा अपूर्व काम नही हुआ जिसे यह सर्वोच्च सम्मान दिया जा सके तो उस क्षेत्र का पुरस्कार रोक लिया जाता है।

तीन बार ऐसा हुआ है कि यह नोबल पुरस्कार वैज्ञानिक शोध करनेवाले दम्पतियो को सयुक्त रूप से दिया गया है। आज तक केवल ये ही तीन महिलाए विज्ञान मे नोवल पुरस्कार प्राप्त कर सकी है।[1] सन् १६४७ मे अमरीका को पहली बार यह सम्मान मिला जवकि सैंट लुई-स्थित वार्शिगटन विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ मेडिसिन के कार्ल और गर्टी कोरी को शरीर विज्ञान एव चिकित्सा के क्षेत्र मे नोवल पुरस्कार का आधा भाग प्रदान किया गया। कोरी-दम्पती जन्मत आस्ट्रियाई थे किन्तु प्राग के मेडिकल स्कूल से स्नातक होने के कुछ ही दिन वाद उन्होने स्वेच्छा से अमरीकी नागरिकता ग्रहण कर ली थी। अमरीकी नागरिक

१ सन् १६०३ मे मेरी क्यूरी और उसके पति को भौतिकी मे सयुक्त रूप से नोवल पुरस्कार दिया गया था। वाद मे केवल उसे रसायन पर नोवल पुरस्कार दिया गया। क्यूरी स्वतन्त्र रूप से विज्ञान मे नोवल पुरस्कार प्राप्त करनेवाली एकमात्र महिला तो है ही, साथ ही वह एकमात्र पुरस्कार विजेता है जिसे यह पुरस्कार दो वार दिया गया है।

बनने के बाद उन्हे अपने उस शोध-कार्य के लिए सब सुविधाए प्राप्त हो गई जिस-पर आगे चलकर उन्हे पुरस्कृत किया गया और जब सन् १९४७ मे उन्हे यह सर्वोच्च सम्मान प्राप्त हुआ तब उन्हे अमरीकी नागरिक बने लगभग बीस साल हो चुके थे।

यह कहानी गर्टी थेरेसा रैड्निट्ज नामक लडकी की है जो आगे चलकर गर्टी थेरेसा कोरी के नाम से विख्यात हुई और जिसने अपने शोध-कार्य से वास्तव मे नोबल पुरस्कार के अपने भाग को उपार्जित किया। उसका जीवन और कार्य अपने पति से इतने घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध हो चुके है कि एक के बिना दूसरे की चर्चा करना असभवप्राय है। हा, मेडिकल स्कूल मे एक-दूसरे के सपर्क मे आने और सयुक्त रूप से काम करने से पहले की बात दूसरी है। अपने उन प्रारम्भिक वर्षों मे से गर्टी रैड्निट्ज का एक वर्ष तो बहुत ही कठिनाईपूर्ण रहा। यदि सोलह वर्ष की अवस्था मे वह असाधारण और श्रमसाध्य कार्य के लिए कमर न कसती तो शायद उसकी कहानी कुछ और ही होती और आज हम उसे पूर्णतम, सम्पन्नतम और सर्वाधिक सुखी जीवन बितानेवाली महिला के रूप मे याद न करते।

उसके जीवन के अनेक पक्ष थे और उसके परिपक्व एव बहुमुखी व्यक्तित्व के निर्माण मे उन सभीका समान महत्त्व है। एक पत्नी और मा के रूप मे वह अपनी गृहस्थी मे सब प्रकार सुखी व सतुष्ट थी। एक कर्मनिष्ठ वैज्ञानिक के नाते उसे प्रयोग-शाला की उन दुर्बोध समस्याओ मे परम सन्तोष प्राप्त होता था जिन्हे सुलझाने मे वह कठोर बौद्धिक अनुशासन और रचनात्मक कल्पना का प्रयोग करती थी। एक मिलनसार और स्पृहणीय मित्र के रूप मे उसके घनिष्ठ मैत्री-सम्बन्ध अनेक धर्मों और देशों के लोगों से थे। दस वर्ष तक वह बिस्तर पर पड़ी रही और यद्यपि इस लम्बी बीमारी ने उसे एक हद तक मुहताज कर दिया तथापि उसका विकास नही रुका। बीमारी को सिर-माथे रखकर वह अपने मानवीय गुणों और सूझ-बूझ का विकास करती रही। उसने अपनी आखो से, मानवों के स्वास्थ्य और रुग्णता-विषयक समस्याओं की दिशा मे किए गए अपने योगदान को समादृत होते तथा विज्ञान के क्षेत्र मे मान्यता प्राप्त करते देखा। जीवन मे उसे जो सफलताए मिलीं वे निश्चित रूप से उन सभी समस्याओं से परे थीं जो उसके सामने उस समय थीं जबकि सोलह वर्ष की उम्र मे उसने मार्ग की सब बाधाओं को पार करके डाक्टरी पढ़ने का संकल्प लिया था।

गर्टी रैड्निट्ज का जन्म प्राग मे १८९६ मे हुआ। उन दिनों यह नगर आस्ट्रिया

मे था, चेकोस्लोवाकिया मे नही। उसका पिता प्राग मे चीनी की कई परिष्करणशालाओ का प्रबन्धक था। अपने सामाजिक वर्ग की अधिकाश लडकियो की तरह दस साल की अवस्था तक घर पर पढाने के बाद उसे लडकियो के एक स्कूल मे दाखिल करा दिया गया। उन दिनो के लिहाज से यह एक अच्छा स्कूल था। इसका लक्ष्य था बडे घरो की लड़कियो को जीवन मे सफल बनने की शिक्षा देना। इसलिए इस स्कूल मे लडकियो के सामाजिक और सास्कृतिक गुणो के विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता था। चूकि कुछ निसर्गत बौद्धिक योग्यताए इन गुणो की परिधि मे नही आती इसलिए स्कूल के पाठ्यक्रम मे विज्ञान या गणित को विशेष स्थान नही दिया गया था। शुरू मे गर्टी रैड्नित्ज को इन विषयो की कमी नही खली। वह स्कूल की पढाई मे खूब रुचि लेती थी और उसके शिक्षक शीघ्र ही समझ गए कि इस लडकी मे जन्मजात सामाजिक गुण हैं जिन्हे सरलता से विकसित किया जा सकता है। आगे चलकर जीवन-भर वैज्ञानिक शोध-कार्य मे लगे रहने पर भी उसके ये जन्मजात गुण कभी नष्ट नही हुए। भावी डा० गर्टी कोरी की दयालुता उसके छात्र-जीवन मे ही उजागर हो गई थी।

फिर भी गर्टी रैड्नित्ज ऐसी लडकी न थी जो अधिक दिनो तक अपने पूर्णतर विकास की अवहेलना सहन कर पाती। सोलह वर्ष की अवस्था मे, जबकि वह प्राग के अपने उस स्कूल से स्नातक होने ही वाली थी, उसने डाक्टरी पढने का फैसला किया। सम्भवत अपने इस निर्णय मे वह किसी हद तक अपने एक सम्बन्धी से प्रभावित हुई होगी जो एक मेडिकल स्कूल मे कौमारभृत्य का प्रोफेसर था। पूछताछ करने पर पता चला कि मेडिकल स्कूल मे दाखिल होने के लिए उसे आठ साल लैटिन सीखनी होगी (अभी तक उसे लैटिन का एक अक्षर भी नही आता था), जितना गणित उसने पढा है उसके आगे पाच साल गणित और पढना होगा, और इसके अलावा भौतिकी एव रसायन का भी अध्ययन करना होगा। यह सारा काम जिमनेज़ियम मे किया जा सकता था जोकि इस तरह का स्कूल था जिसमे अधिकाशत छात्र पुरुष वर्ग के थे। पता चला कि गर्टी को भी वहा दाखिला मिल सकता है बशर्ते कि वह अपने को उस काम के योग्य सिद्ध कर सके। उसे मालूम था कि मेडिकल स्कूल मे दाखिल हो जाने के बाद उसे छ वर्ष तक वहा पढना होगा। एक बार तो उसे ऐसा लगा होगा कि डाक्टरी की डिग्री

लेने से पहले ही उसकी गरदन हिलने लगेगी और बाल सफेद हो जाएगे। मगर वह गर्टी रैड्नित्ज़ थी, कोई मामूली लडकी नही। उसने निश्चय किया कि स्नातक हो जाने के बाद गर्मी की छुट्टियो मे वह सैर करेगी और इसके बाद जल्दी से जल्दी मेडिकल स्कूल मे दाखिल होने के लिए अनिवार्य योग्यता प्राप्त करेगी। उसने डाक्टर बनने का दृढ संकल्प कर लिया।

टाइरॉल पर छुट्टियां मनाते हुए उसका परिचय एक व्यक्ति से हुआ जो टेत्शेन मे रीयल जिमनाजियम नामक स्कूल मे शिक्षक था। जब उसे गर्टी की समस्याओ और भावी योजनाओ का पता चला तो उसने एक दिन गर्टी को सुझाया, "ऐसा है तो तुम इन छुट्टियो मे ही मुझसे लैटिन सीखनी क्यो न शुरू कर दो?" वह राजी हो गई और भूरी आखो व घने ललछौहे बालोवाली यह आकर्षक लडकी, जो छुट्टियो मे जी भरकर मौज उडाने यहा आई थी, धीरे-धीरे टाइरॉल के सैलानियो के लिए ईद का चाद हो गई। छुट्टिया खत्म होते न होते गर्टी ने इतनी लैटिन सीख ली थी जितनी तीन वर्ष मे सीखी जाती है। उसने फैसला किया कि अगले पाच वर्षो मे भी यथासभव वह अपनी यही रफ्तार बनाए रखेगी।

उसी साल शरद के दिनो मे वह टेत्शेन रीयल जिमनाजियम मे दाखिल हो गई। उसका एक ही लक्ष्य था—कम से कम समय मे मेडिकल स्कूल की प्रवेश-परीक्षाओ के लिए पूरी तैयारी कर लेना। एक ही साल मे उसने यह असम्भवप्राय काम कर दिखाया जिसमे कैलकुलस द्वारा गणित का अध्ययन भी सम्मिलित था। नि सन्देह उसकी बौद्धिक क्षमता और स्वय को अनुशासित करने की शक्ति उत्कृष्ट कोटि की थी। उसने परीक्षा दी और सफल हुई। जीवन-भर इन परीक्षाओ को वह 'मेरे जीवन की कठिनतम परीक्षाए' कहकर याद करती रही।

अपनी अठारहवी वर्षगाठ के तुरन्त बाद ही वह प्राग विश्वविद्यालय के मेडिकल स्कूल मे भरती हो गई। प्राग विश्वविद्यालय की गणना यूरोप के सर्वाधिक प्राचीन एव प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयो मे की जाती थी। उस समय 'चार्ल्स फर्डिनांड'—प्राग विश्वविद्यालय को उन दिनो इसी नाम से पुकारा जाता था—दो शाखाओ मे विभक्त था। एक शाखा चेक थी और दूसरी जर्मन। कुमारी रैड्नित्ज़ ने जर्मन शाखा के मेडिकल कॉलेज मे अपना नाम लिखाया। उसी वर्ष इस कॉलेज मे कार्ल कोरी नामक एक लबा, नीली आखोवाला नवयुवक भी दाखिल हुआ जिसकी उम्र अभी अठारह वर्ष भी नही थी। कुछ ही दिनो बाद उस

दोनो की मुलाकात हुई। कुछ समय बाद दोनो ने प्रयोगशाला मे जीव-रसायन पर साथ-साथ काम किया। अपने अध्ययन के प्रथम वर्ष मे ही गर्टी इस विषय मे रुचि लेने लगी थी। वे दोनो साथ-साथ काम करके आनन्दित होते थे। प्रतिरक्षण-चिकित्सा (Immunology) पर किए गए अपने सयुक्त अध्ययन के परिणामो को प्रकाशित रूप मे देखकर वे पुलक उठे—उसपर उन दोनो के नाम साथ-साथ छपे थे।

उन्हें महसूस हुआ कि प्रयोगशाला के अन्दर ही नही, उसके बाहर भी वे एक-दूसरे को पसन्द करते है। आस्ट्रिया के आल्प्स पर्वत पर साथ-साथ चढने मे उन्हे अद्भुत आनन्द प्राप्त होता था। साथ-साथ तैरने, या स्केटिंग करने या बर्फ पर फिसलने मे एक विचित्र सुख था। वे परस्पर प्रणय-सूत्र मे बध गए। उनके परिचितो को इसपर कोई आश्चर्य नही हुआ। सन् १९२० की वसन्त ऋतु मे वे दोनो एम० डी० की डिग्री के साथ स्नातक परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए और उसी साल गर्मियो मे उन्होने शादी कर ली।

अभी वे मेडिकल स्कूल के छात्र ही थे कि प्रथम विश्वयुद्ध समाप्त हो चुका था। इस युद्ध मे कुछ देश हार गए थे और दूसरो की विजय हुई थी। जहा तक आस्ट्रिया का सम्बन्ध है, वह तो इस महायुद्ध मे पूरी तरह तबाह हो गया था। उनका प्राग विश्वविद्यालय अब आस्ट्रिया मे नही रहा था। प्राग अब नवनिर्मित देश चेकोस्लोवाकिया की राजधानी बन गया था। अस्पतालो मे काम करनेवाले डाक्टरो की माग तो थी किन्तु इन दो युवा डाक्टरो को अपना भविष्य उज्ज्वल नही दिखाई दिया क्योकि ये दोनो डाक्टरी करने की बजाय जीव-रसायन पर अनुसन्धान करना चाहते थे। स्नातक होने के बाद डा० कार्ल को वियना मे इस प्रकार के अनुसन्धान का एक अवसर मिला। डा० गर्टी भी उसी नगर मे बालको के एक अस्पताल मे डाक्टर हो गई। अस्पताल मे काम करने के अलावा वहा उपलब्ध साधनो का उपयोग करके उसने भी कुछ शोध-कार्य किया। अवटुकठिकी (थायरॉइड) और प्लीहा का अध्ययन करके उसने कुछ लेख लिखे जो एक वैज्ञानिक पत्र मे प्रकाशित हुए। मगर, उसे और उसके पति को यह अहसास होता जा रहा था कि जिस प्रकार का अनुसन्धान वे करना चाहते हैं उसकी सुविधाए उन्हे यूरोप मे प्राप्त नहीं हो सकती। उन्हे लगा कि सिर्फ अमरीका मे ही उन्हे वे सब सुविधाए उपलब्ध हो सकती है। वे वहा पहुचने का कोई उपाय सोचने लगे।

स्नातक होने के दो वर्ष बाद कार्ल कोरी को न्यूयार्क राज्य मे बफैलो-स्थित

दुर्दम्य रोगो के शोध-सस्थान मे जीव-रसायनज्ञ का पद प्राप्त हो गया । वे अकेले ही अमरीका आए । कुछ ही दिनो मे उन्होने अपनी पत्नी की नियुक्ति भी इसी संस्थान मे सहायक विकृतिविज्ञानी के पद पर करा दी । अब वह भी अमरीका आ गई और इस प्रकार के पदो के लिए अनिवार्य सिविल सर्विस परीक्षा मे उत्तीर्ण भी हो गई । कुछ ही साल बाद उसकी नियुक्ति सहायक जीव-रसायनज्ञ के पद पर हो गई । इस पद पर नियुक्त हो जाने के बाद उसके लिए विकृति की शोध मे अपना अधिकाश समय लगाना इतना आवश्यक नही रह गया । यह परिवर्तन बड़ा शुभ रहा क्योकि गर्टी कोरी की रुचि शरीर के रोगो की अपेक्षा स्वस्थ शरीर के क्रिया-सचालन मे ही विशेष रूप से थी ।

इस प्रकार अमरीका आकर उन दोनो को फिर से साथ-साथ काम करने का अवसर मिला जैसाकि वे प्राग के मेडिकल स्कूल मे करते थे । तब से (अर्थात् सन् १९२२ से) अधिकाश वैज्ञानिक लेखो पर उन दोनो के नाम साथ-साथ प्रकाशित होते थे (यद्यपि कुछ अपवाद भी थे) और, यद्यपि दोनो को स्वतत्र रूप से सम्मान और पुरस्कार प्राप्त हुए, तथापि उन्हे मिलनेवाला सर्वोच्च पारितोषिक नोबल पुरस्कार उन दोनो को सयुक्त रूप से ही प्राप्त हुआ, जो सर्वथा उचित था क्योकि उनका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान उन दोनो के सयुक्त प्रयत्न का ही परिणाम था ।

जैसाकि बफैलो के इस सस्थान के नाम से ही स्पष्ट है, कोरी-दपती की आरम्भिक जीवरसायनिक शोध मानव-शरीर की असामान्य वृद्धि के विभिन्न पहलुओ पर थी । चूकि शरीर की सामान्य और असामान्य, दोनो ही तरह की वृद्धि उन खाद्य पदार्थो के कारण ही सभव होती है जिन्हे हम खाते है, इसलिए जीवरसायन मे विशेष रुचि रखनेवाले कोरी-दम्पती का ध्यान विशेष रूप से उन रासायनिक प्रक्रियाओ (जिन्हे उपापचयन कहते है) की ओर आकृष्ट हुआ जिनसे गुजरने के बाद ही भोजन के तत्त्व जीवित शरीर के निर्माता पदार्थो मे परिवर्तित हो जाते है । आरम्भ मे अर्बुदो के उपापचयन का अध्ययन करके उन्होने जो निष्कर्ष निकाले उनसे और सिर्फ असामान्य वृद्धि पर काम करनेवाले वैज्ञानिक ही आकर्षित नही हुए बल्कि सामान्य वृद्धि के उपापचयन को समझने के इच्छुक लोगो ने भी उसमे रुचि ली । इस प्रारम्भिक अध्ययन ने कोरी-दम्पती के मन मे इन प्रक्रियाओ को पूरी तरह समझने की लालसा उत्पन्न कर दी ।

तब तक इसुलिन का आविष्कार हो चुका था। इससे उनकी आगे काम करने की रुचि को प्रोत्साहन मिला तथा आगे की शोध के लिए एक दिशा भी मिली। इसुलिन (हारमोन वर्ग का) एक प्रोटीन है जो सामान्य शरीर मे उत्पन्न होता है और उपापचयन की प्रक्रियाओ के समय कार्बोहाइड्रेटो (यानी हमारे भोजन मे निहित शर्करा और श्वेतसारो) के उपयोग का नियन्त्रण करने मे शरीर के काम आता है। इसुलिन का आविष्कार हो जाने के बाद डाक्टरो के लिए मधुमेह नामक रोग पर काबू पाना काफी आसान हो गया। मधुमेह प्राय उस अवस्था मे हो जाता है जब शरीर कार्बोहाइड्रेटो का समुचित उपयोग नही कर पाता। जीवरसायनज्ञ के पदो पर काम करते हुए उन दोनो डाक्टरो को इसुलिन के रूप मे एक ऐसा हथियार मिल गया जिसकी मदद से उन्होने उन दुर्बोध और अस्पष्ट रासायनिक प्रक्रियाओ (विशेष रूप से भोजन मे निहित कार्बोहाइड्रेटो की प्रक्रियाओ) के बारे मे पूरी जानकारी हासिल करने का फैसला किया जो सम्पूर्ण मानव-शरीर मे अनवरत रूप से होती रहती हैं।

सम्पूर्ण मानव-शरीर का जीवरासायनिक अनुसन्धान करने मे कोरी-दम्पती की चिकित्सा एव शरीर-क्रिया-विज्ञान की सुदृढ पृष्ठभूमि बडे काम आई। दुर्दम्य रोगो के शोध-सस्थान ने उन्हे इस काम के लिए उपयुक्त सुविधाए और पूरी छूट दी। अपने जीवन के उत्तरार्द्ध मे गर्टी कोरी अमरीका मे मिली अतिशय उदारता और उन प्रभूत सुअवसरो के लिए कृतज्ञता-ज्ञापन करती थी जिनके कारण वह और उसका पति अपनी इच्छानुकूल अनुसन्धान करने मे सफल हो सके थे। अमरीका मे अपने वैज्ञानिक जीवन के आरम्भ मे बफैलो के इस सस्थान मे समस्त सुविधाए उपलब्ध थी।

शरीर मे शर्कराओ के उपयोग से सबधित रासायनिक प्रक्रियाओ को अनुसधान पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हुए कोरी-दम्पती ने सफेद चूहो को एक निश्चित मात्रा मे शर्करा खिलाई। उनमे से कुछ चूहो को उन्होने इसुलिन दी, कुछ को नही। इसके बाद उन चूहो को श्वसन-कक्षो मे रख दिया गया ताकि इस बात का पता चल सके कि शर्करा का कितना भाग ऑक्सीकृत हुआ है। नियत समय पर कार्बोहाइड्रेट के लिए उनके शरीरो का विश्लेषण किया गया। इस प्रयोग से तथा अन्य दूसरे तरीको से कोरी-दम्पती इस निष्कर्ष पर पहुचे कि अवशोषित शर्करा का लगभग आधा अश मधुजन मे परिवर्तित होकर यकृत तथा पेशियो मे जमा हो

गया है, और कुछ शर्करा चरबी के रूप मे परिवर्तित होकर इसी रूप मे जमा हो गई है। और बाकी शर्करा जलकर (ऑक्सीकृत होकर) कार्बन डाइऑक्साइड और पानी बन गई है।

जानवरो को नियमित आहार देकर और फिर उनके शरीरो का विश्लेषण करके वे इस निष्कर्ष पर पहुचे कि इसुलिन यकृत मे जमा शर्करा के परिणाम को तो कम कर देता है, किन्तु वैसे शर्करा के सामान्य उपयोग को बढा देता है। यह नवीन तथ्य डाक्टरो के लिए मधुमेह के रोगियो के उपचार मे बडा लाभदायक सिद्ध हुआ। कोरी-दम्पती ने अपने प्रयोगो को जारी रखा। आगे के प्रयोगों मे उन्होंने शर्करा के विभिन्न रूपो का उपयोग किया और इसुलिन के अलावा दूसरे हारमोनो को भी जानवरो के शरीर मे पहुचाकर देखा। इन प्रयोगो से शरीर की गुह्य रासायनिक प्रक्रियाओ के बारे मे अमूल्य जानकारी मिली। अतत. उन्होंने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया कि पेशियो मे जमा मधुजन से दुग्ध अम्ल उत्पन्न होता है जिसे रुधिर-प्रवाह यकृत मे पहुचा देता है, वहा यह दुग्ध अम्ल यकृत-मधुजन मे परिवर्तित हो जाता है और रुधिर ग्लूकोज को जन्म देता है जो बाद मे पेशियो के उसी मधुजन मे बदल जाता है जिसमे यह प्रक्रिया प्रारम्भ हुई थी। हमारे शरीर की यह सतत आवर्ती प्रक्रिया 'कोरी-चक्र' के नाम से विख्यात है। इस सिद्धान्त ने शरीर के उपापचयन विषयक ज्ञान को बहुत आगे बढाया।

सन् १६३१ मे उनके सामने एक ऐसा प्रस्ताव आया जिसे मान लेने पर उन्हें बफैलो के इस सिद्धान्त से अधिक सुविधाए प्राप्त हो सकती थी। सैंट लुई स्थित वाशिगटन विश्वविद्यालय ने डा० कार्ल कोरी को अपने यहा प्रोफेसर और डा० गर्टी कोरी को फैलो एव सहयोगी अनुसधाता के पद पर आमन्त्रित किया। कोरी-दम्पती ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। बाद मे गर्टी कोरी को जीवरसायन विभाग मे सहयोगी प्रोफेसर के पद पर नियुक्त कर दिया गया। नोबल पुरस्कार मिलने के कुछ दिन पहले ही उसकी नियुक्त विधिवत प्रोफेसर के पद पर कर दी गई थी। किन्तु स्नातक कक्षाओ को छोड़कर अध्यापन कभी भी उसके जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अग नही बन पाया। वह अपना जीवन विज्ञान के अनुसंधान-पक्ष को समर्पित कर चुकी थी। उसने एक बार कहा था, "मेरे जीवन के अविस्मरणीय क्षण वे विरल क्षण है जो वर्षों के सतत परिश्रम के बाद अवतरित हुए है, जिनसे प्राकृतिक रहस्यो का अवगुठन सहसा उठ गया है और पहले जो तिमिरमय

तथा व्यवस्थाहीन प्रतीत होता था उसीमे मधुर प्रकाश और व्यवस्था के दर्शन हुए है।"

सैट लुई मे उसे शुरू से ही इस वात की छूट थी कि वह अपने पति के साथ वरावरी के स्तर पर प्रयोगशाला मे काम कर सके। उनका तरीका यह था कि पहले वे शोध का विपय-निर्धारण करते और फिर उस विषय पर काम शुरू कर देते थे। जो समस्याए उठती उनपर विचार-विमर्श करते, उन्हे कैसे सुलझाया जाए—इस वात का निश्चय करते और फिर काम का वटवारा कर लेते थे। इसके वाद वे दोनो अलग-अलग या छात्रो अथवा दूसरे सहयोगियो के साथ, अपने-अपने काम पर जुट जाते थे। वीच-वीच मे वे आपस मे मिलान कर लेते थे और अपने कामो मे सह-सवध स्थापित करते जाते थे। डा० कार्ल अपना कुछ समय अध्यापन और प्रशासनिक कार्य को देते थे तो डा० गर्टी अपना कुछ समय घर की सार-सभाल मे लगाती थी, घर जो उन्हे इतना प्यारा था—जहा डा० गर्टी की देख-रेख मे पौधे लहलहाते थे और फूल खिलते थे, जहा मधुर सगीत और सुन्दर चित्र प्रस्तुत और प्रशसित होते थे, और जहा चौदह वर्षों वाद उनके नन्हे-से वेटे ने जन्म लेकर उन्हे दो से तीन कर दिया था।

नन्हे टॉमी की वजह से उसकी मा के काम मे कोई व्याघात नही पडा। उसके समय का विभाजन इतना सही था कि गर्भावस्था और टॉमी के शैशव मे भी वह अपने अनुसधान और गृहकार्य को समान रूप से निभाती रही। डा० कार्ल कोरी इस काल मे और आगे चलकर गर्टी की वीमारी के दिनो मे इस वात का पूरा-पूरा ध्यान रखते थे कि उनकी पत्नी का कार्य भी अवाध गति से चलता रहे और उसे कुछ कष्ट भी न हो।

सैट लुई मे एक प्रकार से उन्होने वफैलो मे किए गए अपने काम को ही आगे वढाया, भले ही अव उनका विशेप ध्यान एक दूसरी चीज़ पर केन्द्रित था और काम की दिशा भी कुछ परिवर्तित हो गई थी। जैसाकि पहले कहा जा चुका है, कोरी-दपती यह सिद्ध कर चुके थे कि कोरी-चक्र के अन्तर्गत शरीर का मधुजन कुछ सतत रासायनिक परिवर्तनो से गुज़रता रहता है। इनमे से कुछ परिवर्तन प्रकिण्व (Enzyme) नामक प्रोटीनो के कारण होते है जोकि हारमोनो की भाति ही सामान्य शरीर मे उत्पन्न होते है और रासायनिक प्रक्रियाओ मे शरीर के काम आते है। इन प्रक्रियाओ के दौरान मधुजन मे होनेवाले परिवर्तनो को समझने के लिए

कोरी-दम्पती ने प्रकिण्व-तत्र पर अनुसधान करने का निश्चय किया ताकि मधुजन मे होनेवाले रूपातरो को समझा जा सके। इन अनुसधानो के साथ ही मौलिक आविष्कारो की एक उज्ज्वल शृखला बध गई।

तब तक प्रकिण्वो के बारे मे लोगो की जानकारी बहुत कम थी। अब भी उनके बारे मे विशेष जानकारी प्राप्त नही की जा सकी है। यह माना जाता है कि हमारे शरीर मे रासायनिक परिवर्तनो को उत्पन्न करने मे प्रकिण्व एक उत्प्रेरक का काम करता है, और एक विशेष प्रकार का प्रकिण्व सामान्यतया एक विशेष पदार्थ को ही प्रभावित करता है। प्रकिण्वो की रचना बहुत ही पेचीदा होती है, इसलिए उनपर काम करना भी बहुत ही कठिन हो जाता है। इसलिए, और कई दूसरे कारणो से भी इस विषय से अनभिज्ञ आदमी को यह समझाना कि प्रकिण्वो पर कोरी-दपती ने क्या काम किया है, अत्यन्त कठिन काम है, और ज्यादातर सभावना इसी बात की है कि इस विषय पर पूरी बात सुनकर भी उसके पल्ले कुछ न पडे। हा, उनके काम के कुछ नतीजो को इस तरह से पेश किया जा सकता है कि आम आदमी भी उसे थोडा-बहुत समझ सके। उदाहरणार्थ

उन्होंने मेढक की पेशी को अच्छी तरह धोकर उसका कीमा बनाया और फिर प्रचलित तथा अपनी कल्पना-प्रसूत प्रयुक्तियो द्वारा उन्होने साश्लेषिक विधि द्वारा उससे एक शर्करा फास्फेट तैयार किया जो इससे पहले अज्ञात था। अब यह अपने आविष्कारको के नाम पर 'कोरी एस्टर' के नाम से विख्यात हुआ। उन्होंने फोस्फोरिलेस (Phosphorylase) और फोस्फोग्लूकोमुटेस (Phosphogluco-mutase) नामक दो नये प्रकिण्वो को खोज निकाला। साधारण आदमी उनके नाम से ही अदाज लगा सकता है कि प्रकिण्व की रचना कितनी पेचीदा होती होगी। उन्होंने उन प्रकिण्वो को खोज निकाला जो कोरी-चक्र की उपापचयन-प्रक्रियाओ के दौरान सिर्फ मधुजन को प्रभावित करते है। साथ ही उन्होंने उन उत्प्रेरक प्रभावो को भी पहचान लिया जिनके कारण मधुजन की रासायनिक रचना मे परिवर्तन होता है। अन्त —और यह काम अत्यन्त ही कठिन था जबकि कहने मे वह आसान-सा दिखाई देता है—उन्होंने मधुजन के अणु की रचना का पता लगा लिया। इन सब काम मे गर्टी कोरी का योगदान भी महत्त्वपूर्ण रहा। उसने मधुजन मे इकट्ठा होने से उत्पन्न चार रोगो का पता लगाया, और ये चारो रोग एक-दूसरे से भिन्न थे। आगे चलकर सन् १९५१ मे उसने हार्वे सोसाइटी के सम्मुख

एक व्याख्यान दिया जिसमे उसने इन दिनो के शोध-कार्य की प्रगति का हवाला दिया था।

उनके कार्य—'मधुजन के उत्प्रेरण और परिवर्तन के अनुसधान' को मान्यता देते हुए कार्ल और गर्टी कोरी को सन् १६४७ मे शरीर विज्ञान और चिकित्सा पर दिए जानेवाले नोबल पुरस्कार का आधा भाग प्रदान किया गया। पुरस्कार का दूसरा अर्द्धांश अर्जेंटाइना के शरीर-विज्ञानी डा० बर्नार्डो ए० हाउसे को मिला जिन्होने शरीर द्वारा शर्करा के उपयोग पर पियूष ग्रथि (Pituitary Gland) से होनेवाले स्राव का प्रभाव प्रदर्शित किया था।

किसी काम पर नोबल पुरस्कार दिया जाना इस बात का प्रमाण है कि वह काम मौलिक और महत्त्वपूर्ण है। कोरी-दपती को अपने जिस अनुसन्धान पर नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ था वह स्वास्थ्य और रोगो की समस्याओ के क्षेत्र मे उनके महान योगदान का एक अशमात्र है। सम्भवत यह तथ्य भी इतना ही महत्त्वपूर्ण है कि सैंट लुई मे उनकी प्रयोगशाला एक ऐसा केन्द्र बन गई थी जिससे आकृष्ट होकर कार्बोहाइड्रेटो के उपापचयन मे रुचि रखने वाले प्रथम श्रेणी के बीसियो वैज्ञानिक वहा चले आते थे। इस एक शोध-केन्द्र के उद्दीप्त वातावरण के फलस्वरूप वहा से इस विषय पर बहुत-से शोधपूर्ण लेख प्रकाशित हो चुके हैं, और अभी यह सिलसिला जारी ही है। सम्भव है कि वहा जो काम हो रहा है उससे मनुष्य को मध्य और परवर्ती आयु मे हो जानेवाले सामान्य रोगो पर पर्याप्त प्रकाश पड सके, हो सकता है कि ये रोग पहले के मुकाबले कम हो जाए और इन रोगो को ज्यादा अच्छी तरह समझ लेने के बाद इनका इलाज अधिक सफलता से किया जा सके। कुछ डाक्टरो का यह मत है कि वृक्क, यकृत, दिल और रुधिरवाहिका के रोग प्राय चरबी और कार्बोहाइड्रेट बढानेवाले भोजन को इतनी अधिक मात्रा मे खाने से हो जाते है कि शरीर उनका उपयोग समुचित रूप से न कर पाए। ऐसा भोजन करनेवाले लोग अपने शरीर को दूसरे प्रकार के उन भोज्य पदार्थों से वचित रखते है जिनसे श्रेष्ठ उपापचयन के लिए पोषक तत्त्व प्राप्त होते है। यदि इन डाक्टरो का यह विश्वास सही है तो हो सकता है कि वाशिंगटन विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला मे होनेवाला काम लोगो मे उचित आहार की आदत डालने मे सफल हो और इस तरह इन बीमारियो की रोक-थाम की जा सके।

सन् १६४७ मे स्वीडन के सम्राट् गुस्ताव पचम के हाथो से नोबल पुरस्कार

लेने के लिए अपने पति के साथ स्टॉकहोम जाने के पहले ही गर्टी कोरी एक ऐसे रोग के चक्कर मे फस गई जिसका तब तक कोई समुचित उपचार विज्ञान के पास नही था। इस घटना से उसकी मित्र-मण्डली को अपार शोक हुआ। परन्तु यह देखकर उन्हे प्रेरणा मिलती थी कि पूरे दस साल इस बीमारी को बाला-ए-ताक रखकर वह अपने कार्य मे जुटी रही। वे दिन अब स्वप्न हो गए थे जब वह और कार्ल प्रयोगशाला मे लौटने से पहले स्केट करते या टेनिस के बल्ले उठाकर कुछ कसरत कर लेते थे, या रॉकी पर्वत की किसी चोटी पर चढ जाते थे और तब उन बीते दिनो की यादे ताज़ा हो जाती थी जब वे जवान थे और इसी तरह आल्प्स पर साथ-साथ घूमने-फिरते थे और भविष्य के सुनहले सपने बुनते रहते थे। अलबत्ता सैंट लुई मे उनका बगीचा अब भी सलामत था जहा कार्ल सब्जियो की देखभाल करते थे और गर्टी फूलो की। टॉमी बडा होने के साथ-साथ खरपतवार मे दिलचस्पी लेने लगा था, भले ही वह इस मामले मे उनकी मदद करता था या नही यह एक अलग बात है।

जिन दिनो डा० गर्टी कोरी बीमारी के कारण घर से बाहर कम निकल पाती थी उन दिनो उसने अपने डाइनिंग रूम और रहने के कमरो की बिना पर्देवाली खिडकियो के नीचे चौडे-चौडे तख्तो पर ही फल-फूल आदि के बहुत-से पौधे वगैरह लगवा लिए थे। इससे कमरे मे ही उसे बाग की सैर का लुत्फ मिल जाता था। धीरे-धीरे वह पहले की तरह प्रयोगशाला मे जाने के काबिल हो गई और उन मीटिंगो मे भी जाने लगी जिनमे शामिल होना उसके लिए जरूरी था। बीमारी के दिनो मे भी उसने अपना अध्ययन जारी रखा। वस्तुत वह आजीवन विद्याव्यसनी रही। उसकी अभिरुचि विज्ञान तक ही सीमित नही थी। जीवनियो, इतिहास और सामयिक प्रसगो से सम्बद्ध पुस्तको को वह निरन्तर पढती रहती थी, और एक महीने मे उन विषयो की दो-तीन पुस्तके पढ लेती थी। वह जिस समाज मे भी बैठती उसमे चर्चित विषयो की अधुनातन जानकारी उसीसे मिल सकती थी। विज्ञान की ही तरह वह कला को भी मानव-मस्तिष्क का गौरवशाली अवदान मानती थी।

और मित्रो की उसे कमी न थी—मित्र जो इस सचाई पर विस्मय-विमुग्ध थे कि ऐसे समय मे भी जबकि उसकी शक्ति प्रतिदिन घटती जा रही थी, और उसके स्वास्थ्य के लिए उसकी शक्ति का एक-एक कण बहुमूल्य हो उठा था, गर्टी

कोरी अपने उन स्वजनो की ओर से तटस्थ न हो सकी थी जिनकी समस्याओ से वह परिचित थी । उसका अतिम पत्र, जो उसकी मृत्यु के कारण अधूरा ही रह गया था, उसकी एक सहेली के नाम था जिसका पति बीमार था । अपने पत्र मे गर्टी ने आशा व्यक्त की थी कि अब तक वह अच्छा हो चुका होगा या शीघ्र ही स्वास्थ्य-लाभ कर लेगा । बीमारी की अवस्था मे उसने एक पुस्तिका लिखी थी जिसका शीर्षक था, 'मेरा विश्वास है, (This I believe) । इस पुस्तिका मे उसने लिखा है, "ईमानदारी, जिसका अर्थ प्राय बौद्धिक सत्यनिष्ठा होता है, साहस और उदारता अब भी ऐसे गुण है जिनकी मैं सबसे ज्यादा कद्र करती हू ।" आगे चलकर उसने लिखा है कि जीवन की विभिन्न अवस्थाओ मे मैं इन गुणो मे से कभी एक को और कभी दूसरे को अपेक्षाकृत अधिक महत्त्व देती रही हू । जवानी के मुकाबले इन दिनो उदारता का महत्त्व मेरे लिए बहुत अधिक हो गया है । गर्टी के मित्रो को उसके स्वभाव मे यह विशेषता हर समय विद्यमान मिली । वह दूसरो की समस्याओ को परम सहानुभूति के साथ सुनती, उनकी यथाशक्य सहायता करने को सदैव तत्पर रहती । रुग्णावस्था मे भी उसकी यह विशेषता बनी रही ।

गर्टी कोरी को जितना सम्मान मिला उतना बहुत कम महिला वैज्ञानिको को नसीब हुआ है । नोबल पुरस्कार के बाद तो उसपर सम्मान-सूचक पुरस्कारो की झडी लग गई । सन् १९४७ मे वह अमरीकी राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी की चौथी महिला सदस्य बनाई गई । नोबल पुरस्कार मिलने के एक वर्ष पूर्व उसे और उसके पति को सयुक्त रूप से विज्ञान मे मिडवेस्ट एवार्ड दिया गया । नोबल पुरस्कार की प्राप्ति के बाद उन दोनो का दूसरा शर्करा अनुसधान पुरस्कार प्रदान किया गया । कभी उन दोनो को साथ-साथ, और कभी सिर्फ गर्टी को, बोस्टन और येल विश्व-विद्यालयो ने, स्मिथ कालेज, रोचेस्टर विश्वविद्यालय और कोलबिया विश्व विद्यालय ने सम्मानार्थ डाक्टरेट की उपाधिया प्रदान की । सन् १९४७ मे उसने अपने पति के साथ अत स्रावी विज्ञान (Endocrinology) मे स्क्विब एवार्ड प्राप्त किया और अगले वर्ष उसे केवल महिलाओ को दिया जानेवाला गारवन स्वर्ण पदक प्रदान किया गया । सन् १९५० मे उसे अमरीकी मेडिकल कालेज सघ की ओर से बोर्डन एवार्ड दिया गया और इसी वर्ष राष्ट्रपति ट्रूमैन ने उसकी नियुक्ति नवनिर्मित राष्ट्रीय विज्ञान सस्थान के बोर्ड के सदस्य के रूप मे कर दी । अपनी मृत्यु तक व इस पद पर रही और इसपर रहते हुए उसने बहुत महत्त्वपूर्ण अनुसंधान

और बैठकों में शामिल होने के लिए उसे वाशिंगटन के भी बार-बार चक्कर लगाने पड़े।

गर्टी कोरी इसे अपना सौभाग्य समझती थी कि उसे यूरोप में शिक्षा प्राप्त करने और फिर अमरीका में उस शिक्षा के उपयोग के लिए प्रभूत सुअवसर मिले। वह मानती थी कि उसे तथा उसके पति को अपने शोध-कार्य में जो सफलता मिली उसके ये दो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण हैं। मृत्यु से पूर्व गर्टी कोरी द्वारा लिखित वैज्ञानिक लेखों की संख्या १५० और २०० के बीच थी। उसमें कुछ ऐसे जन्मजात गुण थे जो विकसित होकर एक महान जीवरसायनज्ञ के अनुसंधान-कार्य के लिए बहुमूल्य सिद्ध हो सकते थे। "वह एक ऐसी महिला थी जो तथ्य और कल्पना में भेद करने में गलती नहीं करती थी।"—उसके एक मित्र ने गर्टी कोरी के बारे में बताया, और कार्ल कोरी ने सिर हिलाकर इस बात का समर्थन किया - कार्ल कोरी ने, जो इस बात को सबसे ज्यादा अच्छी तरह समझता था कि उसके चालीस वर्ष के साहचर्य और पैंतीस वर्ष के सहयोगी अनुसंधान-कार्य में उसकी स्वर्गीय पत्नी की यह विशेषता कितनी अमूल्य थी।

लाइज़ मेट्नर

लाइज मेट्नर की वैज्ञानिक उपलब्धिया भौतिकी के क्षेत्र मे है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसकी ओर अमरीकी महिलाओ का ध्यान अपेक्षाकृत कम आकृष्ट हुआ है। अभिरुचि की इस कमी का कारण अमरीका मे अक्सर यह बताया जाता है कि "गणित या भौतिकी मे लडकियो का दिमाग इतना अच्छा नही चलता।" फिर भी भौतिकी के क्षेत्र मे कुछ महिलाओ ने वस्तुत असाधारण योग्यता का परिचय दिया है। यूरोप ने ऐसी दो महिलाओ को जन्म दिया है जिनके योगदान को विश्व के सर्वश्रेष्ठ भौतिकशास्त्रियो ने उच्चतम कोटि का माना है।

इन महिलाओ के नाम हैं मेरी क्यूरी और लाइज़ मेट्नर। इन दोनो के कारण उन्नीसवी सदी की भौतिकी और उसकी धारणाओ मे क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित हुए। जिन वैज्ञानिको के अनुसधानो के कारण परमाणु ऊर्जा और परमाणु शक्ति का प्रयोग सभव हो सका है, उनमे इन दोनो के नाम बहुत ऊपर आते है।

इस दिशा मे सन् १९०३ मे भौतिकी के क्षेत्र मे नोबल पुरस्कार प्राप्त करनेवाली मेरी क्यूरी की तुलना मे लाइज़ मेट्नर की उपलब्धियो को कम लोग जानते है। मादाम क्यूरी को यह पुरस्कार दो और वैज्ञानिको के साझे मे दिया गया था जिनमे से एक भागीदार स्वय उसका पति था। लेकिन बहुत-से लोगो को यह पता नही है कि रेडियोधर्मिता (Radio activity) पर मेरी क्यूरी ने काम पहले शुरू किया था, और बाद मे उसका पति भी अपने अनुसधान-कार्य को छोडकर इसी काम मे शामिल हो गया। रेडियोधर्मिता पर काम करते हुए ही क्यूरी-दपती ने अतत: रेडियम को खोज निकाला और यूरेनियम की कच्ची धातु से उसका पृथक्करण

भी किया। इन्ही अनुसधानो पर उन्हे नोवल पुरस्कार प्रदान किया गया।

लाइज़ मेट्नर यूरेनियम के परमाणु के विखडन के अनुसधान मे लगी हुई थी और उस समय जवकि इस काम मे सफलता मिलने ही वाली थी अचानक उसे अपने अनुसधान-कार्य से विरत हो जाना पडा। पिछले अनेक वर्षो से वह ऑटो हैन के सहयोग से परमाणु-विखडन पर काम कर रही थी कि दुर्भाग्यवश उसे नाज़ी जर्मनी छोडकर अन्यत्र भाग जाने के लिए मजवूर होना पडा। उसके चले जाने के वाद ऑटो हैन और उन दोनो के नये सहयोगी फिट्ज़ स्ट्रासमान ने वह काम पूरा किया। परमाणु-विखडन मे सफलता प्राप्त करने पर ऑटो हैन को सन् १९४४ मे नोवल पुरस्कार प्रदान किया गया। लाइज मेट्नर को स्वीडन की विज्ञान अकादमी का सदस्य वनाया गया। यह एक असाधारण सम्मान था और उनसे पहले केवल दो और महिलाओ को प्रदान किया गया था। नाजी जर्मनी से भाग निकलने के वाद वह स्वीडन मे ही वस गई थी और इस देश ने उसे आजीवन अपने अनुसधान-कार्य मे लगे रहने की उपयुक्त सुविधाए सहर्ष जुटा दी थी।

मिस मेट्नर को जल्दी ही पता चल गया था कि उसकी विशेष रुचि गणित और भौतिकी की ओर है। वह वियना मे एक वकील के यहा पैदा हुई थी। उसके छ और भाई-वहन थे। उसकी आरम्भिक शिक्षा वियना के एकेडेमिक हाईस्कूल में हुई और वाद को वह वियना विश्वविद्यालय मे दाखिल हो गई। अपने छात्र-जीवन मे वह अखवारो के उन अशो का वडी ही सूक्ष्मता से अध्ययन करती थी जिनमे रेडियोधर्मिता के अनुसधान और रेडियम के पृथक्करण मे मेरी क्यूरी के शोध-कार्य का विवरण रहता था। इस प्राचीन विश्वविद्यालय मे उसे सन् १९०२ मे लुडविक वोल्ट्जमान से सैद्धान्तिक भौतिकी पढने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह वाकई उसका सौभाग्य था क्योकि तव तक यूरोप के वहुत-से विश्वविद्यालयो के भौतिकशास्त्री इस सिद्धान्त को स्वीकार नही करते थे कि सभी वस्तुए छोटे-छोटे अदृश्य कणो से मिलकर वनी है जिन्हे परमाणु कहते हैं। इसके ठीक विपरीत, प्रोफेसर वोल्ट्जमान इस सिद्धान्त के प्रवल समर्थक थे। लाइज मेट्नर और उसके साथियो के समक्ष वे वडे उत्साह के साथ परमाणु के सिद्धान्त की विशद व्याख्या करते थे। उनका मत था कि हाल ही मे रेडियोधर्मिता का जो अनुसंधान हुआ है, वह परमाणुओं की सत्ता का प्रायोगिक प्रमाण है; फिर भी वहुत-से यूरोपीय और अमरीकी वैज्ञानिक इस सिद्धान्त को शका की दृष्टि से देखते थे और इसे स्वीकार

नही करते थे ।

परमाणु के सिद्धान्त को माननेवाले अन्य भौतिक शास्त्रियो की भाति प्रोफेसर वोल्ट्ज़मान को भी इस बात का पूर्ण विश्वास था कि रेडियोधर्मिता का अनुसधान शीघ्र ही परमाणु-सवधी इन धारणाओ मे क्रातिकारी परिवर्तन उपस्थित करनेवाला है कि परमाणु प्रकृति का सूक्ष्मतम, अविभाज्य तथा अदृश्य कण है । ईसा से पाचवी सदी पूर्व डेमोक्रीटस नामक यूनानी विद्वान ने इस सिद्धात का प्रतिपादन किया था कि सभी चीजें अदृश्य कणो से निर्मित हैं, ये सभी कण सतत गतिशील हैं, और सबके सब मूलत एक ही पदार्थ के बने होने पर भी आकार-प्रकार एव भार मे एक-दूसरे से भिन्न है। डेमोक्रीटस इन सूक्ष्म कणो को 'परमाणु' कहता था क्योकि ग्रीक भाषा मे इस शब्द का अर्थ 'अविभाज्य' होता है। तब से लगभग चौबीस शताब्दिया बीत चुकी थी और लाइज मेट्नर के ज़माने मे परमाणु के सिद्धात मे रुचि लेनेवाले वैज्ञानिक के लिए यूनानी विद्वान डेमोक्रीटस की भाति दार्शनिक स्तर पर परमाणु के बारे मे अपने सिद्धात प्रतिपादित करना ज़रूरी नही रह गया था। तब तक विज्ञान बहुत उन्नति कर चुका था और वैज्ञानिक इस सिद्धात की प्रामाणिकता-अप्रामाणिकता का निर्णय अपनी प्रयोगशाला मे कर सकते थे और ऐसा करने मे वैज्ञानिक उपकरणो एव प्रचुर ज्ञानराशि की सहायता ले सकते थे। यह सब होने पर भी रेडियोधर्मिता के अनुसधान के भी बहुत वर्षो बाद मे वैज्ञानिक अपने प्रयोगो से परमाणु से भी सूक्ष्मतर कणो का अस्तित्व सिद्ध करने की दिशा मे प्रयत्न कर सके। लाइज़ मेट्नर ने परमाणु-भौतिकी के क्षेत्र मे उस समय पदार्पण किया जबकि रेडियोधर्मिता का अनुसधान हो चुका था और ऐसा लगने लगा था कि शीघ्र ही इस क्षेत्र मे और भी चमत्कार होनेवाले हैं। वह गणित मे समुचित प्रशिक्षण पा चुकी थी। उसमे कार्य-क्षमता थी और उसकी कल्पना सैद्धातिक भौतिकी के क्षेत्र मे गतिशील थी।

बहुत वर्ष बाद वह कैथोलिक यूनिवर्सिटी ऑफ अमरीका मे विज़िटिंग प्रोफेसर बनकर अमरीका आई। तब एक बार उस वर्ष (सन् १९४६) वैज्ञानिक प्रतिभा की वार्षिक शोध मे चुने गए युवा छात्रो से वार्तालाप करते हुए उसने अपनी युवावस्था के दिनो मे परमाणु-विज्ञान की अवस्था पर प्रकाश डाला था। उसने बताया कि उन दिनो परमाणुओ को सामान्यतया 'ठोस, अखडनीय छोटे पिण्ड' माना जाता था। सन् १८६८ मे मैंडेलजेफ नामक रूसी रसायनज्ञ ने तब तक

ज्ञात सभी पदार्थों की अपनी प्रख्यात परमाणु-भारो की आवर्ती तालिका (Periodic Table of Atomic Weights) बनाई। इस तालिका मे दिए गए भार के अको मे लयबद्ध आवृत्तिया देखकर कुछ वैज्ञानिको के मन मे यह विचार आया कि सभवत परमाणु भी अपने मे कही सूक्ष्मतर कणो से मिलकर बने है, यद्यपि उस जमाने मे ऐसे वैज्ञानिको की भी कमी न थी जो परमाणु के अस्तित्व को ही नही स्वीकार करते थे। उसने छात्रो को बताया कि जब मैं तुम लोगो की उम्र मे आई तो रेडियोधर्मिता और रेडियम का अनुसधान हो चुका था (यह अनुसधान दो फ्रासीसी पुरुषो और एक पोलिश महिला ने किया था)। इस अनुसधान से प्रेरित होकर दूसरे वैज्ञानिको ने परमाणु मे निहित विद्युत् के धनात्मक तथा ऋणात्मक चार्ज का अनुसधान किया जिन्हे प्रोटोन तथा इलेक्ट्रोन कहते हैं तथा आगे चलकर न्यूट्रोन नामक कणो को भी ढूढ निकाला जिनमे विद्युत्-चार्ज नही होता।

अपनी बात जारी रखते हुए उसने आगे कहा कि इसके पहले कि परमाणु मे निहित इन तत्त्वो को प्रयोगो द्वारा सिद्ध किया जा सके, बोर (डेनमार्क के) और आइन्स्टाइन (जर्मनी के) जैसे सैद्धातिक विज्ञानवेत्ता यह समझने लगे थे कि यदि उचित रूप से आघात किया जाए तो परमाणुओ के टुकडे हो सकते है। और इस प्रकार, उसने अपनी बात पूरी करते हुए कहा, वैज्ञानिको के एक अन्तर्राष्ट्रीय वर्ग के कारण समस्त यूरोप और अमरीका की प्रतिवर्ष वर्द्धमान भौतिकशास्त्रियो की पीढी के लिए इस चुनौती को स्वीकार करना जरूरी हो गया कि वे अपनी प्रयोगशालाओ मे उस बात को सत्य सिद्ध करके दिखाए जिसकी सभावना उनके समकालीन सैद्धातिक भौतिकशास्त्री व्यक्त कर चुके थे।

डा० मेट्नर ने सन् १९०७ मे बर्लिन जाकर एक उदीयमान युवा भौतिकशास्त्री बनने की दिशा मे पहला कदम रखा। इससे एक वर्ष पूर्व ही वह वियना मे प्रो० बोल्ट्जमान के पर्यवेक्षण मे डाक्टर ऑफ फिलॉसफी की डिग्री ले चुकी थी। वह सैद्धान्तिक भौतिकी के क्षेत्र मे अपने अध्ययन को आगे बढाना चाहती थी और इसका सर्वोत्तम उपाय यही था कि वह बर्लिन जाकर मैक्स प्लैंक के भाषणो मे सम्मिलित हो। मैक्स प्लैंक की गणना विश्व के सर्वाधिक उल्लेखनीय भौतिकशास्त्रियों मे की जाती है और उन दिनो वे बर्लिन विश्वविद्यालय मे प्रोफेसर थे। वह चाहती थी कि भाषण सुनने के साथ-साथ वह कुछ प्रयोग भी

करती चले, और इसके लिए उसे कुछ सुविधाए भी प्राप्त हो गई। चूकि वियना मे वह रेडियोधर्मिता पर पहले ही कुछ काम कर चुकी थी, इसलिए उसने एक नवयुवक रसायनज्ञ ऑटो हैन के साथ इसी क्षेत्र मे अनुसधान करने का निर्णय किया। ऑटो हैन को अपने इसी अनुसधान मे सफलता मिलने पर आगे चलकर भौतिकी के क्षेत्र मे नोबल पुरस्कार मिला, यद्यपि उस समय वह यह बात सोच भी न सकता था। वह मेट्नर का हमउम्र था, और कार्बनिक रसायन (Organic) मे विशेष प्रशिक्षण प्राप्त करके रेडियोधर्मिता के क्षेत्र मे प्रयोग कर रहा था। उन दिनो वह बर्लिन के एमिल फिशर सस्थान मे काम कर रहा था।

उसके मार्ग मे एक बाधा थी। उन दिनो फिशर-सस्थान के द्वार स्त्रियो के लिए बद थे। हैन इस रुकावट को दूर करने के लिए विशेष आतुर था ताकि मेट्नर को उसके साथ ही काम करने का मौका मिल सके। वह स्वय अपना शोध-कार्य सस्थान के एक उच्च पदाधिकारी की निजी प्रयोगशाला मे करता था, और उसे इस बात की आशा नही थी कि डाक्टर मेट्नर को वहा काम करने की अनुमति मिल सकेगी। फिर भी, उसे पहली मजिल पर एक पुरानी बढई की दुकान दे दी गई जहा उसे रेडियोधर्मी माप करनी थी। उसने मिस्टर फिशर से मिलकर इस बात की अनुमति प्राप्त कर ली कि डा० मेट्नर भी वहा उसके साथ काम कर सके, मगर इसके साथ ही डा० मेट्नर से यह आशा भी की गई थी कि वह ऊपर की मजिल के अध्ययन-कक्षो मे प्रवेश नही करेगी। और इस प्रकार उन दोनो का सहयोगी अनुसधान प्रारभ हुआ। डा० हैन के शब्दो मे उनके इस सहयोग ने " मेरे वैज्ञानिक विकास को बहुत अशो मे प्रभावित किया (डा० मेट्नर द्वारा) बर्लिन का यह सक्षिप्त प्रवास एक ऐसे सहयोग मे बदल गया जो तीस वर्षों तक चलता रहा।" और उसने बताया कि सहयोगजन्य मैत्री तो और भी अधिक दिनो तक स्थापित रही।

कुछ वर्षों तक डा० मेट्नर का सहयोग प्रयोगशाला के अभाव मे सीमित ही रहा। बढई की उस दुकान मे कुछ काम तो तुरन्त प्रारम्भ किए जा सकते थे जैसे रेडियोधर्मी पदार्थों से निकलनेवाली किरणो की माप और उनके भौतिक गुणो की शोध। अतत डा० हैन ने सस्थान की सबसे नीचे की मजिल के एक भाग को रासायनिक अनुसधान के योग्य बनवा लिया और अब डा० मेट्नर रासायनिक अनुसधान के प्रायोगिक काम मे उन्हे सहयोग देने लगी। यहा वे दोनो काम करते

थे—कार्वनिक रसायनज्ञ हैन और सैद्धान्तिक भौतिकशास्त्री मेट्नर। ये वर्ष परमाणु-विज्ञान के अनुसधान के प्रारम्भिक वर्ष थे।

सन् १९१२ मे बर्लिन विश्वविद्यालय के एक भाग के रूप मे कैसर विलियम रसायन सस्थान खुला और हैन को उसमे प्राध्यापक (बाद मे चलकर प्रधान) नियुक्त किया गया। डा० मेट्नर को विश्वविद्यालय के सैद्धातिक भौतिकी के सस्थान मे मैक्स प्लेक का सहायक बना दिया गया। अब अनुसधान-कार्य मे हैन-मेट्नर सहयोग अधिक सुविधापूर्वक चल सकता था और उनके सहायको की सख्या भी बढ गई थी। पाच साल बाद इस महिला भौतिकशास्त्री से (जिसके लिए कुछ वर्ष पहले तक प्रयोगशाला के द्वार बन्द थे) कैसर विलियम रसायन सस्थान मे एक नवीन भौतिकी-विभाग शुरू करने और उस विभाग की अध्यक्षा बन जाने के लिए कहा गया।

अब वह एक विश्वविद्यालय के एक ऊचे पद पर थी और ऐसे नगर मे थी जहा विश्व के कुछ सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक जमा थे। अब उसे इस बात की प्रभूत सुविधाए प्राप्त थी कि वह नाभिकीय भौतिकी (Nuclear Physics) के क्षेत्र मे होनेवाले अधुनातन अनुसधान से परिचय प्राप्त करती रहे और हैन तथा अन्य सहयोगियो की सहायता से अपने उस ज्ञान का उपयोग प्रायोगिक अनुसधान मे करती रहे। उन दोनो का सहयोग दोनो के ही लिए लाभदायक रहा। उस सयुक्त अनुसधान मे हैन एक प्रतिभाशाली कार्वनिक रसायनज्ञ की पृष्ठभूमि और ज्ञान का उपयोग करता था तो मेट्नर एक दक्ष सैद्धातिक भौतिकशास्त्री की पृष्ठभूमि और ज्ञान का प्रयोग करती थीं। सन् १९१७ मे उन्होंने सयुक्त रूप मे घोषणा की कि उन्होंने एक विरल रेडियोधर्मी तत्त्व प्रोटेक्टिनियम का अनुसधान कर लिया है।

इस बीच उसने बीटा किरणों का अध्ययन जारी रखा और सर्वप्रथम यह व्यक्त किया कि जब रेडियोधर्मी पदार्थों का विच्छेदन (disintegration) होता है तब पहले उनके कणों का उत्सर्जन होता है और बाद मे उनके विकिरण (radiation) का। सन् १९२० मे मेट्नर ने विशेष ख्याति अर्जित की और सन् १९२४ मे बर्लिन विज्ञान अकादमी की ओर से लेवनित्ज पुरस्कार और सन् १९२५ में आस्ट्रियन विज्ञान अकादमी की ओर से लीबन पुरस्कार प्रदान करके उनकी विद्वत्ता को मान्यता प्रदान की गई। अगले साल उसे बर्लिन विश्वविद्यालय मे असाधारण प्रोफेसर बनाया गया। हिटलर के यहूदी-विरोधी आदेशों के कारण अततः उसे यह

पद छोडना पडा ।

चूंकि वह आस्ट्रिया की नागरिक थी इसलिए नाजी आदेशो का उसकी स्थिति पर इतना घातक प्रभाव नही पडा जितना जर्मन नागरिको पर पडा। आगे चलकर सन् १९३८ मे उसकी स्थिति पर भी यह घातक प्रभाव पडा क्योकि तब तक नाज़ी आस्ट्रिया पर अधिकार कर चुके थे। वे यहूदी वैज्ञानिक और 'आर्य' जिन्होंने सन् १९३४ मे हिटलर के सत्तारूढ होने के बाद उसकी यहूदी-विरोधी नीति का खुल्लमखुल्ला विरोध किया था, जर्मन विश्वविद्यालयो से गायब होने लगे। फिर भी, कुछ समय तक सत्ता के इस हस्तान्तरण से हैन के सहयोग मे चलनेवाले उसके काम पर फर्क नही पडा—एक ऐसा काम, जो अब ऐसा रुख लेता जा रहा था जिसकी सन् १९३० के मध्य मे अपना काम शुरू करते समय उन दोनो मे से किसीको भी आशा नही थी।

अन्तत उनके इस काम की नाटकीय परिणति परमाणु-विखडन मे हुई। यह एक ऐसी सफलता थी कि यदि हैन और मेट्नर चाहते तो परमाणु बम पहले हिटलर के पास होता, फिर किसी दूसरे के। मगर उनके इस काम को भली भाति समझने के लिए यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि यूरेनियम के परमाणु को वे इसलिए कदापि नही तोडना चाहते थे कि उससे हिटलर या और कोई परमाणु बम बना सके। वे रेडियोधर्मी पदार्थों की शोध इसलिए कर रहे थे कि वे विभिन्न प्रयोगशालाओ मे विभिन्न प्रयोग-विधियो के द्वारा शोधरत वैज्ञानिको द्वारा रेडियोधर्मी पदार्थों मे किए गए परिवर्तनो को समझना चाहते थे। मेट्नर और हैन रेडियम और थोरियम के अन्वेषण तो पहले ही कर चुके थे, बरसो पहले उन्होंने जिस रेडियोधर्मी पदार्थ प्रोटैक्टिनियम की खोज की थी उसकी छानबीन भी वे पूरी तरह कर चुके थे। डा० मेट्नर ने रेडियोधर्मिता और नाभिकीय भौतिकी पर एक पुस्तक लिखी थी और भौतिकी के उस क्षेत्र-विशेष मे उसकी गणना विश्व के अधिकारी विद्वानो मे होती थी। हैन की ही भाति उसमे भी एक सच्चे अन्वेषक की अधिक से अधिक ज्ञान उपार्जित करने की अगाध पिपासा थी। सन् १९३० के मध्य के उन दिनो मे वैज्ञानिको का एक छोटा-सा वर्ग परमाणु का नाभिक (nucleus) बदलकर एक तत्त्व को दूसरे तत्त्व मे परिणत करने के प्रयत्नो मे लगा हुआ था—हैन और मेट्नर भी इसी वर्ग मे शामिल थे।

एक तत्त्व की दूसरे तत्त्व मे परिणति को निम्नलिखित तीन अवस्थाओ मे

समझा जा सकता है, यद्यपि निम्न व्याख्या को वैज्ञानिक व्याख्या नही कहा जा सकता

१. जैसाकि पहले भी कहा जा चुका है, एक परमाणु मे ये तीन चीजें होती है—प्रोटोन (धनात्मक विद्युत-चार्ज), इलेक्ट्रोन (ऋणात्मक चार्ज), और न्यूट्रोन (जिनमे कि कोई चार्ज नही होता)। परमाणु के प्रोटोन एक कड़े पिंड (mass) के रूप मे उसके नाभिक या क्रोड (core) मे जमा रहते है जोकि उस परमाणु के पूर्ण आकार का अंश-मात्र होता है।[1]

२. परमाणु-भारो की तालिका मे किसी तत्त्व का जो नम्बर होता है उसके एक परमाणु के प्रोटोनो की भी वही सख्या होती है। उदाहरण के लिए हाइड्रोजन का उस तालिका मे पहला नम्बर है, इसका अर्थ हुआ कि उसके एक परमाणु मे सिर्फ एक ही प्रोटोन होता है। ऑक्सीजन का इस तालिका मे आठवा नम्बर है, इसका अर्थ हुआ कि ऑक्सीजन नामक तत्त्व के एक परमाणु मे आठ प्रोटोन होते है। पारा इस तालिका मे गिनाए गए तत्त्वो मे बहुत नीचे आता है। तालिका मे उसका नम्बर ८० है, उससे पता चला कि पारे के एक परमाणु मे ८० प्रोटोन होते हैं। इस प्रकार तालिका के तत्त्वो का नम्बर बढने के साथ-साथ यह भी समझते रहना चाहिए कि जिस तत्त्व का नम्बर सौ से अधिक तत्त्वो की इस तालिका मे जितना अधिक है उसके एक परमाणु के प्रोटोनो की सख्या भी उतनी ही अधिक है।

३ प्रयोगशाला मे अणुओ पर प्रयोग किस विधि से किए जाएं, इस बात की खोज करते-करते वैज्ञानिको ने देखा कि कुछ तत्त्वो मे से प्रोटोन को निकाला जा

---

१ डा० मेट्नर ने परमाणु के आकार का इन शब्दो में वर्णन किया है: "साबुन के एक बुलबुले का अर्द्धव्यास मापकर हम उसकी गोल तल (spherical surface) के क्षेत्र का हिसाब लगा सकते है। उस बुलबुले को फोड़कर हम उसका भार मालूम कर सकते हैं और उसकी झिल्ली की मोटाई को भी माप सकते हैं। इस प्रकार की गणना करने से पता चलता है कि कभी-कभी साबुन के बुलबुले की मोटाई एक सेंटीमीटर के दस-लाखवें भाग से कुछ कम होती है। चूंकि इस बुलबुले में साबुन के अणुओं की कम से कम एक सतह होनी अनिवार्य है, इसलिए इन अणुओं का व्यास एक सेंटीमीटर के दस-लाखवें भाग से कम होना जरूरी है। और क्योंकि एक अणु में अनेक परमाणु होते हैं इसलिए इन परमाणुओं का अपने अणुओं से भी छोटा होना अनिवार्य है।

सकता है। जब उन्होने किसी एक तत्त्व मे से उसका प्रोटोन निकाला तो वह तत्त्व परमाणु-भारो की तालिका मे अपने से नीचे के खाने मे दिए गए तत्त्व में परिणत हो गया। जब उन्होने ऑक्सीजन (न० ८) में से प्रोटोन निकाल दिया तो ऑक्सीजन ऑक्सीजन न रहकर, नाइट्रोजन (न० ७) में परिणत हो गई। जब उन्होने लीथियम (न० ३) में से प्रोटोन निकाल दिया तो लीथियम हीलियम (न० २) में परिणत हो गया। जब उन्होने पारे (न० ८०) में से एक प्रोटोन निकाल दिया तो वह सोने (न० ७९) मे परिणत हो गया। कुछ तत्त्व (जिसमे सोना भी शामिल है) परिणत होने के बाद कुछ देर तो अपने नये रूप में रहते हैं और फिर अपने आप ही किसी और चीज़ मे परिणत हो जाते हैं। कुछ तत्त्व एक बार परिणत हो जाने के बाद अपने नये रूप मे ही बने रहते है।

अब हम मेट्नर-हैन कार्य की बात करें। अभी तक न्यूट्रोनो की खोज नही हो सकी थी और यह माना जाता था कि परमाणु मे प्रोटोन और इलेक्ट्रोन ही होते है, किन्तु फिर भी वैज्ञानिक एक तत्त्व को (उसमे से प्रोटोन निकालकर) दूसरे तत्त्व मे परिणत करने मे सफल हो गए थे। सन् १९३२ मे न्यूट्रोनो का अन्वेषण हो जाने के बाद प्रायोगिक कार्य मे नई तकनीके अपनाना सभव हो सका। सन् १९३४ मे एनरिको फेर्मी के नेतृत्व मे इटली के कुछ वैज्ञानिको ने यूरेनियम (तालिका मे न० ९२ का तत्त्व जो तब तक ज्ञात पदार्थों मे सबसे भारी था) के परमाणुओ का न्यूट्रोनो से विस्फोट किया। फलस्वरूप एक ऐसे तत्त्व की प्राप्ति हुई जो अब तक के ज्ञात तत्त्वो में सबसे भिन्न था। फर्मी का विचार था कि यह एक नया तत्त्व है जो यूरेनियम से भारी है और सभवत यह वही तत्त्व है जिसे परमाणु भारो की तालिका के ९३ न० पर दिया गया है मगर जिसे प्रकृति में से अभी प्राप्त नही किया जा सका है। उनके परीक्षणो से यह रेडियोधर्मी तत्त्व इतने अल्प परिमाण में प्राप्त होता था कि इसका पूर्ण रासायनिक विश्लेषण करके इस बात का निर्णय करना कठिन था कि फेर्मी का यह विचार कहा तक ठीक है, और वैज्ञानिक इस सबध मे शकारहित नही थे। फिर, अगर फेर्मी का ही विचार ठीक उतरता, तो साधारणजन भी यह समझ सकता है कि परमाणु के नाभिक में से प्रोटोनो की सख्या कम करने के बजाय उसने उनकी सख्या में वृद्धि ही की होगी —उन दिनो यह बात विज्ञान-जगत् के लिए नई और चौंका देनेवाली थी।

जब फेर्मी के इन प्रयोगो की खबर बर्लिन पहुची तो डा० हैन के शब्दो में,

"प्रोटैक्टिनियम के रासायनिक गुणो से पहले से ही परिचित होने के कारण लाइज मेट्नर ने और मैंने फेर्मी के प्रयोगो को दुहराने का निश्चय कर लिया।" तालिका के अनुसार यह न० ९१ पर दिया गया तत्त्व था और यदि फेर्मी द्वारा तत्त्व तालिका मे यूरेनियम और प्रोटैक्टिनयम के आस-पास होता तो इस बात की काफी सभावना थी कि प्रोटैक्टिनियम के ये दोनो अन्वेषक अपने अनुभव और ज्ञान की सहायता से इस तत्त्व का विश्लेषण कर पाते।

उन्होंने अपना काम शुरु किया, और जल्दी ही, डा० मेट्नर के शब्दो मे "रेडियोधर्मी पदार्थों का एक पूरा नवीन वर्ग खोज निकाला गया। इस वर्ग के तत्त्व परमाणु-भारो की आवर्ती तालिका मे यूरेनियम से एकदम नीचे दिए गए तत्त्वो से भिन्न थे। ये तत्त्व यूरेनियम से ऊचे हो सकते है—यही एक सभावना शेष थी।" कुछ समय बाद फ्रिट्ज स्ट्रासमान ने भी उनके साथ ही काम शुरु कर दिया। डा० मेट्नर का कहना है, "अनुसधान की प्रगति के साथ-साथ हमे पता चला कि हम एक सर्वथा नवीन कार्य-विधि अपना रहे है।" इसी समय जबकि ये तीनो वैज्ञानिक इन नवीन परिवर्तनो को लेकर परेशान हो रहे थे, सन् १९३८ की वसन्त ऋतु आ गई और उसके साथ ही आस्ट्रिया पर नाजियो का अधिकार हो गया। इससे पहले कि नाजियों के हाथों उसे कोई हानि पहुचे लाइज मेट्नर को उसके मित्रो ने जर्मनी से बाहर पहुचा दिया। वह कुछ समय के लिए कोपेनहेगन चली गई जहा उसकी बहन का लडका ओटो फ्रिस्स रहता था। उसका यह वैज्ञानिक भानजा नील्स बोर की प्रयोगशाला में काम करता था जिन्हें प्राय. 'परमाणु का पिता' कहा जाता है और जो उन दिनो आधुनिक वैज्ञानिक जगत् के सर्वाधिक श्रद्धेय वैज्ञानिकों में परिगणित किए जाते थे, आज भी उनकी यही ख्याति है और भविष्य में भी रहेगी।

मेट्नर के जर्मनी से चले जाने के बाद हॅन और स्ट्रासमान ने अपना काम जारी रखा। शीघ्र ही (मेट्नर के जाने के कुछ ही महीने बाद) उन्होंने अपना रासायनिक विश्लेषण पूर्ण कर लिया। इस विश्लेषण मे वे इस निष्कर्ष पर पहुचे कि उनकी 'सर्वथा नवीन कार्य-विधि' बेरियम उत्पन्न कर रही थी। सन् १९३८ के आरम्भ मे हॅन ने इस तथ्य को विज्ञान की एक पत्रिका में प्रकाशित कराया। वह बहुत परेशान हो उठा था क्योंकि स्वय उसीके शब्दो मे उसकी इस कार्य-विधि के ये परिणाम 'आज तक नाभिकीय भौतिकी के क्षेत्र मे घटी सभी घटनाओ के

विरोध मे पडते थे ।' लाइज़ मेट्नर को स्वीडन मे हैन की परेशानी का पता चला। वह उन दिनो स्टॉकहोम में विज्ञान अकादमी के भौतिकी-सस्थान मे काम कर रही थी। हैन की परेशानी से उसे ज्यादा परेशानी नही हुई। उसे बर्लिन मे हैन के साथ किए कार्य का ज्ञान था, और एक प्रतिभाशाली नाभिकीय वैज्ञानिक की आतुरता के साथ परमाणु की रचना के बारे मे बोर के सिद्धान्त को भी उसने समझ लिया था। इसलिए उसकी समझ मे वह रहस्य आ गया जिसने हैन को चकमा दे दिया था। वेरियम का प्रकट होना बहुत हद तक इस सभावना की ओर सकेत करता था कि "यूरेनियम (न० ९२) के अणु का नाभिक खडित हो गया है।" उसे निश्चित रूपसे प्रतीत हो रहा था कि किअगर बेरियम (तालिका मे जिसका न० ५६ है) उत्पन्न हुआ है तो गैसीय तत्त्व क्रिप्टन (न० ३६) भी उत्पन्न हुआ है। वह अपनी इस धारणा को वैज्ञानिक तर्कों से पुष्ट कर सकती थी।

उसने अपनी यह धारणा कोपेनहेगन मे फ्रिस्ख को बताई, और फ्रिस्ख ने यह वात बोर को बता दी जो वैज्ञानिको की गोष्ठियो आदि मे सम्मिलित होने अमरीका आने ही वाले थे। १६ जनवरी को मेट्नर और फ्रिस्ख ने ब्रिटेन की वैज्ञानिक पत्रिका 'नेचर' के लिए एक पत्र लिखा जिसमे हैन व स्ट्रासमान के कार्य को यूरेनियम के अणु का खडन कहकर पुकारा गया था (मेट्नर ने इसे 'परमाणु विखडन' की सज्ञा दी थी और इसे यह नाम सबसे पहले उसीने दिया था) और इसके वैज्ञानिक सिद्धान्तो पर प्रकाश डालते हुए यह कहा गया कि इस भाति का विखडन उच्चतम परमाणु-नाभिको मे होने की ही सभावना विशेष रूप से है। उन्होंने गणना करके बताया कि इस विखडन से लगभग २०,००,००,००० इलेक्ट्रोन वोल्ट ऊर्जा उत्पन्न हुई है।

जिस दिन यह पत्र लिखा गया था उसी दिन नील्स बोर ने अमरीका मे पदार्पण किया और उन्होने कोलबिया और प्रिसटन में अपने वैज्ञानिक मित्रो को मेट्नर और फ्रिस्ख के विचारो से अवगत कराया। दस दिन वाद वाशिंगटन में अमरीकन भौतिकशास्त्रियो के एक सम्मेलन में यह वात सार्वजनिक रूप में बताई गई। इन वैज्ञानिको मे शायद किसी और समाचार ने कभी ऐसी उत्तेजना नही फैलाई थी। लोगो ने सोचा कि यूरेनियम के विखडन में सफलता प्राप्त की जा चुकी है या नही और मेट्नर और फ्रिस्ख द्वारा उससे नि सृत ऊर्जा की गणना ठीक है या गलत, इस तथ्य का अमरीका की अनेक प्रयोगशालाओ मे वैज्ञानिक उपकरणो (और

मस्तिष्को।) द्वारा परीक्षण किया जा सकता है। वैज्ञानिको के टेलीफोन खटकने लगे कि इस तथ्य का परीक्षण किया जाए। कोपेनहेगन मे बोर की प्रयोगशाला में फ्रिस्ख इस काम पर पहले से ही डटा हुआ था और सबसे पहले उसीने इस धारणा के समर्थन में प्रमाण उपस्थित किया। शीघ्र ही अमरीकी प्रयोगशालाओ ने उसके निष्कर्षों का समर्थन किया और इस बात की होड लग गई—यद्यपि एक लम्बे अरसे तक सरकार ने इसमे कोई मदद नही दी—कि देखे सबसे पहले परमाणु-विखडन की शृखला-अभिक्रिया (chain reaction) का अनुसधान कौन करता है और इस प्रकार बमो में परमाणु ऊर्जा भरने का श्रेय प्राप्त करता है। फरवरी सन् १९४० में, यानी परमाणु-विखडन की घोषणा के तेरह महीने बाद, अमरीका सरकार ने कोलबिया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिको को पहली बार आर्थिक सहायता दी। यह अनुदान ६,००० डालर का था। अतत इन्हींमे से कुछ वैज्ञानिक शृखला-अभिक्रिया का पता लगाने मे सफल हुए।

कुछ वर्षो के समय और दूसरे विश्वयुद्ध के बाद डा० मेट्नर ने लिखा था "यह एक दुर्भाग्यपूर्ण सयोग है कि (परमाणु-विखडन की) यह खोज युद्ध-काल में हुई।" लेकिन क्योकि यह खोज वाकई युद्ध-काल में हुई और जर्मनी में हुई, अमरीका और मित्र-राष्ट्रो का यह सौभाग्य था कि नाभिकीय भौतिकी की यह तीक्ष्ण अन्तर्दृष्टि लाइज मेट्नर नामक महिला भौतिकशास्त्री मे थी और उनने जो कुछ किया वह उनके हितो के अनुकूल ही पडा। जो वैज्ञानिक जर्मनी में ही रह गए ये उनमें से कुछ को तो शत्रु-राष्ट्रो के वैज्ञानिको से सम्पर्क स्थापित करने नही दिया जाता था और दूसरे स्वय ये सम्पर्क नही स्थापित करना चाहते थे। अलबत्ता हॅन अपने कार्य को युद्ध-कालीन आवश्यकताओ मे अछूता रखने में बहुत कुछ सफल हो सका था। मगर न जर्मनी के सब वैज्ञानिक जर्मनी मे मौजूद थे और न इटली के सब वैज्ञानिक इटली मे थे। जर्मनी और इटली की यहूदी-विरोधी नीतियों का अमरीका और मित्रराष्ट्रो को बडा लाभ पहुचा, इन देशो की वैज्ञानिक उपलब्धियो में जर्मनी व इटली से भागे हुए वैज्ञानिको का बहुत बडा योगदान है। सच तो यह है कि यह सोचकर हैरानी होती है कि अगर क्षणिक विजय के मद में पागल इन तानाशाहो की यहूदी-विरोधी नीति के कारण इनके शत्रुओ को ये महान प्रतिभाशाली वैज्ञानिक न मिल पाते, जो अंतत. इन्ही मदान्ध तानाशाहो के विनाश का कारण बने, तो आज दुनिया का क्या हाल होता?

लाइज मेट्नर स्थायी रूप से स्टॉकहोम में ही रहने लगी। युद्ध के दौरान स्वीडन की नागवार तटस्थता और जर्मनी में अपने मित्रो की विपन्न अवस्था से वह प्राय खिन्न हो उठती थी। उसके एक परिचित ने, जिसने उसे स्टॉकहोम मे आने के कुछ ही दिन बाद देखा था, उसका वर्णन इन शब्दो मे किया है, "वह एक चिंतित और थकी हुई महिला है और उसके मुख पर आम शरणार्थियो का-सा तनाव है।" वे दिन गए और सुख के दिन आए, यद्यपि जर्मनी के बन्दी-शिविरो मे कैद प्रियजनो की यातना से उत्पन्न वेदना बनी ही रही।

एक वर्ष अमरीका मे अतिथि के रूप मे रहने के बाद और विश्वयुद्ध समाप्त हो जाने के बाद वह स्वीडन चली गई और वही की नागरिकता ग्रहण कर ली। स्टॉकहोम विश्वविद्यालय मे परमाणु-शोध विभाग के एक सदस्य के रूप मे वह एक ऐसी अवस्था मे भी अपना काम करती रही जबकि अधिकाश वैज्ञानिक काम करना बन्द कर देते हैं। उसे सिर्फ स्वीडन ने ही समादृत नही किया, जिसने कि उसे अपनी विज्ञान अकादमी का एकमात्र जीवित महिला सदस्य बनाया, बल्कि जर्मनी और उसके मूल देश आस्ट्रिया ने भी उसका सम्मान किया। सन् १९४७ मे उसे 'दी सिटी ऑफ वियनाज़ प्राइज इन साइसेज़' दिया गया और सन् १९४९ मे उसे मैक्स प्लैंक पदक प्रदान किया गया। साइराक्यूज, रटगर्स, स्मिथ और एडेल्फी—इन चार अमरीकी शिक्षा-सस्थानो ने उसे विज्ञान मे सम्मानार्थ डाक्टरेट की उपाधिया प्रदान की।

हेलेन सॉयर हौग

कॉलेज जूनियर होने से पहले हेलेन सॉयर ने यह कल्पना भी न की थी कि एक दिन वह ज्योतिर्विद् बनेगी। उस साल उसने पहली बार खगोलविज्ञान को अपना विषय चुना और अचानक उसे तारों मे इतनी अधिक रुचि उत्पन्न हो गई कि उसके भावी जीवन का यही मार्ग निर्धारित हो गया। इस विषय में उसपर अपनी शिक्षिका का काफी प्रभाव पडा जोकि आकाश के अध्ययन को ही अपना जीवन-लक्ष्य बना चुकी थी। जब उसके विद्यालय माउंट होलयोक ने उसे दो प्रमुख विषय लेने से रोक दिया तो हेलेन सॉयर ने रसायन को छोडकर खगोल-विज्ञान को अपना प्रमुख विषय चुन लिया, और इस परिवर्तन के लिए उसे कभी पछताना नही पडा। जीवन-भर उसने तारो पर ही काम किया है। उसने विवाह किया, तीन बच्चो को जन्म दिया और पैंतालीस वर्ष की अवस्था मे वह विधवा हो गई। उसके कार्य का महत्त्व स्वीकार करते हुए उसे खगोल विज्ञान में ऐनी जम्प कैनन पुरस्कार प्रदान किया जा चुका है। तब से अपने समकक्ष वैज्ञानिकों में उसका महत्त्व निरन्तर बढ़ता ही गया है।

अपने बचपन में हेलेन सॉयर ने अपनी मा से तारो के बारे में सुन रखा था। जाड़ो के दिनो मे शाम के समय प्रायः वे लविल, मैसाच्यूसैट्स, अपने मकान के बाड़े मे आ जाती और वहा अपनी बेटी को मृग (Orion) के दर्शन कराती। विनीपिसॉकी झील के किनारे अपने मकान में गर्मियो की छुट्टियां बिताते हुए वे हेलेन को दूसरे तारा-मण्डलों तथा आकाश के बारे में बताती थी। इन सब अनुभवो से बच्चों के अन्दर कोई विशेष उत्तेजना या प्रेरणा जागती हो, ऐसी बात न थी।

वह एक सम्पन्न परिवार की लडकी थी और उसका पिता न्यू इग्लैंड मे बैंकर था, इसलिए ये तथा दूसरे अनुभव उसके लिए स्वाभाविक ही थे। जब हेलेन पांच या छ वर्ष की थी तभी उसकी बडी बहन का विवाह हो गया था, और तब मे सतान के नाम पर वह घर मे अकेली ही रह गई थी। तारो की तरह ही वह अपनी मा के चट्टानो के सग्रह, फूलो के पौधो और न्यू इग्लैंड के कवियो की प्रकृति-सम्बन्धी कविताओ मे भी रुचि लेती थी। हेलेन ने खुद भी विरल पर्णांगो (Fern) और सकरो (Hybrid) का एक सग्रह तैयार किया था। कई बार गर्मियो की छुट्टियो मे वह वरमौंट-स्थित अपने रिश्ते के भाई के फार्म पर चली जाती थी। उपर्युक्त सग्रह उसने वही किया था।

वह इतवार की बडी बेचैनी से प्रतीक्षा करती थी। इतवार के दिन दोपहर के बाद वह अपने पिता के साथ मैरीमैक नदी या पॅटिकट प्रपात के किनारे सैर करने जाती थी। बाद मे उसके पिता ने गाडी खरीद ली और वे उसमे बैठकर घूमने जाते थे। कभी-कभी वे पुराने कब्रिस्तानो की खोज मे निकलते थे ताकि वे अपने अमरीकी पूर्व पुरुषो की कब्रो का पता लगा सके। ग्रोटन का स्मारक देखना हेलेन के जीवन का अविस्मरणीय अनुभव था। यह स्मारक विलियम और डेली-वरेंस लौंगले व उनके आठ मे से पाच बच्चो के वध की याद दिलाता था, और उसे बताया गया था कि उसके वश का आदि पुरुष इस हत्याकाड से बच निकले तीन बच्चो मे से एक था।

वह बारह वर्ष की ही थी कि उसका पिता चल बसा। उसकी मृत्यु के बाद भी उसकी शिक्षा लॉवेल के पब्लिक स्कूलो मे यथापूर्व चलती रही। उसकी एक दूर की रिश्तेदार मिस ल्योनार्डा बैंटिल्स बहुत वर्षों तक उनके ही यहां रहती थी। एक दिन यही मिस ल्योनार्डा बैंटिल्स नगर की अन्यतम स्कूल-अध्यापिका मानी जाने लगी। हेलेन की शिक्षा-दीक्षा मे उसके मा-बाप के अलावा 'आटी' बैंटिल्स का भी काफी हाथ था। इस बच्ची को बचपन में ही शिक्षा के प्रति आदर-भाव रखना सिखाया गया था और उसे सदैव शिक्षा के लिए सुविधाए भी मिलती रही। हर वर्ष गर्मी की छुट्टियो मे वह अपने झीलवाले मकान मे चली जाती थी और एकदम बेफिक्री के साथ छुट्टियो का आनन्द उठाती थी। स्कूल के दिन भी बड़े मजे में कटते थे, भले ही वहा इतनी बेफिक्री न थी। सभी विषयो के अध्ययन मे हेलेन की बडी रुचि थी और जब सोलह साल से भी कम उम्र मे, सन् १९२१ में

वह लॉविल हाई से स्नातक हुई तो उसका नाम अपनी कक्षा के कई सौ छात्रो मे से प्रथम छ सफल छात्रो की सूची में था।

अब वह कॉलेज जाने काबिल हो गई थी, पैसे की कमी नही थी, और उसने माउट होलयोक मे पढने का फैसला किया। लेकिन अभी उसकी उम्र कम थी। यही अच्छा समझा गया कि अभी एक साल उसे घर से बाहर न भेजा जाए। वह लॉविल हाई मे पाच वर्ष का अध्ययन करने लगी और अगले साल सितम्बर में कॉलेज मे पढने के लिए उसने घर छोडा तो "मुझे ऐसा लगा जैसे माउट होलयोक दुनिया के दूसरे छोर पर है।" उस दिन वह सोच भी नही सकती थी कि छत्तीस वर्ष बाद उसे सोवियत सरकार के आमत्रण पर रूस की यात्रा के लिए हवाई जहाज़ मे सवार होना पडेगा, और उसे अपने घर से रूस का फासला इतना अधिक नही लगेगा जितना कि उस दिन लॉविल और दक्षिण हैडले का लग रहा था, गोकि दोनो नगर मैसाच्यूसैट्स मे ही थे।

और न सन् १९२२ के उस सितम्बर मे वह यही सोच सकती थी कि एक दिन दूरी की उसकी धारणा का इतना विस्तार हो जाएगा कि कुछ ही वर्षो में वह तारकीय दूरियो को दस लाख प्रकाश-वर्षो की इकाइयो मे मापा करेगी। यदि उस दिन कोई उससे कहता कि सिर्फ चार साल के अन्दर ही वह हारवर्ड वेधशाला के नव-नियुक्त निदेशक डा० हारलो शेपले की सहायक बन जाएगी तो यह बात उसे शेखचिल्ली के मनसूबो जैसी लगती। घर से कॉलेज के लिए रवाना होते हुए खगोलविज्ञान की बात उसके दिमाग मे बिलकुल नही थी। कॉलेज के प्रथम वर्ष मे उसने रसायन लिया जोकि उसने हाई स्कूल के पाच वर्षो के अध्ययन में नही पढा था। वर्ष के अन्त में उसने रसायन को ही अपना प्रमुख विषय चुना, और वह अपने चुनाव से पूरी तरह सतुष्ट थी। इसी समय उसका सपर्क डा० ऐनी सैवेल यग से हुआ, और इस सपर्क ने उसकी विचारधारा ही बदल दी।

जैसाकि इस पुस्तक मे अन्यत्र बताया गया है, माउट होलयोक का रसायन विभाग बडा ही सुयोग्य था। इसका खगोलविज्ञान विभाग भी बडा श्रेष्ठ था और उसकी अध्यक्ष डा० चार्ल्स आगस्टस यग की भतीजी थी। डा० चार्ल्स आगस्टस यग ७५ वर्ष से अधिक से प्रिसटन विश्वविद्यालय के खगोलविज्ञान विभाग में प्रख्यात प्रोफेसर थे और सूर्य-किरीट (Corona) के वर्णपट (Spectrum) के अध्ययन की नीव डालनेवाले ज्योतिर्विद् थे। ऐनी सैवेल यग हेलेन सायर के कॉलेज-

प्रवेश के समय माउट होलयोक मे जॉन पेसन विलिस्टन वेधशाला की निदेशक थी और वहुत कुछ अपने चाचा के अनुरूप ही ढली थी। तारे ही जीवन थे और उसका आकर्षण इतना प्रवल था कि वह अपने सपर्क मे आनेवाले उन विद्यार्थियो के मन मे तारो के लिए वही आकर्षण उत्पन्न कर देती थी जिनमे आकाश का वैज्ञानिक अध्ययन करने की जन्मजात क्षमता होती थी।

हेलेन सॉयर अभी वीस वर्ष की भी नही हुई थी। वह कॉलेज जूनियर थी और उसने पहली वार खगोलविज्ञान को अपना विषय चुना था। वह इस वात से सर्वथा अनभिज्ञ थी कि विषय का यह चुनाव उसे क्या से क्या वना देगा। इसी समय वह डा० यग के सपर्क मे आई। डा० यग का उसपर वहुत प्रभाव पडा—वेधशाला मे भी जहाकि एक श्रेष्ठ दूरवीन रखी हुई थी जिससे वह मृग को, वचपन मे अपने यार्ड के मुकावले, कही अच्छी तरह देख सकती थी, और कक्षा मे भी जहाकि डा० यग एक प्रेरणादायक अध्यापिका थी।

उस वर्ष वडे दिन की छुट्टियो के सप्ताह पता चला कि सूर्य का पूर्ण ग्रहण होनेवाला है। ससार-भर के ज्योतिर्विद् इस घटना को सर्वाधिक महत्त्व देते है, और कुछ वैज्ञानिक तो आधी दुनिया पार करके ऐसे स्थानो पर पहुचते है जहा से उन्हे ग्रहण स्पष्ट रूप से दिखाई दे सके। सन् १९२५ के उस सूर्यग्रहण मे खगोल-विज्ञान के छात्रो के अलावा जन-साधारण की भी रुचि थी, यद्यपि दक्षिण हैडले से पूर्ण ग्रहण नही दिखाई दे सकता था। वहा से दक्षिण दिशा मे केवल सौ मील दूर पर केन्द्रीय कनैक्टीकट था जहा से पूर्ण ग्रहण देखा जा सकता था। डा० यग ने कॉलेज के अधिकारियो को इस वात के लिए राजी कर लिया कि भोर से पहले ही वहा से केंद्रीय कनैक्टीकट के लिए एक विशेष ट्रेन रवाना हो जो सव छात्रो को वहा पहुचा दे। जनवरी के उस शीतल प्रभात मे उनकी ट्रेन एक उजाड मैदान मे रुकी, और वहा घुटनो तक वर्फ मे खडे होकर माउट होलयोक के छात्रो और साहसी शिक्षकों ने वह भव्य दृश्य देखा। उस उजाड मैदान मे उनके और सूर्य-ग्रहण के वीच मे पेड की एक टहनी तक नही थी, और दिन के साफ मौसम मे सूर्य का पूर्ण ग्रहण देखना मानव-जीवन के विरल और अमूल्य अनुभवो मे से एक माना जाता है।

माउंट होलयोक की उस पीढी की स्त्रियो के मन मे आज भी न केवल उस पूर्ण ग्रहण की याद ताज़ा है, वल्कि उन्हे यह भी याद है कि उस वर्ष हार्वर्ड विश्व-

विद्यालय के अडरग्रेजुएट तथा दूसरे छात्र कई कारणो से (यह बाद मे बताया गया था) वह दृश्य देखने से वचित रह गए थे। वे ठीक समय पर ठीक स्थान पर पहुचने मे 'असफल रहे थे', उन्हे यह बताने मे भी बड़ा आनन्द आता है कि इस असभव को उनके लिए सभव बना दिया गया था मगर इसके परिणामस्वरूप उनमे से कोई भी निमोनिया से मरा नही, यद्यपि डा० हौग ने स्वीकार किया है कि "उस दिन पहली बार मुझे पता चला कि सर्दी किसे कहते है।"

सीनियर वर्ष मे उसके जीवन की एक और महत्त्वपूर्ण घटना घटित हुई। डा० ऐनी जम्प माउट होलयोक पधारी और उन्हे कालेज के खगोलविज्ञान विभाग के कुछ छात्रो का कार्य दिखाया गया। डा० कैनन हार्वर्ड विश्वविद्यालय की प्रख्यात ज्योतिर्विद् थी जिसने लगभग ४,००,००० तारो का वर्गीकरण किया था, और जिनके योगदान को डा० शेप्ले ने "एक ऐसा कार्य जिसका गुण या परिमाण की दृष्टि से कोई व्यक्ति मुकाबला नही कर सकता" बताया था। उनके आने का परिणाम यह निकला कि अगले वर्ष मिस सॉयर को रैडक्लिफ विश्वविद्यालय मे एडवर्ड सी० पिकरिंग छात्रवृत्ति दिलाने की व्यवस्था हो गई ताकि वह वहा अनुसधान कर सके और उस कार्य पर वहा से खगोलविज्ञान मे पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त कर सके।

'फाई बीटा कैप्पा' की सदस्यता के साथ, सन् १९०६ मे स्नातक होने के पूर्व ही हेलेन सॉयर आकाश-गगा के तारा-गुच्छो मे विशेष रुचि लेने लगी थी। इन तारा-गुच्छो को गोल तारक-गुच्छ कहा जाता है। सयोगवश डा० हार्लो शेप्ले की विशेष रुचि भी इस विषय मे थी। इसलिए उस शरद् के दिनो मे जब मिस सॉयर को छात्रवृत्ति मिली और उसने रैडक्लिफ विश्वविद्यालय मे अपना काम शुरू किया तो उसे हार्वर्ड वेधशाला के निदेशक के साथ काम करने का अवसर मिला। हार्वर्ड कालेज वेधशाला पत्रिका के सन् १९२७ के अक मे उस वर्ष के अध्ययन के कुछ निष्कर्ष प्रकाशित हुए थे। पत्रिका का पहला लेख था, "पिचानवे गोल तारा-गुच्छो के फोटोग्राफिक कातिमान", जिसके लेखक-द्वय थे हेलेन सॉयर और हार्लो शेप्ले, और लेखकों में हेलेन सॉयर का नाम पहले था।

यह बडी दिलचस्प बात है कि उस अक का अंतिम लेख हार्वर्ड की स्नातक कक्षा के एक कनाडियन छात्र फ्रैंक एस० हौग द्वारा लिखा गया था जो पिछले बसत में ही टोरेंटो विश्वविद्यालय मे स्नातक होकर यहा आया था, मिस्टर हौग

की विशेष रुचि तारकोय वर्णक्रम ज्योतिर्मिति (Spectrophotometry) के क्षेत्र में थी, और इसी नौजवान को सन् १९२९ में हार्वर्ड से खगोलविज्ञान में सर्वप्रथम पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त करने का गौरव मिलनेवाला था। स्वाभाविक था कि हेलेन सॉयर हौग और फ्रैंक हौग मिले। शीघ्र ही उन दोनो को पता चला कि व्यक्तिगत जीवन और व्यवसाय—दोनो की काफी वातो मे वे एक-दूसरे का साथ निभा सकते है।

यद्यपि उन दोनो को ही पोस्ट ग्रेजुएट उपाधिया सन् १९२८ मे मिल गई थी, किन्तु फ्रैंक हौग ने मिस सॉयर से दो वर्ष पूर्व ही डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त कर ली। उसने डाक्टरेट की उपाधि हार्वर्ड से ली थी। जबकि मिस सॉयर ने रैडक्लिफ से। जितने समय उसने रैडक्लिफ मे अध्ययन किया उस बीच उसे बरावर कोई न कोई फेलोशिप मिलती रही। एक बार कुछ महीनो के लिए उसने अपना अध्ययन स्थगित करके स्मिथ कालेज मे प्रशिक्षक के पद पर नौकरी कर ली थी। पी-एच० डी० करने के बाद फ्रैंक हौग को एक फेलोशिप मिल गई और वह एक वर्ष के लिए कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, इग्लैंड चला गया, जबकि मिस सॉयर ने कैम्ब्रिज अमरीका मे, अपना शोध-कार्य जारी रखा, कैम्ब्रिज मे उसने गोल तारा-गुच्छो के चरकाति तारको पर विशेष अध्ययन प्रारम्भ किया और इसमे उसे विशेष सफलता भी मिली। इग्लैंड से लौटकर डा० फ्रैंक हौग ने एक साल के लिए एमहर्स्ट कालेज मे नौकरी कर ली और मिस हेलेन सॉयर से शादी कर ली। इस एक वर्ष मे मिसेज हौग माउट होलयोक मे खगोलविज्ञान विभाग मे पढाती रही और उसने अपना अनुसधान-कार्य भी पूरा कर लिया जिसपर उसे रैडक्लिफ से पी-एच० डी० की उपाधि मिली।

विवाह के पूर्व तारो पर जो अनुसधान उसने किया था वह इतना सार्थक रहा कि उसका नाम चरकाति तारो व गोल तारक-गुच्छो की खोज के क्षेत्र में प्रतिष्ठित हो गया था। यही कारण है कि विवाह के बाद भी डा० हेलेन सॉयर हौग ने विज्ञान के इस क्षेत्र-विशेष मे जो काम किया उसमें उसने अपने विवाह-पूर्व नाम हेलेन सॉयर का ही प्रयोग किया, यद्यपि अपने शेष व्यावसायिकएव सामाजिक जीवन में वह अपने विवाहित नाम का ही प्रयोग करती थी। इस मामले में समाज-चिह्न लगाकर सॉयर-हौग लिखने से सारी समस्या सुलझ सकती थी और यह इग्लैंड के रीति-रिवाज के अनुरूप भी था।

सन् १९३१ में दोनो डाक्टर हौग ब्रिटिश कोलंबिया गए, जहा कि डा० फ्रैंक हौग को विक्टोरिया मे डोमिनियन ज्योति-भौतिकी वेधशाला मे नियुक्ति मिल गई थी। उसकी पत्नी को कोई नौकरी तुरन्त नही दी जा सकी, किन्तु उसे प्रतिवर्ष कुछ शर्तों के लिए उस वेधशाला की उस ७२ इंची परावर्ती (reflecting) दूरबीन का प्रयोग करने की अनुमति प्रदान की गई जो उस समय ससार की सबसे बडी दूरबीनो मे दूसरे नम्बर पर मानी जाती थी। आगे के तीन साल बडे घटनापूर्ण रहे, इन तीन वर्षों में डा० हेलेन हौग का 'वेतन' लगभग २५० डालर प्रति वर्ष पड जाता था। उसके लिए यह रकम अनुसधान-अनुदान के रूप में उस वेधशाला के निदेशक डा० जे० एस प्लेसकट जुटाते थे। इन्ही वर्षो मे उनकी पहली बच्ची सैली ने जन्म लिया और शिशु के आगमन से उसकी मा के कामो में कुछ उलझन-सी पैदा हो गई। मगर यह उलझन स्वागत के योग्य थी क्योंकि ये दोनो आकाश के रहस्यो मे इतनी बुरी तरह नही खो गए थे कि गृहस्थी और समाज के उत्तरदायित्वो और अपने पूर्णतर जीवन की ओर से उदासीन हो जाते। सैली के बाद उनके दो पुत्र और उत्पन्न हुए। जब बीस वर्ष के विवाहित जीवन के बाद, ४९ वर्ष की उम्र में डा० फ्रैंक हौग का तेजस्वी जीवन-दीप बुझ गया तब पति के शोक-सिंधु मे डूबती हेलेन हौग के लिए ये तीन बच्चे ही सहारे सिद्ध हुए।

यह ७२ इंची परावर्तक (Reflector) सन् १९१८ से प्रयोग में आ रहा था किन्तु अभी तक उसे अनुसधान मे प्रत्यक्ष फोटोग्राफी के लिए प्रयुक्त नही किया गया था, यद्यपि इससे यह काम लिया जा सकता था। अपने पति तथा वेधशाला के दूसरे लोगो की सहायता से सन् १९३१ की शरद् मे डा० हौग ने अपने प्रिय क्षेत्र मे अपना अनुसधान स्वय ही प्रारम्भ कर दिया। उसने विक्टोरिया से दिखाई देनेवाले आठ चुनीदा गोल तारा-गुच्छो के चित्र लिए। इन गुच्छो मे से कुछ के बारे में यह माना जाता था कि उनमे चरकांति तारे है, जबकि बाकी के गुच्छो का अभी तक सम्यक् अध्ययन नही किया गया था।

आगे बढने से पहले यह समझ लेना अच्छा रहेगा कि गोल तारा-गुच्छ क्या है, और ज्योतिर्विद् उनमे क्यो रुचि रखते है। गोल तारा-गुच्छ लाखो तारो के सममित समुच्चय (symmetrical aggregations) है जो गुरुत्वाकर्षण के कारण एक-दूसरे को साधे रहते है, और उनका आकार एक गुच्छे की तरह लगता है, ये हमारी आकाशगंगा के लगभग १०,००,००० तारो के अंग है। अब

तक एक सौ से अधिक स्वतत्र तारा-गुच्छो का पता लगाया जा चुका है। इनमे से एक गुच्छे मे कुछ हजार से लेकर एक लाख या इससे भी अधिक तारे होते है।

इन गोल तारा-गुच्छो मे चरकाति तारे वे है जो एक नियमित अतर से कातिमय और मद होते रहते है। उनका विशेप महत्त्व इसलिए है कि उनका उपयोग तारकीय दूरियो की गणना मे होता है। पृथ्वी तथा अतरिक्ष की वस्तुओ के बीच की दूरी मापने के लिए ज्योतिर्विद् एक गणितीय पद्धति से काम लेते है जो चरकाति तारक द्वारा सर्वाधिक कातिमय तथा सर्वाधिक मद होने के क्षणो मे विकिरण होनेवाले प्रकाश के अश (जिसे कातिमान कहते है) और इन दोनो अवस्थाओ के बीच बीतनेवाले समय पर आधारित हैं। इसलिए चरकाति तारो का अनुसधान ही नही बल्कि (इससे कही अधिक कठिन) उनके कातिमानो की माप का भी खगोलविज्ञान मे बहुत अधिक महत्त्व है।

इसलिए डा० हौग जिस तरह का काम हाथ मे ले रही थी उसके लिए एक ऐसे ज्योतिर्विद् की अपेक्षा थी जो प्रकाश का हिसाब रखते हुए आकाश के सफल और क्रमिक चित्र ले सके, फिर उन प्लेटो का सम्यक् अध्ययन और विश्लेषण कर सके और नई प्लेटो का, उसी तारा-गुच्छ की पुरानी प्लेटो के साथ, अध्ययन करके तर्कपूर्ण निष्कर्ष निकाल सके। इस तरह के काम के लिए उच्चतर गणित मे भी विशेष योग्यता अपेक्षित है।

डोमिनियन वेधशाला मे हौग-दम्पती तीन वर्ष रहे। इन तीन वर्षों मे डा० हौग ने अपने पति व दूसरो की सहायता से गोल तारा-गुच्छो के लगभग ३५०-४०० प्रत्यक्ष चित्र लिए। मैसियर २ (Messier 2) नामक ज्ञात तारा-गुच्छ मे उसने छ नये चरकाति तारो का पता लगाया। इस तारा-गुच्छ की २८ प्लेटें तो माउट विल्सन वेधशाला मे पहले ही ले ली गई थी, और १०७ नई प्लेटें उसने खुद तैयार की। इन सभी प्लेटो का प्रयोग करते हुए उसने इस गुच्छे के सभी ज्ञात चरकाति तारो (जिनकी सख्या १७ थी) के कातिमान एव उनके कातिमय और मद होने के बीच का समय निर्धारित किया तथा इसपर लेखादि प्रकाशित कराए। अपने अध्ययन के लिए उसने जिन पाच दूसरे गुच्छो को चुना था उनमे उसने १३२ नये चरकाति तारो की खोज की, इससे पहले से ज्ञात चरकाति तारो की सख्या मे १० प्रतिशत वृद्धि हो गई। वास्तव मे, इन गुच्छो मे से चार के बारे मे इससे पहले यह सर्वथा अज्ञात था कि इनमे चरकाति तारे हैं।

इस पहले शोध-कार्यक्रम के परिणाम ज्योतिर्विदो के लिए वहुमूल्य सिद्ध हुए। यदि कोई किसी कार्य-व्यस्त ज्योतिर्विद् के चित्र की कल्पना कर सके तो एक ज्योतिर्विद् की क्रिया-पद्धति से सर्वथा अनजान आदमी को भी यह सव समझने मे वडा आनन्द आ सकता है। इसलिए, जरा इस चित्र की कल्पना कीजिए कि डा० हौग एक गुवद के ऊपरी सिरे पर एक चल प्लेटफॉर्म पर वैठी है, हर प्लेट के उद्भासन-काल (exposure) मे उसकी आख दूरवीन से सटे हुए कैमरे के आई-पीस से चिपटी रहती है, वह अपनी आखो से एक तारा-गुच्छ विशेप की गति का अध्ययन करती जाती है और अपनी उगलियो से एक सूक्ष्म यत्र का नियत्रण करती जाती है ताकि कैमरे से वह उस तार-गुच्छ के चित्र भी साथ-साथ लेती चले।

चित्रो की इस प्रथम शृखला मे उद्भासन-काल एक या दो मिनट से लेकर पच्चीस से तीस मिनट का रहा। वाद मे उसने ऐसे चित्र भी लिए जिनका उद्भासन-काल एक घटा था—६० मिनट तक उसकी आख आई-पीस से चिपकी रहती थी। "हा, मुझे पलके तो झपकानी पडती थी," वह क्षमा-याचना के-से स्वर मे वताती है।

इस प्रकार की फोटोग्राफी सूर्यास्त और सूर्योदय के वीच के समय मे और वर्ष के उन थोडे-से महीनो मे ही सभव थी जिनमे इस दृष्टि से तारो की स्थिति ठीक होती है और राते इतनी स्वच्छ होती है कि ज्योतिर्विद् तारो का सम्यक् अध्ययन कर सके और इनके चित्र भी ले सके। इसके अलावा एक वर्ष, गर्मियो में, तो उनके सामने एक नई समस्या उठ खडी हुई। यह समस्या नन्ही सैली को दूध पिलाने की थी। वे लोग वच्ची को कपडो की एक गुदगुदी डलिया में वेधशाला ले जाते थे। वहा डा० हेलेन हौग तो गुवद के ऊपरी सिरे पर पहुचकर अपने काम मे लग जाती थी और डा० चार्ल्स हौग गुवद के फर्श पर से दूरवीन और गुवद को घुमानेवाले यत्र का नियत्रण करते थे और पास ही निश्चित सोई सैली की देख-रेख भी करते रहते थे। एक चित्र ले लेने के वाद वच्ची की मां विजली का एक वटन दवाती और उनका प्लेटफॉर्म फर्श से आ लगता था। नीचे आकर वह वच्ची को दूध पिलाती और उसकी दूसरी जरूरतो को पूरा करती थी, और इसके वाद सैली को उसकी डलिया मे लिटा दिया जाता था और उसकी मा ऊपर अपने काम पर वापस चली जाती थी। सब मिलाकर, गर्मियो के ये दिन खगोलविज्ञान

के अतिरिक्त दूसरे क्षेत्रो मे भी रचनात्मक थे। उन्ही दिनो एक बार राजज्योतिर्विद् उस वेधशाला को देखने पधारे। जब वे उस तारो-भरी रात मे वेधशाला के निदेशक के साथ सीढिया उतरकर गुवद के फर्श की तरफ आ रहे थे तो उन्होने नन्ही सैली के रोने की आवाज सुनी और वे चौक पडे। "यह क्या है!" उनके मुख से निकला।

"ओह, यह हौग-दपती का शिशु है।" सैली के मा-वाप के कानो मे वेधशाला के निदेशक डा० प्लैस्केट के ये शब्द पडे।

जब टोरटो विश्वविद्यालय की नई चौवुर्जी डेविड डनलैप वेधशाला का निर्माण लगभग पूरा हो चुका था तब डा० चार्ल्स हौग को इस विश्वविद्यालय के खगोल-विज्ञान विभाग मे नियुक्त किया गया। उनकी पत्नी को उसी वेधशाला मे सहायक के पद पर नियुक्त कर दिया गया। पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त करने के वाद पहली बार डा० हेलन हौग को एक ऐसी नियुक्ती मिली थी जिसमे उसे वेतन मिलना था। इस वेधशाला के ७४ इची परावर्तक से वह अपना वह शोध-कार्य अत्यन्त सुगमतापूर्वक आगे वढा सकती थी जिसमे उसका नाम 'सायर' प्रतिदिन मान्यता प्राप्त करता जा रहा था। इसी प्रकार उसके पति को वर्णक्रम विज्ञान (Spectroscopy) के क्षेत्र मे अधिकाधिक मान्यता प्राप्त होती जा रही थी। टोरटो आकर फ्रैंक हौग ने वडी तेजी से तरक्की की। वे एक अत्यन्त मेधावी ज्योतिर्विद् थे और दिल की वीमारी के कारण हुई उनकी असामयिक मृत्यु सत्य ही एक दु खपूर्ण घटना थी। ४१ वर्ष की उम्र मे वे उस वेधशाला के निदेशक नियुक्त हुए थे और ४६ वर्ष की उम्र मे उनका स्वर्गवास हो गया। किन्तु जब वे दोनो इस विश्वविद्यालय मे आए थे तव सत्रह वर्ष का सहयोगी गार्हस्थ्य एव व्यावसायिक जीवन उनके सामने था। एक बार आ जाने के वाद हेलेन सॉयर हौग का व्यावसायिक केन्द्र सदैव यह विश्वविद्यालय रहा। सन् १९३७ तक उनके दो पुत्र और हो चुके थे, तथा अगले वर्ष डा० हेलेन हौग की वेधशाला मे अनुसधान-सहयोगी के पद पर तरक्की कर दी गई। यह उसके अभ्युदय का प्रारभ था जो सन् १९५७ मे पूर्ण प्रोफेसर हो जाने के साथ पूर्ण हुआ। यह एक ऐसा सम्मान था जो कुछ दूसरे विश्वविद्यालयो की तरह इस विश्वविद्यालय मे अब भी नारियो के लिए दुर्लभ है।

डेविड डनलप वेधशाला मे नियुक्त होने से पहले, और नियुक्ति के पहले

पाच वर्षो तक भी, हेलेन सॉयर ने गोल तारा-गुच्छो का अध्ययन अमरीका के उत्तरी भागो या दक्षिणी कनाडा की दूरबीनो की ही सहायता से किया था। चूकि कुछ गोल तारा-गुच्छो के चित्र दक्षिणी आकाश मे ही ज्यादा अच्छे लिए जा सकते है, इसलिए वह ऐसे चित्र भी लेना चाहती थी जो अब तक न ले पाई थी। सन् १९३९ मे राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी ने उसे इस कार्य के लिए एक अनुदान दिया, एरिजोना विश्वविद्यालय ने और उसकी वेधशाला के निदेशक ने सहयोग का वचन दिया, और इस प्रकार ३६ इची स्टीवार्ड परावर्तक का प्रयोग करके वह दक्षिणी आकाश मे तारो के चित्र लेने की अपनी साध पूरी कर सकी।

चित्रो की इस नवीन शृखला को प्रारभ करने के कुछ ही पहले उसने 'गोल तारक-गुच्छो के १११६ चरकाति तारको का सूचीपत्र' प्रकाशित कराया। उसके इस योगदान का ज्योतिर्विदो ने सोत्साह स्वागत किया। सन् १९३९ मे प्रकाशित इस व्यापक शोध-कृति का महत्त्व इस बात से और भी बढ जाता है कि इसके रचनाकाल मे डा० हौग के दोनो लड़के छोटे थे और उनकी मा के लिए उनका ध्यान रखना परमावश्यक था। खगोलविज्ञान मे इन सूचीपत्रो का बहुत अधिक महत्त्व होता है। सन् १९३० तक गोल तारक-गुच्छो मे चरकाति तारको के कई सक्षिप्त विवरण तो प्रकाशित हो चुके थे (ऐसा एक विवरण डा० शैप्ले ने भी प्रकाशित कराया था) किन्तु एक पूर्ण सूचीपत्र पहली बार डा० हेलेन हौग ने ही प्रकाशित कराया था। इस सूचीपत्र से इस विषय मे रुचि रखनेवाले किसी भी शोधकर्ता को ठीक-ठीक पता चल सकता था कि अब तक सभी गोल तारा-गुच्छो या किसी एक तारा-गुच्छ विशेष, के सभी ज्ञात चरकाति तारो के सम्बन्ध मे क्या कुछ हो चुका है। सन् १९३९ मे केवल ६५६ चरकाति तारो के कातिमय और मद होने के बीच का समय निर्धारित हो सका था। इस सूचीपत्र को पढने पर पता चलता है कि उसमे दिए गए चरकाति तारो मे से आधे से अधिक तारो का पता तो हेलेन सॉयर के जन्म के भी पूर्व ही लगा लिया गया था। पहले चरकाति तारे की खोज सन् १८६० मे ही की जा चुकी थी। उसके जन्म के बाद जिन ५०० से ६०० तारो की खोज की गई थी उसमे से १८२ तारो की खोज स्वय उसने की थी।

सन् १९३९ की गर्मियो मे वह एरिजोना विश्वविद्यालय गई। और वहा उसने २३६ प्रत्यक्ष चित्र लिए। वहा की वेधशाला की स्टीवार्ड दूरबीन से दक्षिणी आकाश को देखते हुए उसे एक नया ही अनुभव हुआ। उस समय तक वह सभी

भाति समझ चुकी थी कि नये-नये चित्र लेते जाने से उसका काम कितना अधिक बढा जा रहा है। फोटोग्राफिक प्लेटो की परीक्षा एव अध्ययन द्वारा, जिसमे वह सभी सम्भव तरीको का प्रयोग करती थी, ब्रह्माड के बारे मे मानवीय ज्ञान मे वृद्धि करना बडा ही कठिन और समयसाध्य काम है, जिसमे चित्र-वृत्तियो को केन्द्रित करना अनिवार्य है। वह विशेष रूप से इन दो तरीको का प्रयोग करती थी (१)एक पोजिटिव एक नेगेटिव का अध्यारोपण(Superposition), (२)निमीलन सूक्ष्मदर्शी (Blink Microscope) से परीक्षा। एक चरकाति तारे के लिए शब्दश सैकडो तारो की छान-बीन करनी पड सकती है। इसके बाद इसकी काति, मदता और (कातिमय और मद होने के) समय के अन्तराल को मापना पडता है और अक्सर ऐसा होता है कि ज्योतिर्विद् जब समय-अन्तराल के रहस्य को समझनेवाले मार्ग पर कदम रखता है तो चाद का प्रकाश इतना उजला हो जाता है कि उसमे इस सुदूरवर्ती तारे का मद्धम प्रकाश छिप जाता है और काम वही रुक जाता है।

चरकाति तारको के अध्ययन मे कठोरतम परिश्रम आवश्यक होता है फिर यह ऐसा क्षेत्र था जिसके प्रति हेलेन सॉयर ने स्वय को समर्पित कर दिया था। सन् १९३०-१९४० तक उसने अपना समय व्याख्यान देने, विश्वविद्यालय मे पढाने, वेधशाला की दूरबीन से नवीन चित्र लेने और अपने घरेलू और सामाजिक उत्तरदायित्वो को पूरा करने मे लगाया, किन्तु उस समय का अधिकाश भाग चरकाति तारको के अध्ययन मे ही बीता। इनमे से एक वर्ष उसने माउट होलयोक मे खगोल-विज्ञान विभाग के कार्यकारी अध्यक्ष के रूप मे भी विताया। माउट होलयोक की वेधशाला की निदेशक दक्षिण अमरीका मे ग्रहण देखने चली गई थी और वहा के अधिकारियो ने डा० हेलेन हौग को उसके स्थान पर आमन्त्रित किया था। माउट होलयोक मे अपने नियमित उत्तरदायित्वो को निभाना और जल्दी से जल्दी टोरटो लौट आना टेढी खीर थी। लेकिन, "डा० फार्न्सवर्थ का काम सभालने के लिए बहुत कम लोग तैयार थे, और यदि मैं उसकी सहायता न करती तो वह उस ग्रहण को शायद ही देख पाती," डा० हौग का कहना है। ज्योतिर्विदो के लिए ग्रहणो का महत्त्व बहुत अधिक होता है, और यह तथ्य डा० हेलेन हौग भला कैसे भूल सकती थी जो घुटनो-घुटनो बर्फ मे धसकर भी ग्रहण देखने का अवसर नही चूकी थी।

कनाडा, अमरीका और कभी-कभी विदेशी वैज्ञानिक पत्रिकाओ मे भी हेलेन सॉयर के नाम से एक के बाद एक लेख प्रकाशित होने लगे। प्राय इन लेखो मे या तो उन नये चरकाति तारको से सम्बन्धित आकडे होते थे, अथवा उन चरकाति तारको के कातिमान का निर्धारण होता था जिनका निर्धारण तब तक नही हो सका था। सन् १९४७ मे उसने 'पृथक् गोल तारा-गुच्छो की सन्दर्भ ग्रंथसूची' प्रकाशित कराई। इस सूची से ज्योतिर्विदो को यह पता चल सकता था कि इस क्षेत्र मे तब तक क्या कुछ किया जा चुका था। कही-कही उसने उन गलतियो का सशोधन भी कर दिया था जो ज्योतिर्विदो ने चरकाति तारो के कातिमय और मद होने के बीच के समय की गणना मे की थी। सन् १९५० मे उसने खगोलविज्ञान के और विशेष रूप से गोल तारा-गुच्छो के अध्ययन के क्षेत्र मे अपने असाधारण योगदान पर ऐनी जप कैनन पुरस्कार प्राप्त हुआ तो उसके बारे मे कहा गया कि उसने "इस दुर्गम क्षेत्र मे शीर्षस्थान प्राप्त कर लिया है।" चार साल पहले ही अपने कृतित्व के कारण उसे कनाडा की रॉयल सोसाइटी का फेलो निर्वाचित किया जा चुका था—भौतिक विज्ञान के क्षेत्र मे यह सम्मान पानेवाली वह एकमात्र महिला है।

हमेशा ऐसा लगता था जैसे जितना काम किया जा चुका है, उससे कही ज्यादा अभी और करने को पडा है, विश्व की दूरबीनो की बढती हुई शक्ति के साथ नवीन चरकाति तारा-गुच्छो का अनुसधान हुआ। लेकिन सिर्फ यही अनुसधान नही हुआ। ऐसे प्रत्यक्ष प्रमाण जुटे जा रहे थे, जिनसे सिद्ध होता था कि नवीन तारो का सृजन होता रहता है। युगो से प्रचलित यह मान्यता तिरस्कृत कर दी गई कि सभी तारो का सृजन एक ही समय मे हुआ था। ब्रह्माण्ड को सृजन-प्रक्रिया-रत पाया गया।

खगोलविज्ञान के मूल चितन मे यह एक क्रातिकारी परिवर्तन था और हेलेन सॉयर ने इसका स्वागत किया। उसकी प्रवृत्ति इटली के उस राजपुरुष की भाति नही थी जिसने गैलीलियो की दूरबीन मे देखने से इसलिए इनकार कर दिया था कि कही वह उसमे से दिखाई देनेवाली चीजो पर यकीन न करने लगे। वह एक ज्योतिर्विद् के इस कथन मे विश्वास रखती थी "श्रद्धाहीन ज्योतिर्विद् पागल होता है।" सन् १९५१ की नये साल की सुबह को नाश्ते के लिए वह अपने तीनो बच्चो के साथ डा० चार्ल्स हॉग का इंतजार कर रही थी जो ऊपर वाले कमरे मे सोए हुए

थे। जव नियत समय पर वे न आए तव वह ऊपर उन्हे जगाने गई और वहा उन्हे मृत पाया।

पति की मृत्यु के वाद उसका जीवन और भी अधिक व्यस्त हो गया। विश्व-विद्यालय ने उमकी पदोन्नति और वेतन-वृद्धि कर दी। विश्वविद्यालय के क्षेत्र से वाहर अपने पति के अधूरे कामो को पूरा करने के लिए जब भी उससे कहा गया तो यथासभव उसने उसे स्वीकार ही किया। 'जरनल ऑफ द रॉयल एस्ट्रोनोमिकल सोसाइटी ऑफ कनाडा' मे 'दि ओल्ड बुक्स' शीर्षक जो स्तम्भ वह पहले से लिखती आ रही थी, वह एक वार भी अनियमित या स्थगित नही हुआ। इसके अलावा मृत्यु से पहले उसका पति जिन पत्रो आदि के लिए लिखता था उनमे भी अब उसके स्थान पर वह खुद लिखने लगी। सैली वापस कॉलेज जाने लगी, लडको ने हाई स्कूल किया और कॉलेज मे पढना शुरू कर दिया। एक ने अपना विषय खगोलविज्ञान चुना और दूसरे ने रसायन। जव हेलेन सॉयर तारो के चित्र लेने गुवद ऊपर चली जाती तो फर्श पर से उसे नियन्त्रित करने के लिए हौग की जगह पर एक नया सहायक आ गया। उसकी प्लेटो की सख्या वढती ही गई और इसके साथ ही उसका काम भी। सन् १९५५ मे जव उसने 'गोल तारा-गुच्छों के चरकाति तारो का दूसरा सूचीपत्र' प्रकाशित कराया तो उसमे पहले सूचीपत्र की अपेक्षा ३२९ चरकाति तारे नये थे और इनमे से ३० प्रतिशत अर्थात् ९९ तारे स्वय हेलेन सॉयर ने खोज निकाले थे।

सन् १९५७ मे पूर्ण प्रोफेसर के पद पर नियुक्त करके टोरटो विश्वविद्यालय ने तो हेलेन सॉयर को सम्मानित किया ही था, उसे और भी अनेक प्रकार से सम्मानित किया गया। सन् १९५५ मे राष्ट्रीय विज्ञान-सस्थान ने उससे अपने खगोल-विज्ञान-कार्यक्रम का निदेशन करने के लिए कहा। यह एक ऐसा सम्मान था जिसे प्राप्त करनेवाली वह एकमात्र महिला है। सन् १९५७ मे कनाडा की रॉयल एस्ट्रोनोमिकल सोसाइटी ने उसे अपना अध्यक्ष निर्वाचित किया। सन् १९५८ मे माउट होलयोक ने उसे विज्ञान मे सम्मानसूचक डाक्टरेट की उपाधि प्रदान की। सन् १९५८ मे वह दो हफ्तो के लिए सोवियत विज्ञान अकादमी की अतिथि वनकर मास्को गई। वहा वह अतर्राष्ट्रीय एस्ट्रोनोमिकल यूनियन के प्रतिनिधि और सदस्य के रूप मे गई थी, और गोल तारा-गुच्छो के चरकाति तारको के उप-आयोग की अध्यक्ष भी वनाई गई थी। उसने वहा सभा-सम्मेलनो व दौरों मे भाग

लिया।

इस सबके बावजूद हेलेन हौग अपने लेखन-कार्य के लिए समय निकाल लेती है। टोरंटो से निकलनेवाले 'डेली मेल' वह 'सितारो के साथ' शीर्षक स्तम्भ मे नियमित रूप से लिखती है। वह अपने बच्चो के बच्चो से हेल-मेल बढाने के लिए भी समय निकाल लेती है, जो उसके ५० वर्ष की आयु प्राप्त करते ही होने शुरू हो गए थे। वह खाली समय मे बुनाई करती है और उसमे 'हेलेन हौग की सलाई से' जैसे पेशेवर बिल्ले लगाती है। वह एक ऐसी वैज्ञानिक महिला है जिसने घर-गृहस्थी और मित्र बनाने की कला का अपने वैज्ञानिक कार्य के साथ बडा सुन्दर गठबन्धन करने मे सफलता प्राप्त की है। उसका जीवन अत्यन्त उत्तरदायित्वपूर्ण रहा है जिससे उसमे एक ऐसी मानवीय परिपक्वता आ गई है जो बाल पक जाने-भर से या वैज्ञानिक कार्य-कलाप मे नही आती बल्कि तभी आती है जब शरीर, मस्तिष्क और हृदय—या आत्मा—परस्पर सक्रिय सहयोग देते हैं।

एलिज़ाबेथ शुल रसेल

आनुवशिकी आनुवशिकता के वैज्ञानिक अध्ययन का नाम है, और जब हम एलिजावेथ शुल के परिवार पर गौर करते है तो यह देखकर आश्चर्य होता है कि इसे आनुवशिकीविज्ञ वनाने मे इस आनुवशिकता का कितना वडा हाथ है। उसका पिता आनुवशिकीविज्ञ था और फार्मिग करनेवाले उसके परिवार के छ लडकों मे से पाच लडके जीव-वैज्ञानिक थे। उसकी मा (कुमारी वर्कले) ने प्राणिविज्ञान मे एम० ए० किया था और डा० शुल से विवाह करने के पूर्व कई वर्षों तक यह विपय पढाया भी था। उनके दोनो वच्चो मे, एलिजावेथ तो प्राणिविज्ञ हो गई और आगे चलकर अपने पिता की तरह आनुवशिकीविज्ञ वनी, और उसका भाई अपने मामा ओलीवर की तरह भौतिकीविद् वना। वर्कले और शुल परिवारो को देखने पर साफ पता चल जाता है कि वैज्ञानिक प्रतिभा की 'परिवार मे प्रचुरता थी।'

फिर भी आनुवशिकीविज्ञो का कहना है कि अनुवशिकता के अलावा पर्यावरण का भी हमारे भविष्य-निर्धारण मे वहुत हाथ रहता है। एलिज़ावेथ शुल का प्रारम्भिक पर्यावरण कुछ ऐसा था कि उसे प्राणिविज्ञान की वजाय वनस्पतिविज्ञान की ओर जाना चाहिए था। वनस्पतिविज्ञान और प्राणिविज्ञान जीवविज्ञान के दो मुख्य भेद है जिनमे से आनुवशिकीविज्ञ प्राय पहले को ही चुनता है। जव वह दस-ग्यारह वर्ष की थी और स्कूल मे पढती थी तव वह पौधो और जीवो—दोनो मे ही रुचि लेती थी। इन्ही दिनो एक वार गर्मियो की छुट्टियो मे उसने अपने घर से नजदीक ही एक वनभूमि मे फूलनेवाले सभी पौधो का सर्वेक्षण किया था और हर पौधे का परीक्षण करते हुए उनकी जातियो की पहचान भी की थी। तव उसने

अपनी मा की कुशल देख-रेख मे हर पौधे को दवाकर आरोपित कर दिया। इस प्रकार, उसके पास एक प्रदर्शनीय उद्भिजालय (Herbarium) हो गया, जिसकी ज़रूरत उसे कुछ साल बाद पडी जबकि वह हाई स्कूल जूनियर छात्रा थी, और पहली बार उसने जीवविज्ञान को अपना विषय चुना था।

एलिजाबेथ का हाई स्कूल तक का छात्र-जीवन ऊचे स्तर के अमरीकी हाई स्कूलो की अन्य छात्राओ के समान ही था। कोई विशेषता थी तो यह कि वह अपने सहपाठियो से उम्र मे एकाध साल छोटी थी, उसका जन्म एन आरबर मे हुआ था। उसके पिता मिशिगन विश्वविद्यालय मे प्राणिविज्ञान के प्रोफेसर थे। इस विश्वविद्यालय के कर्मचारियो के बच्चे प्राय इसकी ओर से चलनेवाले एक हाई स्कूल मे पढते थे। एलिजाबेथ का सौभाग्य था कि इस स्कूल मे उसे एक ऐसे शिक्षक से पढने का अवसर मिला, जो विषय-ज्ञान के साथ-साथ अपने विद्यार्थियो को ज्ञान-प्राप्ति का तरीका भी सिखाते थे। जीवविज्ञान पढाते समय प्रोफेसर फ्रैंसिस डी० कर्टिस अपने छात्रो मे विषय के प्रति एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने की आदत डालने का प्रयत्न करते थे। होता यह था कि पहले एक परिकल्पना ले ली जाती और फिर उसमे निहित उपादानो के बारे मे अपने-अपने ज्ञान के आधार पर हर विद्यार्थी अनुमान लगाता कि परिणाम क्या होगा? तब उस समस्या का क्रमिक अध्ययन किया जाता ताकि हर विद्यार्थी दी गई परिकल्पना को सिद्ध या खण्डित करना सीख सके, उदाहरणार्थ

प्रश्न पूछा जाता था—रोटी पर फफूद क्यो आती है? अपने अनुभव के आधार पर एक विद्यार्थी बताता कि फफूद के लिए सीलन आवश्यक है, कोई दूसरा विद्यार्थी कहता कि तापमान मे परिवर्तन आए बिना रोटी नही फफूद सकती। तीसरा सोचता कि रोटी पर फफूद आने का कारण यह है कि वह खुली रख गई थी। इसी प्रकार चौथा छात्र कहता कि रोटी तभी फफूद सकती है जबकि बाहर से आए फफूद के ऑरगेनिज्म उसमे पहले से ही मौजूद हो। छात्रो के ये सब सुझाव एक परिकल्पना-रचना का रूप धारण कर लेते, और तब प्रयोगात्मक परीक्षण शुरू हो जाते।

रोटी के यथासभव बराबर-बराबर टुकडे कर लिए जाते थे। उनमे से कुछ टुकडो को सूखा रखा जाता था, उन सूखे टुकडो मे से कुछ को प्रकाश मे खुला रख दिया जाता था, और कुछ को अधकार मे; कुछ टुकडो को गीला कर लिया

जाता था और उनमे से कुछ को प्रकाश मे रख दिया जाता था, कुछ को अधकार मे; दूसरे सूखे और गीले टुकडो को पहले एक फफूदी हुई रोटी के पास, और फिर प्रकाश या अधकार मे खुला रख दिया जाता था। इन्हीके बराबर सूखे या गीले प्रकाश या अन्धकार मे खुले रखे हुए टुकडो को वन्ध्या स्थिति मे रखा जाता था—और इसी प्रकार अन्य स्थितियो मे रखा जाता था। इस प्रकार के परीक्षणो से अन्त मे छात्रो को ठीक-ठीक पता चल जाता था कि रोटी पर फफूद क्यो आती है। और फिर, प्रो० कर्टिस बराबर इसी बात की कोशिश करते थे कि जहा तक मुमकिन हो, उनके छात्र अपनी शकाओ का समाधान खुद ही करें।

इस प्रकार, चौदह-पन्द्रह वर्ष की अवस्था मे ही एलिजावेथ शुल ने जीव-विज्ञान की कक्षा मे वैज्ञानिक पद्धति की एक बुनियादी तकनीक सीख ली थी—कि पहले एक परिकल्पना ले लो और तब उसे सही या गलत साबित करो। जर्मनी से स्वीडन भाग आने के बाद लाइज मेट्नर ने भी नाभिकीय भौतिकी के अपने अनुभव के आधार पर ऑटो हैन की प्रयोगशाला मे हुई परमाणु-विखण्डन-सबधी घटना का विश्लेषण करते हुए इसी तकनीक का विशद उपस्थापन किया था। डा० मेट्नर ने यह परिकल्पना की थी कि परमाणु का विखण्डन हो चुका है, और फिर अपनी परिकल्पना की पुष्टि मे अनेक वैज्ञानिक तर्क भी उपस्थित किए थे। तब अमरीका की अनेक प्रयोगशालाओ मे प्रायोगिक परीक्षण किए गए, और उसकी परिकल्पना को सही सिद्ध करनेवाले अनेक प्रमाण मिल गए। प्रो० कर्टिस द्वारा अपने छात्रो को सिखाया गया यह तरीका आज की शिक्षा-प्रणाली के सही या गलत, सच या झूठ का अनुमान के खेलो से बिलकुल भिन्न था। आजकल छात्र तर्कना-शक्ति को बढानेवाली प्रक्रियाओ को सीखे बिना ही अनुमान लगाने लगता है, और उसके पचास फीसदी अनुमान सही भी निकल आते हैं, चाहे विषय के बारे मे उसका ज्ञान कितना ही अधूरा क्यो न हो।

जब वह सिर्फ सोलह वर्ष की थी, और कॉलेज जाने की तैयारी मे थी, तभी एलिजावेथ शुल ने किसी माध्यमिक स्कूल मे अध्यापन-कार्य करने का निश्चय कर लिया था। छुट्टियो मे ग्रीष्म-शिविरो मे प्रकृति के अध्ययन ने पौधो और जीवो मे उसकी रुचि को न केवल बनाए रखा, बल्कि इस विषय मे उसकी रुचि को बढाया भी। प्रकृति का यह अध्ययन उसके कार्यक्रम का एक अग था। हाई स्कूल मे एक ऐसी घटना घटी जिसने प्राणिविज्ञान मे उसकी रुचि और भी बढा दी। प्रो० कर्टिस

के पर्यवेक्षण मे उसने जीवविज्ञान से सबद्ध एक प्रयोग के लिए तालाब के रुके हुए पानी मे ऊपर से कुछ काई (Scum) जमा की। इस काई से उसने एक सवर्धन (Culture) तैयार किया ताकि वह उसमे पाए जानेवाले विभिन्न जीवो का अध्ययन कर सके। उसे ज्ञात था कि तालाब की काई मे पौधो और प्राणियों—दोनो के ही ऑरगेनिज्म होते है। इस सवर्धन को उसने चावल और माड खिलाया। एक महीने बाद उसमे बहुत-से पैरामीशिया उत्पन्न हो गए। पैरामीशिया एककोशीय ऑरगेनिज्म है जो दो भागो मे विभक्त होकर जनन करता है। हर घटे के बाद वह इन सूक्ष्म ऑरगेनिज्मो को अपने अणुवीक्षण-यत्र से देखती रहती थी अन्त मे वह पुलक-भरा क्षण भी आया जबकि उसने एक पैरामीशिया को दो भागो मे विभक्त होते देखा। जो पहले एक जीवित कोश था, अब दो जीवित कोशो मे परिणत हो गया था। स्कूल मे पढनेवाली एक बालिका के लिए यह एक चमत्कार से कम नही था। वह इसे कभी नही भूली।

इस अनुभव ने विषय-चयन के मामले मे उसकी रुचि को कहा तक प्रभावित किया, यह तो कहना कठिन है, लेकिन जब वह मिशिगन विश्वविद्यालय मे दाखिल हुई तो उसने प्राणिविज्ञान और सामान्य विज्ञान को प्रमुख और रसायन और गणित को गौण विषयो के रूप मे लिया। हाई स्कूल की ही भाति आगे भी वह खूब मन लगाकर पढती रही और सभी विषयो मे अच्छे अक प्राप्त करती रही। उसने वनस्पतिविज्ञान मे भी दो कोर्स पास किए और दोनो वर्ष गर्मियो की छुट्टियो मे एक शिविर मे कौन्सलर की हैसियत से 'प्रकृति का अध्ययन' विषय को पढाया भी। विश्वविद्यालय के जीवविज्ञान-केंद्र मे दो वर्ष गर्मियो मे और रहने पर उसे पता चला कि जीवो पर काम करना कितना आकर्षक हो सकता है, पौधो की अपेक्षा जीवो की गतिविधिया कही अधिक है, और उनके भेद-उपभेद भी बहुत अधिक है। वह जीवो को इसलिए प्यार करती थी कि उनमे जीवन है। सभवत. इसी कारण जीवन-भर प्रयोगशाला मे इन जीवो का अध्ययन करने का निर्णय लेने मे वह सकुचाती थी। वह एक करुणार्द्र मानवी है और कोई आश्चर्य नहीं यदि उनके अवचेतन मे जीवित जीवो की प्रयोगशाला मे चीर-फाड करने मे इतनी अधिक हिचक रही हो कि इसके कारण जल्दी ही वह इस बात का निर्णय न कर पाई हो कि उसकी रुचि किस विषय मे सबसे अधिक है।

जो हो, सन् १९३३ मे जब कुमारी शुल 'फाई बीटा कैप्पा' की सदस्यता, और

प्राणिविज्ञान मे विशेप योग्यता के साथ मिशिगन विश्वविद्यालय से स्नातक हुई तब भी उसका विचार जीवविज्ञान पढाने का ही था। अपने पिता की सलाह मानकर उसने कोलविया विश्वविद्यालय मे प्राणिविज्ञान मे एक वर्ष स्नातकोत्तर अध्ययन के लिए मिलनेवाली एक छात्रवृत्ति के लिए प्रार्थनापत्र भेज दिया, और वह स्वीकृत भी हो गया। इस छात्रवृत्ति से कोलविया विश्वविद्यालय मे उसके रहने व खाने की मुफ्त व्यवस्था हो गई। इस एक वर्ष के अरसे मे कुछ ऐसी वात हुई जो सामान्यतया विज्ञान के छात्र के जीवन मे कुछ पहले हो जाती है—ऐसी वात जिसके होने पर भावी वैज्ञानिक तुरत पहचान लेता है कि उसकी रुचि का क्षेत्र कौन-सा है, कौन-सा नही। कोलविया मे पहली वार कुमारी शुल ने सैद्धान्तिक आनुवशिकी पर कार्य किया। जव वह मिशिगन विश्वविद्यालय मे पढती थी तो उसने आनुवशिकता का कुछ अध्ययन किया था, जिसमे उसने पढा था कि आनुवशिक विशेपताओ को सचरित करने मे जीने (Genes) क्या कुछ कर सकती है। यह विपय उसे अपनी रुचि के अनकूल प्रतीत हुआ था किन्तु ऐसा नही लगा था जिसे छोडा ही न जा सके। कोलविया मे अपने अध्ययन-काल मे उसका ध्यान आनुवशिक विशेपताओ के पीढी-दर-पीढी सचरण पर नही, वल्कि किसी एक जीव के जीवकाल मे "प्रभाव उत्पन्न करने मे जीनो द्वारा अपनाई गई शरीर-क्रियात्मक प्रक्रियाओ" पर केंद्रित रहा।

यह सव कैसे हुआ, यह उसीके शव्दो मे सुनिए "मैंने शिकागो विश्वविद्यालय के सैवल राइट द्वारा लिखित कुछ लेख पढे, जिनमे उन्होंने उन शरीर-क्रियात्मक प्रक्रियाओ का पता लगाने का प्रयत्न किया था जिन्हे कुछ जीनें आनुवशिकता से निर्धारित होने वाली विशेपताओ को उत्पन्न करने मे अपनाती हैं। इस विषय ने मुझे जकड लिया, इससे पहले किसी और विषय मे मेरी इतनी रुचि कभी नही हुई थी। उस वर्प वसत मे एम० ए० करते-करते मैं निश्चित रूप से समझ गई कि मुझे एक आनुवशिकीविज्ञ वनना है, और इसी ध्येय की प्राप्ति करने मैं डा० राइट के पास शिकागो के लिए चल पडी।"

अगले तीन वर्पों मे उसने शिकागो विश्वविद्यालय मे अध्ययन किया और साथ ही डा० राइट के विभाग मे शोध सहायक के रूप मे काम भी किया। वह इन तीन वर्षो के अनुभव को 'अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अनुभव' वताती है। उसके शव्दो मे यह एक ऐसा काल-खड था जिसने उसके जीवन को उचित दिशा दी। डा० राइट

गिनी पिग (Guinea Pig) की रजकता (Pigmentation) का अध्ययन कर रहे थे, और उन प्रक्रियाओ का निरूपण करने का प्रयत्न कर रहे थे जिनके द्वारा जीनें उन सुअरो के चर्म मे विभिन्न रग पैदा कर देती है। ये सभी रग—काला, भूरा, गहरा (कुछ चपई छटा लिए हुए) लाल, मीठा, पीला, चितकवरा आदि तथा वर्णहीन जीवो जैसा सफेद आदि—कुछ जीनो के कारण उत्पन्न होते हैं, और ये सब जीनें सतान को अपने जननी-जनक से मिलती है। वह इस बात का पता लगाने की कोशिश कर रहे थे कि जीने रग पैदा करने का अपना यह काम कैसे संपन्न करती हैं, अर्थात् ऐसा करते समय वे किन शरीर-क्रियात्मक प्रक्रियाओ से गुजरती हैं।

एलिजावेथ शुल के यहा आकर अपना काम शुरू करने से पहले इतना तो मालूम हो चुका था कि जीनें रग के मूल रूप का निर्माण करती हैं, और उसे वहीं जमा कर देती हैं, क्योकि गिनी पिग के बालो के झडने और नये बालो के उगने के बावजूद रग क निशान जिन्दगी-भर ज्यो के त्यो रहते हैं। यह भी पता लगाया जा चुका था कि यदि किसी चित्तीदार गिनी पिग की काली खाल काटकर सफेद खाल पर और सफेद खाल काटकर काली खाल पर लगा दी जाए, तो भी काली खाल से काले और सफेद से सफेद बाल उगते रहते है, यद्यपि इस प्रतिरोपित खाल के हर टुकडे के चारो तरफ विरोधी रग के बाल उपजानेवाली खाल रहती है। इतना तो पता था कि यह होता है, लेकिन यह किन प्रक्रियाओ से सभव होता है, यह अभी तक एक रहस्य बना हुआ था, और इस रहस्य ने शीघ्र ही एलिजावेथ शुल को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया।

जब यह सवाल उठा कि वह किस विषय पर काम शुरू करे और डाक्टरेट की उपाधि के लिए किस विषय पर शोध-प्रबन्ध लिखे, तो उसने रजकता की एक समस्या पर शोध करने का निर्णय किया। उसने अपना काम डा० राइट के निर्देशन मे किया। इस कार्य मे उसे रॉकफेलर संस्थान की ओर से कुछ आर्थिक सहायता भी मिल गई। उसके शोध-कार्य का उद्देश्य गिनी पिग के चर्म-रगो मे कुछ जीनो के प्रभाव की ठीक-ठीक माप-तोल करना था। उसके इस शोध-कार्य को समझना सामान्यजन के बस के बाहर की बात है किन्तु उसमे एलिजावेथ शुल को इतना काम करना पडा—गिनी पिग के बालो मे मैलेनिन (रगोत्पादक पदार्थ) का रासायनिक पृथक्करण, इसे तोलना; अनेक विभिन्न वर्ण-प्रगाढताओवाले सीपिया, हल्के

सीपिया, लाल और पीले गिनी पिग के वालो मे मौजूद मैलेनिन के परिणामो की तुलना करना, और इस प्रकार, अनेक विभिन्न जीवो के प्रभावो का निर्धारण करना जो रजकता की स्थानीय प्रक्रिया मे परस्पर मिथ क्रियाशील (Interacting) रहती हैं। इस अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर उसने जो शोध-प्रवध प्रस्तुत किया उसपर सन् १९३७ मे उसे पी-एच० डी० की उपाधि प्रदान की गई। इस प्रवध को पढने पर पता चलता है कि यह शोध-ग्रथ वास्तव मे सम्मान के योग्य है।

शोध-कार्य का यह लवा मिलसिला चल ही रहा था कि एलिजावेथ शुल ने अपने एक सहपाठी प्राणिवैज्ञानिक-आनुवशिकीविज्ञ से शादी कर ली। उसका शोध-प्रवध एलिजावेथ शुल के शोध-प्रवध से कुछ ही महीने पूर्व पूरा हुआ था, और वह वार हारवर चला गया था जहा उसकी नियुक्ति रॉस्को वी० जैक्सन मैमोरियल लैवोरेटरी मे अनुसधान-वैज्ञानिक के पद पर हो गई थी। यह सस्थान अभी नया ही था और उस समय इसकी आर्थिक स्थिति थोडे-से ही वैज्ञानिको को नियुक्त करने योग्य थी। उन दिनो, और आज भी इस सस्थान का मुख्य उद्देश्य स्तनधारियो के आचरण और वीमारियो मे आनुवशिकता के योगदान का अध्ययन था। उन दिनो इस सस्थान के वजट मे इतनी गुजाइश नही थी कि डा० एलिज़ावेथ शुल रसेल को भी तनख्वाह पर काम दे सके, लेकिन जव एलिजावेथ ने पी-एच० डी० कर लिया तव उसे उसी प्रयोगशाला मे एक स्वतत्र अनुसधाता के रूप मे शोध-कार्य करने की सव सुविधाए प्रदान कर दी गई जिसमे उसका पति साधारण वेतन पर काम कर रहा था।

जैक्सन लैवोरेटरी अर्वुदो की ग्रहणशीलता के आनुवशिक पक्षो के अनुसधान पर विशेष वल देती थी। वहा पहुचने के कुछ ही दिन वाद एलिज़ावेथ रसेल को एलिज़ावेथ पेम्वरटन नर्स फेलोशिप मिल गई। उसे यह फेलोशिप अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ यूनिवर्सिटी वीमेन ने फल-मक्खी मे अर्वुद-उत्पत्ति की शरीर-क्रियात्मक आनुवशिकी का अध्ययन करने के लिए दी थी, जीनो के वारे मे मनुष्य जो कुछ जान सका है वह वहुत कुछ इसी मक्खी के अध्ययन के कारण सभव हो सका है। स्वाभाविक था कि उसने अपने अध्ययन के लिए 'मेले नॉटिक' नामक अर्वुद चुना। इस अर्वुद को यह नाम इसलिए दिया गया क्योकि वह मैलेनिन के असा-मान्य परिमाण मे जमा होने से सभव होता है।

इस फेलोशिप से मिलनेवाली १९५० डॉलर की रकम से वह इन अर्बुदो की दुर्दम्य अथवा अदुर्दम्य प्रवृत्ति के बारे में स्थापित कुछ परिकल्पनाओ को सिद्ध और कुछ को खडित करने मे सफल हुई। इसके अलावा उसने फल-मक्खी मे होने-वाले इन अर्बुदो की उत्पत्ति पर प्रभाव डालनेवाली कुछ जीनो के स्थान का भी पता लगाने मे सफलता प्राप्त की। इस शोध-कार्य के पूरा होने व प्रकाशन-योग्य होने के बीच के समय मे एलिजाबेथ रसेल की रुचि चूहो के चर्म के रग मे हो चुकी थी। इसके अलावा वह जैक्सन लैबोरेटरी मे अनुसधान के लिए पलनेवाले चूहो के विभिन्न अत प्रजात प्रभेदो (Inbred strains) की दूसरी विशेषताओ के अध्ययन मे भी रुचि लेने लगी थी। लेकिन उन दिनो उसके सामने इससे भी कही अधिक जरूरी एक और काम आ पडा था—स्वय अपने परिवार का लालन-पालन। सन् १९४०-४६ के अरसे मे वह तीन लडको और एक लडकी को जन्म दे चुकी थी, और इस अरसे मे प्रयोगशाला के लिए वह बहुत कम समय निकाल सकी थी। फिर भी एक स्वतन्त्र अनुसधाता के रूप मे वह यत्किंचित् वैज्ञानिक शोध-कार्य करती ही रही, और अपने चौथे और अतिम बच्चे के जन्म के बाद फिनलो हॉवेल रिसर्च फेलोशिप की ओर से मिलनेवाली २५०० डालर की रकम की सहायता से सन् १९४७ मे उसने उत्परिवर्ती (Mutant) चूहो के ३६ विभिन्न प्रकारो की रंज-कता-कणिकाओ का अपना व्यापक अध्ययन-कार्य पूरा कर लिया। इस अध्ययन के दौरान रजकता की प्रक्रियाओ पर कुछ जीनो के प्रभाव का अपेक्षाकृत स्पष्ट चित्र उभरकर उसके सामने आया।

तब उसे लगातार दो महान विभीषिकाओ का सामना करना पडा—एक पारिवारिक संकट, जिसके कारण छोटे-छोटे चार बच्चो को पाल-पोसकर बडा करने के लिए वह अकेली रह गई, और दूसरी माउट डेज़र्ट का दावानल जिसने रोस्को बी० जैक्सन मेमोरियल लैबोरेटरी को बिलकुल नेस्तोनाबूद कर दिया। इस समय उस लैबोरेटरी मे वेतन-भोगी अनुसधान-सहयोगी के पद पर उसकी नियुक्ति हुई थी। सन् १९४७ के उस भयकर अग्निकाड मे सब कुछ जलकर नष्ट हो गया, सिर्फ वे कुछ उपकरण और उस समय चल रहे अनुसधान-कार्य के वे रिकार्ड बच सके जो लैबोरेटरी के कर्मचारियो के घरो मे थे।

लैबोरेटरी को सबसे बडी क्षति अपने जीवो के जल जाने से पहुची। एक भी चूहा नही बचा · ९०००० चूहे आग मे जल मरे। इनमे से अधिकाश चूहे मानसिक

(Standerdized) प्रभेदो के थे, जिनकी अधिकांश वशावली सावधानीपूर्वक सुरक्षित रखी गई थी। इस अग्निकाण्ड से उन दूसरे सैकडो सस्थानो को भी अपार क्षति पहुची जहा कि चूहो और मनुष्यो मे पाई जानेवाली अनेक समानताओ के कारण इन चूहो का प्रयोग आयुर्विज्ञान-अनुसधान (Medical research) के लिए किया जा रहा था। चूहे स्तनधारी जीव है जो मनुष्यो की भाति अपने वच्चो को दूध पिलाते है। वे कशेरुकी (Vertebrate) जीव है जिनकी अस्थि-सरचना वहुत कुछ मनुष्यो जैसी होती है। उनका रक्त गरम होता है और लाल रुधिर कोशाणु भी मनुष्यो जैसे ही होते है, उनके अत स्रावी तन्त्र मानवीय तत्रो जैसी ही क्रियाए करते है। इन सव समानताओ के कारण वैज्ञानिको के लिए अनुसधान की दृष्टि से चूहो का वहुत अधिक महत्त्व है।

इसके अलावा कुछ ऐसी वीमारिया है जिनके प्रति ये नन्हे जीव और मनुष्य समान रूप से ग्रहणशील हैं, मनुष्यो की ही भाति ये भी इन वीमारियो के प्रति अपनी ग्रहणशीलता या कडा प्रतिरोध अपने वच्चो, और उनके भी वच्चो को विरासत मे दे जाते है। जैक्सन लैवोरेटरी घरो मे पाए जानेवाले चूहो के अत -प्रजात प्रभेदो को उत्पन्न करके विज्ञान के क्षेत्र मे विशेप योगदान दे रही थी। इन प्रभेदो मे से प्रत्येक चूहे मे कैंसर, रक्तक्षीणता, अत्यधिक स्थूलता, या अन्य ऐसी कोई वीमारी पैदा कर दी जाती थी जो प्रयोगशाला के वैज्ञानिक चाहते थे। प्रयोगशाला मे स्थित सभी प्रभेदो का हर चूहा अपने दूसरे सैकडो भाई-वहनो से मिलता-जुलता था, जैसे समरूप जुडवा (Identical Twins) होते है। ससार के अनेक भागो मे अनेक वैज्ञानिक पहलेवाले चूहे के समरूप जुडवा मगाने के लिए जैक्सन लैवोरेटरी पर ही निर्भर रहते थे। वे जानते थे कि लैवोरेटरी से उन्हे ऐसे चूहे मिल सकते है जो उन चूहो के समरूप है जिनसे उन्होने अपना अनुसधान प्रारभ किया है। और अचानक, चन्द घण्टो के भीतर ही, इस लैवोरेटरी मे यत्नपूर्वक रक्षित, वशावली-सहित, विधिवत लेविल लगे चूहो मे से एक भी नही वचा। अव ऐसे चूहे कहा से मगाए—ससार के सभी भागो मे इस अपार क्षति को महसूस किया गया।

नई लैवोरेटरी की इमारत वनने से भी पहले लैवोरेटरी के इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग के पुनर्निर्माण की शुरुआत की गई और यह काम एलिज़ावेथ रसेल को सौपा गया। ससार के विभिन्न भागो मे स्थित शोध-केन्द्रो से वशावली-

युक्त, लेबिल-सहित चूहे वार हारवर वापस आने लगे ताकि जैक्सन लैवोरेटरी का पुर्ननिर्माण हो सके। सौभाग्य से चूहे जल्दी ही, और तेज़ी से पैदा होते है—गर्भाधान के सिर्फ १६ दिन वाद चूहे पैदा हो जाते है। एक साल की उम्र तक एक चुहिया प्राय आठ वार, और एक वार मे कई-कई वच्चे दे देती है। लेकिन अत -प्रजात प्रभेदो का पुर्ननिर्माण ऐसे चूहो की कमी के कारण वहुत छोटे पैमाने पर शुरू करना पड़ा, और इतने वड़े पैमाने पर इन चूहो का उत्पादन करने मे एक वर्ष से भी अधिक का समय लग गया कि इन्हे अनुसधान-कार्य के लिए भेजा जा सके। हा, सन् १९५० के अत तक लैवोरेटरी मे अत प्रजात चूहो की सख्या आग से पहले की सख्या से भी अधिक हो गई।

डा० एलिजावेथ रसेल ने इस दिशा मे आग के वाद के दस वर्षो मे जो काम किया और जिसे वह सामान्यतः विज्ञान के क्षेत्र मे सेवा-कार्य समझती है, और अपने निजी वैज्ञानिक कार्य से वाहर की चीज मानती है, उसका कुछ अन्दाज़ इन कुछ आकडो से लगाया जा सकता है सन् १९५७ मे जैक्सन लैवोरेटरी में ३,००० चूहे प्रतिदिन उत्पन्न किए जाते थे—हर चूहे की आनुवशिकता का पता लगाकर उसका विस्तृत रिकार्ड रखा जाता था, ६७ विभिन्न प्रभेद थे, इनमे से २८ अत प्रजात प्रभेद थे, हर प्रभेद के चूहे मानकित और समरूप थे, हर सप्ताह ७,५०० और इस प्रकार, प्रतिवर्ष लगभग ४,००,००० चूहे लैवोरेटरी से वाहर भेजे जाते थे। इनमे से वहुत-से चूहे केनिया से लेकर कोरिया और दक्षिण अर्जेण्टाइना से लेकर उत्तर यूरोप के २२ देशो की छ सौ प्रयोगशालाओ मे हवाई जहाज द्वारा भेजे जाते थे। वार हारवर-स्थित इस लैवोरेटरी मे चूहो की आवादी लगभग दस लाख थी, और इन चूहो की इतनी अधिक माग थी कि इस आवादी को दुगुना कर देने की तैयारी की जा रही थी।

डा० रसेल यह सब काम कर जरूर रही थी किन्तु मूलत वह शरीर-क्रियात्मक आनुवशिकीविज्ञ थी और जैसे ही नई इमारत मे जगह मिली, उसने अपनी खोज नये सिरे से शुरू कर दी, जिसका उद्देश्य उन शरीर-क्रियात्मक प्रक्रियाओ पर प्रकाश डालना था जिनसे गुजरकर जीनें अपना प्रभाव डालती है। उसने रक्तजनना पर नये सिरे से शोध-कार्य प्रारम्भ किया। इनमे से कुछ खोजो मे डा० विल्लीस के० सिल्वर्ज नामक एक युवा शरीर-क्रियात्मक आनुवशिकीविज्ञ ने उसका साथ दिया। इन खोजो मे चूहो के भ्रूण की एक विशेप रग के वाल उगानेवाली खाल

एक ऐसे नवजाति चूहे को लगा दी गई जिसकी खाल से एक दूसरे ही रग के वाल पैदा होते थे। तव यह देखा गया कि रग पैदा करनेवाले 'ट्रिगरिंग मेकेनिज्म' रजकता उत्पादक कोशाणुओ मे नही वल्कि वालो के कूपो (Follicle) मे काम करते हैं। इस खोज से जीनो की क्रिया पर नया प्रकाश पडा।

चूकि चर्म की रजकता को प्रभावित करनेवाली कुछ जीने रुधिर की रचना और जनन-कोशिकाओ को वृद्धि को भी प्रभावित करती है, इसलिए स्वाभाविक था कि डा० रसेल का ध्यान आनुवशिक रक्तक्षीणता, और चूहो की अनुर्वरता पर गया। सामान्य चूहो का रुधिर बनानेवाला ऊतक (Tissue)ऐसे चूहे को लगा दिया गया जिसमे रक्तक्षीणता का रोग उत्पन्न किया गया था। इस प्रकार पता चला कि रक्तक्षीणता उत्पन्न करनेवाली जीनो का प्रत्यक्ष प्रभाव शरीर के अन्य भागो के कोशाणुओ पर न पडकर रुधिर बनानेवाले कोशाणुओ पर पडता है। डा० रसेल ने यह खोज डा० कर्ट आर्टमन के सहयोग मे की थी। अव उसने एक और खोज की जिसने लगभग सौ वर्षों से वैज्ञानिको मे अनुर्वरता की एक समस्या को लेकर चले आ रहे विवाद को प्राय अतिम रूप से निवटा दिया। यह खोज उसने एक भ्रूण वैज्ञानिक डा० बीट्रिस मिंट्स के सहयोग मे की थी। यह समस्या इतनी अधिक वैज्ञानिक है कि इसके वारे मे खुलासा तौर पर यहा नही लिखा जा सकता, मगर इसका सम्वन्ध उन जनन-कोशिकाओ के जन्म-स्थान और सक्रमण-मार्ग से है जो सामान्य भ्रूण के आरम्भिक दिनो मे तो सख्या मे वडी तेजी से बढती हैं, किन्तु दोषयुक्त भ्रूणो मे इनकी सख्या-वृद्धि नही होती।

आज भी साधारण जन को सबसे अधिक आनन्द डा० रसेल के उस काम मे आता है जो उसने पेशियो के दुष्पोषण (Dystrophy) के क्षेत्र मे किया। गर्मियो की छुट्टियो मे जैक्सन लैवोरेटरी प्रतिवर्ष अपरेंटिसो के दो वर्गो को दाखिल करती है। पहला वर्ग कॉलेज के विद्यार्थियो का होता है और दूसरा कॉलेज-पूर्व छात्रो का। इन अपरेंटिसो को विज्ञान और उसकी तकनीको मे प्रशिक्षित किया जाता है। चूकि डा० रसेल को अध्यापन मे विशेष आनन्द आता है, इसलिए प्रतिवर्ष गर्मियो की छुट्टियो मे वह इन लोगो के प्रशिक्षण-कार्य मे भाग लेती है। ऐसे ही एक वर्ष गर्मियो की छुट्टियो मे उसने 'फनीफुट' की खोज की। यह एक ऐसा जीव है जो आनुवशिक पेशी-दुष्पोषण का ठीक उसी प्रकार शिकार होता है, जैसे मनुष्य। इस प्रकार, पहली वार एक ऐसा जीव खोज निकाला गया जिसपर इस दिशा मे

परीक्षण किए जा सकते थे।

सन् १६५१ मे वह इन अपरेंटिसो के साथ गर्मियो की छुट्टिया बिता रही थी कि एक दिन उसकी नज़र चूहे के एक बार मे उत्पन्न हुए कई बच्चो पर पडी। उसने गौर किया कि उनमे से एक बच्चा अपना पाव घसीटकर चल रहा था—स्वाभाविक था कि उसे देखते ही डा० रसेल के मुह से 'फनीफुट' निकल पडा। आनुवशिकोविज्ञ बराबर ऐसे जीवो की खोज मे रहते है जो अपने सहजात जीवो से किसी कदर भिन्न हो, लेकिन जब उन्हे ऐसा कोई जीव मिलता है तो अधिकतर उसकी भिन्नता का कारण सभवतः पर्यावरण का विक्षोभ (अल्प पोषक आहार या शरीर-तत्र की कोई क्षति जो वैज्ञानिक शब्दावली मे 'वॉक्स-टॉप डैविएट्स' को जन्म देती है, या किसी अन्य रोग को) होता है। ऐसा बहुत ही कम होता है कि कोई जीन अपना सही अनुकरण न कर पाए और एक नई तरह के, या उत्परिवर्ती जीव को जन्म दे जो इस भिन्नता या परिवर्तन को आनुवशिक रूप से अपने बच्चो मे सचरित कर दे। आनुवशिकीविज्ञ यह नही जानते कि यह 'क्यो' और 'कैसे' होता है, मगर वे इतना जानते है कि उत्परिवर्ती जीव जीन के सिर्फ एक जोड़े मे होनेवाले परिवर्तन के कारण उत्पन्न होते हैं, जबकि ऐसे जीव जो किसी विशेष बीमारी (या ग्रहणशीलता) का शिकार बनने के लिए पाले जाते है उन जीनो के सयोग से उत्पन्न होते हैं जो आनुवशिक प्रवृत्ति को जन्म देती है। इसलिए जब आनुवशिकीविज्ञो की दृष्टि मे कोई उत्परिवर्ती जीव आ जाता है तब वे उसका अध्ययन करके उत्परिवर्तन (Mutation) की प्रवृत्ति और परिणामो के बारे मे अधिक से अधिक जान लेने की कोशिश करते हैं।

उस वर्ष गर्मियो की छुट्टियो मे जब फनीफुट का अभ्युदय हुआ तो डा० रसेल ने अपनी एक अपरेंटिस और स्मिथ कालिज की छात्रा ऐन माइकलसन को यह पता लगाने का भार सौंपा कि इस चूहे मे यह विकार क्यो आया। बाद मे देखा गया कि उस प्रभेद मे जन्म लेनेवाले हर तीसरे-चौथे बच्चे मे यह विकार मौजूद है। जल्दी ही वे इस नतीजे पर पहुचे कि फनीफुट मे आए इस विकार का आधार निश्चित रूप से आनुवशिक है। डा० रसेल के निर्देशन मे मिस माइकलसन ने पहले तो यह निश्चय किया कि इन चूहो मे स्नायविक विकार तो नही है। परीक्षण करने पर पता चला कि ऐसा नही है। लैबोरेटरी के अन्य विशेषज्ञो की सहायता से उसने इन चूहो के न्यूरोएनाटॉमिकल व रोग-विज्ञान-सम्बन्धी परीक्षण भी

किए, और स्मिथ कॉलेज मे अपने सीनियर ईयर का अध्ययन पूर्ण कर लिया। इस अध्ययन का निष्कर्ष यह निकला कि फनीफुट एक आनुवशिक पेशीगत रोग का शिकार है, और उसका यह रोग मनुष्यो को पगु बना देनेवाले दुष्पोषण से बहुत अधिक समानता रखता है।

यह सिद्ध होते ही कि फनीफुट के विकार और मानवो के पेशीगत दुष्पोपण मे समानता है, इस रोग पर अनुसधान करनेवाले वैज्ञानिको ने फनीफुट और उसके सहजात सामान्य वच्चो की माग शुरू कर दी। लेकिन दुर्भाग्य से फनीफुट की बहुत कमी थी। एक तो फनीफुट जल्दी ही मर जाते थे (फनीफुट एक से छ महीने तक का होकर मर जाता था, जबकि उसके सामान्य सहजात डेढ से दो वर्ष तक जीते थे), दूसरे उनमे प्रजनन-क्षमता नही थी। यह समस्या फनीफुट चुहियो की वच्चेदानी सामान्य चुहियो मे लगाकर दूर की गई। ऐसा करने से सामान्य चुहियो से उत्पन्न वच्चो मे फनीफुट की सख्या अनुपातत काफी बढ गई। आज-कल, आयुर्विज्ञान शोध-केन्द्रो मे इन जीवो का प्रयोग हो रहा है, और इन प्रयोगो से इस बीमारी को भली भाति समझ लेने की आशा तो है ही, इस वात की भी आशा है कि एक दिन इस रोग का उपचार ढूढ लिया जाएगा। डा० रसेल पर विभिन्न शोध-सस्थानो मे इन जीवा के भेजने की ज़िम्मेदारी तो थी ही, साथ ही वह यह भी पता लगा लेना चाहती थी कि जीनें इस बीमारी को सचरित कैसे करती है। जैक्सन लैवोरेटरी मे जो अनुसधान-कार्य हुआ, और जिसमे उसने स्वय एक प्रमुख भूमिका निभाई, उससे पता चलता है कि पेशीगत दुष्पोपण अप्रबल (Recessive) जीनो के एक जोडे के प्रभाव के कारण जनक से जन्य मे सचरित होता है।

सन् १९५४ मे वार हारवर स्थित इस लैवोरेटरी ने अपना पच्चीसवा वार्षिकोत्सव मनाया, उस समय डा० रसेल इस लैबोरेटरी के विज्ञान-निदेशक के पद पर थी, और उसने 'पिछले पच्चीस वर्षों मे स्तनधारी-आनुवशिकी और कैंसर के क्षेत्र मे हुई प्रगति' विषय पर एक परिसवाद का आयोजन किया। आनुवशिकी तथा इससे सवद्ध अन्य वैज्ञानिक विषयो मे रुचि रखनेवाले २०० से भी अधिक वैज्ञानिको ने इसमे भाग लिया, उनमे से वहुतो ने निवन्ध भी पढे जिन्हे आगे चलकर डा० रसेल ने सम्पादित किया। इस परिसवाद से उसकी यह इच्छा और भी बलवती हो उठी कि स्तनधारियो की शरीर-क्रियात्मक आनुवशिकी से सवद्ध

सारी सामग्री किसी एक व्यापक ग्रथ मे सकलित होनी चाहिए। सितम्बर सन् १६५८ मे जगनहीम फेलोशिप से मिलनेवाली सहायता से उसकी यह साध पूरी हुई।

इस तरह के काम को हाथ मे लेनेवाले वैज्ञानिक को अपनी प्रयोगशाला के अतिरिक्त, दूसरी प्रयोगशालाओ मे क्या कुछ हो रहा है, किन विचारो और तकनीको को अपनाया जा रहा है—इस बात का भी पता लग जाता है। इससे उसे अपना भावी शोध-कार्यक्रम निर्धारित करने में सुविधा रहती है, जब डॉ० रसेल का यह नया काम पूरा हो जाएगा तो यह उसके अपने निजी प्रयोजन के लिए भी लाभप्रद सिद्ध होगा। इसकी सहायता से जैक्सन लैबोरेटरी मे इस क्षेत्र में स्नातक शोधकर्ताओ के लिए एक कोर्स निर्धारित किया जा सकेगा, लेकिन इसका प्रभाव बहुत दूरगामी होगा। उसने अपने क्षेत्र के बाहर के जिन जीव-रसायनज्ञो और दूसरे वैज्ञानिको से सहयोग लिया है, उनके सम्पर्क मे आकर वह इस नतीजे पर पहुची है कि मानवीय चिकित्सा-समस्याओ के समाधान मे स्तनधारियो की शरीर-क्रियात्मक आनुवशिकी का अध्ययन बहुत कुछ योगदान दे सकता है।

एलिज़ाबेथ रसेल ने एक आनुवशिकीविज्ञ के रूप मे अभी आधा काम ही किया है, अभी लगभग चौथाई सदी का सक्रिय जीवन उसके सामने है। उसका नाम सुप्रसिद्ध है और उसके काम का आदर उसके पूर्ववर्ती शीर्षस्थ सहकर्मी भी करते है। बैठको मे निबन्ध पढने और वाद-विवाद मे भाग लेने के लिए उसे प्राय. निमन्त्रित किया जाता है, और इन बैठको मे मौलिक विचार प्रकट करने के लिए वह विख्यात है। वह अमरीकी विज्ञान और कला अकादमी की सदस्या है। यह सम्मान कुछ गिनी-चुनी महिला वैज्ञानिको को ही नसीब है। वह बर्कले और शुल परिवारो की सन्तान है और अमरीका की वैज्ञानिक प्रगति मे सहयोग देने की अपनी वश-परम्परा को सफलतापूर्वक निभा रही है फिर भी जब उससे पूछा जाता है कि आपके विषय-निर्वाचन मे आपकी जीनो का कितना योग है, तो वह ज़ोर देकर कहती है, "ध्यान देने की बात है कि वैज्ञानिक मा-बाप की सन्तान अक्षर-ज्ञान मे भी पहले यह सीखती है कि विज्ञान एक नितान्त मनोरजक विषय है, और इस बात का उसके विषय-निर्वाचन पर बहुत अधिक प्रभाव पडता है।"

राशेल फुलर ब्राउन

जब राशेल ब्राउन अपने विगत जीवन पर दृष्टिपात करती है तो इस बात पर उसे हमेशा आश्चर्य होता है कि वह कॉलेज मे पढ कैसे पाई ? उसने एक ऐसे परिवार मे जन्म लिया था जिसकी इतनी सामर्थ्य नही थी कि उसकी शिक्षा पर व्यय करने के लिए पैसे जुटा पाता। जब वह छोटी थी तभी उसकी मा अपने दो बच्चो का पालन-पोषण करने के लिए अकेली छोड दी गई, और जल्दी ही यह प्रकट हो गया था कि वह अपनी वेटी राशेल और उसके छोटे भाई की कॉलेज की पढाई का व्यय वहन नहीं कर सकेगी। फिर भी मिसेज़ ब्राउन अपने बच्चो के भविष्य के वारे मे वहुत महत्त्वाकाक्षी थी और जिन दिनो राशेल ब्राउन हाई स्कूल से ग्रेजुएट हो रही थी उन दिनो वे जी-जान से अपनी वेटी के प्रयत्नो को सफल वनाने की कोशिश मे लगी हुई थी। राशेल प्रयत्न कर रही थी कि किसी ऋण, छात्रवृत्ति, पार्ट टाइम काम, या और किसी तरीके से वह माउण्ट होलयोक मे अध्ययन कर सके। अच्छे अको से उत्तीर्ण होने पर उसे एक छात्रवृत्ति मिल गई, इससे उसे सुविधा हुई। तव राशेल की पढाई का उत्तम रिकार्ड देखकर, और कॉलेज मे अध्ययन करने के उसके प्रयत्नो एव दृढ निश्चय से प्रभावित होकर, मिसेज़ ब्राउन की मा की एक धनी सहेली ने राशेल की कॉलेज-शिक्षा की पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। इस भद्र महिला ने राशेल की शिक्षा पर व्यय करने मे इतनी अधिक उदारता से काम लिया कि राशेल माउंट होलयोक मे पढनेवाले अपने सहपाठियो से कम सम्पन्न या सन्तुष्ट नही नज़र आती थी। उसे किसी चीज़ की कमी नही थी—वल्कि वह अपने अनेक सहपाठियो से अधिक सम्पन्न थी।

डा० ब्राउन को यह सब एक चमत्कार-सा लगता है, जैसे किसी करुणार्द्र देवी ने अपनी छडी घुमाई हो और उसके घुमाते ही उसके सिर पर पैसे की बौछार हो गई हो जिससे वह कॉलेज की पढाई पूरी कर सकी, मगर इससे भी बडा अजूबा यह है कि एक दिन वह स्वय अनेक सिरो पर धन बरसानेवाली छडी घुमानेवाली जादूगरनी बन सकी। "मैं कभी इस स्थिति को प्राप्त कर सकूगी, इसका स्वप्न भी नही देखा था," उसका कहना है। उसका यह कथन वास्तव मे सही है। अमरीका मे राजकीय स्वास्थ्य विभाग मे सिविल सर्विस का यह पद स्वीकार करने और उसी-पर बने रहनेवाला विज्ञान का ग्रेजुएट कभी सम्पन्न या खुशहाल नही हो सकता। डा० ब्राउन के जीवन को देखने पर ऐसा लगता है जैसे दौलत उसके लिए इतनी नगण्य चीज़ थी कि जब उसने उसके दरवाज़े पर दस्तक दी तो डा० ब्राउन ने दरवाजा खोलकर उससे 'बैठ जाने' के लिए भी नही कहा।

यह अवसर तब आया जब डा० ब्राउन ने एक नये प्रकार के प्रतिजीवाणु (Antibiotic) का अनुसधान किया। यह नया प्रतिजीवाणु मनुष्यो के लिए इतना अधिक उपादेय था कि इसका अनुसधाता मालामाल हो सकता था। इस अनुसधान के समय वह पचास वर्ष की हो चुकी थी और पिछले पच्चीस वर्षो से अपनी तथा दूसरो की आर्थिक और दूसरी तरह की भारी जिम्मेदारिया निभाती चली आ रही थी। उसकी तनख्वाह सिविल सर्विस के काफी निचले वेतनमान मे शुरू हुई थी, मगर अब काफी ऊपर आ चुकी थी, फिर भी यह वह ज़माना था जबकि सिविल सर्विस मे नियत सबसे अधिक वेतन पानेवाले वैज्ञानिक भी कम वेतन पानेवाले सरकारी कर्मचारी माने जाते थे। फिर भी वह अपनी तनख्वाह से सन्तुष्ट थी और सुखपूर्वक रहती थी। जब यह अनुसधान हुआ तो उसे महसूस हुआ कि उसे अपने लिए और पैसा नही चाहिए।

राशेल ब्राउन का दृष्टिकोण यह है कि "यदि तुम्हारे पास पर्याप्त है तो तुम्हे और अधिक की इच्छा क्यो हो ?" भली भाति समझ-बूझकर और अपने मित्रो और परिचितो के परामर्श का विरोध करते हुए उसने यह फैसला किया कि नाइस्टाटिन का पेटेण्ट कराने के अधिकारो से प्राप्त रायल्टी मे से वह अपने लिए एक भी पैसा नही लेगी। वह नाइस्टाटिन की सह-अनुसधाता थी, दूसरी सह-अनु-संधाता एलिज़ाबेथ हाज़ेन थी, उसने भी रायल्टी से प्राप्त रकम न लेने का फैसला किया।

इसका मतलब यह नही कि डा० ब्राउन या डा० हाज़ेन ने इस विषय में लापरवाही वरती कि नाइस्टाटिन के उत्पादन से होनेवाले उस मुनाफे का क्या हो जो सामान्यतया इस प्रकार की भैषजीय वस्तुओ के अनुसधाता और पेटेंट अधिकारो के मालिक के हिस्से मे आता है। उन्होने इस अनुसधान को पेटेंट कराने, रायल्टी के आधार पर फार्मेस्युटिकल कम्पनियो को नाइस्टाटिन का उत्पादन करने का लाइसेंस देने, व रायल्टी से प्राप्त धनराशि को विज्ञान की सम्यक् प्रगति के लिए खर्च करने का काम रिसर्च कारपोरेशन को सौप दिया। इस प्रकार के काम के लिए रिसर्च कारपोरेशन की सहायता लेने मे कोई विचित्रता नही थी। इस कारपोरेशन की स्थापना सन् १९१२ मे हुई थी, जबकि फ्रेडरिक जी० कौटरेल ने लाखो डालर मूल्य के पेटेंट अधिकार इसे भेंट कर दिए थे। तब से आज तक इस कारपोरेशन ने सैकडो वैज्ञानिको और आविष्कारको के व्यक्तिगत पेटेंट अधिकारो की व्यवस्था की है, साथ ही इसने उन आविष्कारो के पेटेंट अधिकारो की व्यवस्था भी की है जिनके आविष्कारक किन्ही शिक्षण-सस्थानो के कर्मचारी थे और जो उन सस्थानो की सपत्ति वन गए हैं। फिर भी, जव किसी अनुसधान या आविष्कार के पेटेंट अधिकार कोई वैज्ञानिक खुद अपने पास रख लेता है, तो उसे रायल्टी से प्राप्त धनराशि मे एक निश्चित भाग दिया जाता है। यद्यपि कभी-कभी यह प्रतिशत वहुत कम होता है। हाज़ेन-ब्राउन ने नाइस्टाटिन के पेटेंट अधिकारो से प्राप्त होनेवाली रायल्टी में से अपना भाग लेने से इनकार कर दिया।

राशेल ब्राउन की कहानी अमरीकी सफलता की ऐसी कहानी है जिससे मानवो के गुणो पर प्रकाश पडता है और मानव-जाति की सभावनाओ के वारे मे आशा बधती है। उसका जन्म स्प्रिगफील्ड, मैसाचुसेट्स मे हुआ। उसके पिता का व्यवसाय वैब्स्टर ग्रोव्स मे था। उसकी आरम्भिक शिक्षा-दीक्षा यही हुई थी। प्रथम ग्रेड से लेकर ग्रामर स्कूल तक के विद्यार्थी-जीवन मे वह अपने अन्य सह-पाठियो जैसी ही थी, और उसमे किसी असाधारण प्रतिभा के दर्शन नही हुए थे। उसे व उसके कुछ और नन्हे सहपाठियो को एक भूतपूर्व प्रिसिपल के सपर्क मे आने का अवसर मिला। इस महाशय का नाम मि० ओडरडोक था और ये एल्वानी, न्यूयार्क, से रिटायर होकर वैब्स्टर ग्रोव्स मे वस गए थे। मि० ओडरडोक के पास एक सूक्ष्मदर्शी था और विज्ञान तथा नन्हे-मुन्नो मे उनकी विशेष रुचि थी।

अन्य अनगिनत बच्चो की भाति राशेल खटमलो मे रुचि लेने लगी। वैब्स्टर ग्रोव्स मे या उसके आस-पास पाए जानेवाले सभी प्रकार के खटमलो मे उसकी दिलचस्पी हो गई। उसने इन खटमलो का एक सग्रह तैयार किया, और मि० ओंडरडोक ने उसे यह सिखाया कि उन्हे सूक्ष्मदर्शी-स्लाइड पर कैसे लगाया जाता है। उन्होंने उसे अपने पास से सायनाइड की एक बोतल भी दी, और उसे बताया कि अपने नमूनो पर प्रयोग करते हुए "इसे सूघना मत।" इस काम मे उसे बडा मजा आया, और प्रो० ओडरडोक के सूक्ष्मदर्शी के तले की तरह-तरह की चीजे देखने मे भी उसे बडा आनन्द आता था। मगर यह अनुभव बच्चे का खिलवाड था और समय के लिए उसकी बाल-बुद्धि को विज्ञान की तरफ मोडने के अलावा उसके मस्तिष्क पर कोई स्थायी प्रभाव नही छोड सका।

इसके बाद वह अपनी मा और भाई के साथ स्प्रिगफील्ड वापस चली आई और सैंट्रल हाई मे फ्रैशमैन क्लास मे दाखिला ले लिया। उसकी सभी विषयो मे समान रुचि थी और किसी एक विषय-विशेष की ओर उसका अधिक रुझान नही था। सामान्य विज्ञान के एक सीमेस्टर्स कोर्स (अर्धवार्षिक पाठ्यक्रम) के अलावा उसके पास रसायन या भौतिकी विषय नही थे, यद्यपि उसे घर पर रसायन के कुछ प्रयोग करने मे बडा मजा आता था जो वह अपने एक सम्बन्धी से उपहारस्वरूप प्राप्त बसन बर्नर की सहायता से करती थी। जब माउट होलयोक मे विषय चुनने का अवसर आया तो उसने अपने प्रमुख विषय के रूप मे इतिहास को चुना।

लेकिन, कुछ ही दिन बाद, कुछ ऐसा हुआ कि राशेल ब्राउन ने अपना विचार बदल दिया और एक प्रमुख विषय और ले लिया। उसने महसूस किया कि रसायन मे उसकी रुचि बढती जा रही है, और वह उसमे इतिहास से अधिक नही तो उसके बराबर ही आनन्द लेने लगी है। निश्चय ही "यह मुझे पसन्द था, भले इस पसन्द का कारण क्या था, यह बताना मेरे लिए आज भी कठिन है, हो सकता है कि मैं रसायन को उसके व्यवस्थित पैटर्न और सुतथ्यता (Precision) के कारण पसन्द करने लगी होऊ।"

उन दिनो माउट होलयोक का रसायन विभाग श्रेष्ठ था जैसाकि आज भी है। इसकी अध्यक्ष डा० एम्मा कार थीं, जो एक असाधारण प्राध्यापिका थीं। रसायनविभाग की प्राध्यापिकाओ से प्रभावित होकर राशेल ब्राउन ने रसायन को भी अपना प्रमुख विषय चुन लिया और सन् १६२० मे इतिहास व रसायन मे ए०

बी० की डिग्री प्राप्त की। डा० कार ने उसे शिकागो विश्वविद्यालय जाकर एम० एस० करने को प्रेरित किया, और उसी जादू की छडी ने एक साल के इस उच्चतर अध्ययन के लिए फिर पैसा जुटा दिया। लेकिन मिस ब्राउन ने इस बार खुद भी अपनी मदद की। शिकागो विश्वविद्यालय से एम० एस० करते समय वह प्रयोगशाला सहायक के रूप मे नौकरी भी करती रही।

इसके वाद वह अपने पैरो पर खडी हो गई, यद्यपि फिलहाल उसके ऊपर सिर्फ अपनी जिम्मेदारी थी। अपने जमाने की अन्य वहुत-सी उच्च शिक्षित महिलाओ की भाति वह अध्यापिका बनने की तैयारी कर रही थी। वह फैंसिस शिमर स्कूल मे अध्यापिका हो गई। यह स्कूल शिकागो के समीप था और प्रैपरेटरी स्कूल था और उन दिनो लडकियो का जूनियर कॉलेज भी था। किन्तु शीघ्र ही उसने अनुभव किया कि वह इस प्रकार के अध्ययन या रहन-सहन को आजीवन अपनाए नही रह पाएगी। इस स्कूल मे तीन वर्ष पढाने के बाद वह शिकागो विश्वविद्यालय लौट आई। उसे एक फेलोशिप मिल गई थी और अपनी समझ से उसके पास इतना धन था कि वह उससे ऑर्गेनिक रसायन मे पी-एच० डी० के दो वर्ष निकाल सके यद्यपि उसके चाहने पर जादू की वह छडी उसके लिए वडी खुशी से रुपया जुटा सकती थी, मगर अब मिस ब्राउन समझदार हो गई थी और उसने अपने ही पैरो पर खडा होना अधिक पसन्द किया।

इस विन्दु पर आकर उसे अपने जीवन की एक वडी वाधा का सामना करना पडा। उसके पास जो पैसा था वह अधिक से अधिक दो वर्ष चल सकता था, लेकिन दो वर्षो मे डाक्टरेट का सारा काम किया नही जा सकता था। वास्तव मे, उससे जितना काम करने के लिए कहा गया था, वह रसायन मे पी-एच० डी० करनेवाले आम शोधार्थी से कही अधिक था, क्योकि उसने जीवाणु-विज्ञान (Bacteriology) को भी अपना गौण विषय चुना था, और इस विषय मे उसे लगभग उतना ही श्रम करना पडा जितना इस विषय में एम० एस० का छात्र करता है। उन दो वर्षों में उसने कठोर परिश्रम किया, और यह अवधि समाप्त होने तक. अपना सारा काम पूरा कर लिया। उसने सभी कोर्स लिए और उनमें उत्तीर्ण हो गई और अपना शोध-प्रवन्ध भी वाकायदा प्रस्तुत कर दिया। अव सिर्फ उसके शोध-प्रवन्ध की स्वीकृति और उसके वाद की कठिन मौखिक परीक्षा वाकी थी। किन्तु कुछ कारणो से, जिन्हें वह आज तक नही जान पाई, उसके शोध-प्रवन्ध की

स्वीकृति मे विलम्ब हो गया और जब तक स्वीकृति नही मिल जाती, मौखिक परीक्षा कैसे हो सकती थी।

उसे खुद अपना कोई शैक्षिक या अन्य किसी तरह का दोष न नजर आता था। लेकिन जिस बीच वह अपने प्रोफेसर के निर्णय की बेताबी से प्रतीक्षा कर रही थी, उन्ही दिनो दो बाते हुई। उसका पैसा खत्म हो चला था, और अनति-दूर भविष्य मे उसे अपनी मा और दादी के निर्वाह के लिए भी पैसा जुटाना था। एक मित्र की सहायता से उसे एल्बनी-स्थित न्यूयार्क राज्य के स्वास्थ्य विभाग के प्रयोगशाला और अनुसधान विभाग मे सहायक केमिस्ट का पद प्राप्त हो सकता था। उस पद के लिए पी-एच० डी० होना अनिवार्य नही था। परिस्थितियो के दबाव के कारण उसे अपना बोरिया-बिस्तर बाधकर शिकागो को अलविदा कहना पडा। और इस प्रकार उस समय ऐसा लगा कि उसकी पी-एच० डी० का सिल-सिला उसी बिन्दु पर समाप्त हो जाएगा।

सात साल बाद की बात है। तब तक वह काफी महत्त्वपूर्ण कार्य कर चुकी थी और शिकागो मे वैज्ञानिको की एक बैठक मे भाग लेने आई हुई थी कि उसकी मुलाकात उस प्रोफेसर से हो गई जिसकी वजह से उसके शोध-प्रबन्ध की स्वीकृति मे विलम्ब हुआ। इन प्रोफेसर महोदय ने उससे एक हफ्ते शिकागो में रहकर, मौखिक परीक्षा के लिए वह क्षेत्र चुन लेने का सुझाव दिया जिसमें वह पहले से ही शोध कर रही थी, और उसकी तैयारी अच्छी थी। यह सुझाव मानकर वह शिकागो मे रुक गई, मौखिक परीक्षाओ मे उत्तीर्ण हो गई, उसका पूर्व प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध स्वीकृत हुआ, और इस प्रकार, अपनी आशा से सात वर्ष बाद वह पी-एच० डी० हो पाई।

एल्बनी में वह सूक्ष्म जीवो (Microorganisms) के रसायन पर काम कर रही थी। स्वास्थ्य विभाग की इस प्रयोगशाला में किए जानेवाले वैज्ञानिक कार्य मे ये दो काम भी शामिल थे रोग का उपयुक्त निदान करने मे डाक्टरो की सहायता करने के उद्देश्य से उनके द्वारा भेजे गए नमूनो की जाच करना, और बीमारियो पर काबू पाने के लिए वैक्सीन, जीव-विषहर (Antitoxins) तथा सीरम तैयार करना। तब तक पेनिसिलिन का आविष्कार नही हुआ था और न्युमो-निया एक प्राणघातक रोग माना जाता था। उन दिनों न्युमोनिया का इलाज प्रति-सीरम (Antiserum) के इजेक्शन लगाकर किया जाता था और इसमें अधि-

काश रोगी ठीक हो जाते थे। इस काम के विभिन्न प्रकार की सीरमे अपेक्षित थीं क्योकि न्युमोनिया को उत्पन्न करनेवाले जीवाणु, जिन्हे न्यूमोकॉक्सी (Pneumococci) कहते हैं, कई प्रकार के होते है, और जो सीरम एक प्रकार के न्यूमोनिया को ठीक कर सकती थी वही दूसरे प्रकार के न्यूमोनिया मे एकदम बेकार साबित हो सकती थी। डाक्टर चाहते थे कि यह प्रयोगशाला उन्हे यह बताए कि उनके किस मरीज़ को किस प्रकार का न्यूमोनिया है, और फिर उसी हिसाब से वे हर प्रकार के न्यूमोनिया को ठीक कर सकनेवाली मानकित सीरम भी प्राप्त करना चाहते थे।

डा० ब्राउन का काम उस कार्बोहाइड्रेट-विशेष को खीचना था जिससे हर प्रकार के न्यूमोकॉक्सस पहचाने जा सकते थे। इसकी मदद से वह डाक्टरो को दी जानेवाली न्युमोनिया की विभिन्न सीरमो को मानकित करती थी। एल्बनी मे अपने पिछले १५-२० वर्षो मे उमका प्रकाशित शोध-कार्य इन न्यूमोकॉक्सी के रसायन से सम्बन्धित है। नीचे के सक्षिप्त विवरण से समझा जा सकता है कि वह किस प्रकार का काम करती थी

जिस प्रकार के न्यूमोकॉक्सस का अध्ययन करना होता था उसी किस्म के जीवाणु घोडो या खरगोशो के शरीर मे इजेक्शन से पहुचा दिए जाते थे। एक निश्चित समय के बाद इन प्रतिरक्षित (Immunized) जानवरो के शरीर मे से खून लेकर उसका सीरम बनाया जाता था। इस सीरम को, मानकित रूप मे इजेक्शन के द्वारा उन मनुष्यो के शरीर मे पहुचाया जाता था जिनका न्युमोनिया उसी प्रकार के जीवाणुओ के कारण होता था जो इजेक्शन द्वारा उन घोड़ो या खरगोशो मे पहुचाए गए थे। इजेक्शन द्वारा मनुष्य के शरीर मे पहुची सीरम के प्रतिपिण्ड (Antibody) उन न्यूमोकॉक्सी के विरुद्ध सघर्ष करते है जो मनुष्य के जीवन के लिए खतरा पैदा करनेवाले होते है। डा० ब्राउन का काम मरीज़ो के लिए तैयार की जानेवाली विभिन्न सीरमो के मानकीकरण से सम्बद्ध अनेक रासायनिक समस्याओ मे मे कुछ को सुलझाना था।

इस सारे का असली मकसद यह था कि इस प्रयोगशाला मे कोई भी डाक्टर अपने मरीज़ के खून आदि के नमूने का शीघ्र ही विश्लेषण करा सकता था, और तब उस मरीज़ के न्यूमोकॉक्सस १, २, या ८ या जिस किस्म के भी होते (ये न्यूमोकॉक्सस ४० किस्मो के होते है और इनके अन्य उपभेद भी ज्ञात हैं)

उसी किस्म के न्युमोनिया का उपचार करनेवाली वैज्ञानिक पद्धति से तैयार, और मानकित सीरम, जिसपर खुराको की मात्रा भी ठीक-ठीक लिखी होती थी, उसे प्रयोगशाला से अविलव मिल जाती थी। जव पेनिसिलिन का अनुसधान हो गया और उससे न्युमोनिया के अधिकाश (सव तो नही) रोगी ठीक होने लगे तो ये न्युमोनिया सीरमे महत्त्वशून्य हो गई। लेकिन पेनिसिलिन सन् १९४० के पहले जन-साधारण को उपलव्ध नही हो पाया—जवकि इस समय तक डॉ० ब्राउन को एल्वनी प्रयोगशाला मे काम करते-करते १५ वर्ष हो चुके थे।

इस काल मे उसका कार्य न्यूमोकॉक्सी तक ही सीमित नही रहा। यहा रहते हुए सिविल सर्विस मे उसकी दो वार पद-वृद्धि हुई। सन् १९३६ मे वह वरिष्ठ जीवरसायनज्ञ के पद पर नियुक्त की गई, और इसके १५ वर्ष वाद उसकी नियुक्ति उसके वर्तमान पद, सहयोगी जीवरसायनज्ञ, पर हुई। प्रयोगशाला मे उसके दैनिक कार्य मे दूसरे सूक्ष्म जीवो की रासायनिक समस्याए भी उसके सामने आती थी, और इन समस्याओ का उसने जो अध्ययन किया था उसका विवरण सन् १९३० और ४० के दशको मे कुछ वैज्ञानिक पत्रिकाओ, आदि मे प्रकाशित भी हुआ था। अपने प्रतिदिन के काम के अलावा उसे अपनी रुचि की समस्याओ का अध्ययन करने की भी पूरी छूट थी। इसी आजादी के कारण वह अन्तत. मानवता को एक परम कल्याणकारी पदार्थ भेंट कर सकी और उसकी मिसाल देखकर दूसरे वैज्ञानिको को भी अपने नियत कार्य के अलावा अपनी रुचि की अन्य समस्याओं का अध्ययन करने की आज़ादी मिल सकी।

अपनी रुचि की समस्याओ पर काम करने की आजादी मिलने के वाद जिस प्रकार का अनुभव डा० ब्राउन का था। वैसे अनुभववाले वैज्ञानिक के लिए यह स्वाभाविक ही था कि उसकी रुचि प्रतिजैविकी (Antibiotics) मे हो जाए। उसका वास्तविक कार्यक्षेत्र सूक्ष्म जीवो का रसायन था और प्रतिजीवाणु सूक्ष्म जीवो से प्राप्त रासायनिक पदार्थ है। पेनिसिलिन (१९४१) वास्तव मे रामवाण सिद्ध हुआ था, और वहुत कुछ यही स्थिति स्ट्रेप्टोमाइसीन (१९४४) की थी। इसके वाद क्लोरोमाइसीन और ऑरियोमाइसीन का अनुसंधान हुआ, और इन सवके अभ्युदय के साथ-साथ मनुष्यो को अधिकाधिक रोगो से मुक्ति मिलती गई। दुर्भाग्य से जैसे-जैसे ये प्रतिजीवाणु आसानी से उपलव्ध होते गए व डाक्टरो द्वारा अधिक व्यवहृत होते गए, वैसे-वैसे चमत्कारी रोग-मुक्ति के साथ-साथ दुखद

परिणामो की सूचनाए भी मिलती रही—कभी-कभी तो ये परिणाम इतने दुखद होते थे कि मरीज शिकायत करता था कि इस इलाज से तो उसकी तकलीफ ही अच्छी थी।

इन प्रतिजीवाणुओ के भारी मात्रा मे सेवन के कारण होनेवाले दुष्परिणामो मे से एक तो ऐसा है जिसे शायद हममे से कुछ लोगो ने भी अपने परिवार या मित्रमडली मे देखा हो—इसमे मुह मे छाले पड जाते है और भयकर वेदना होती है। ऐसा श्लेष्म झिल्ली (Mucous Membrane) मे फफूदो (Fungi) की अवाध प्रगति के कारण होता है। वात यह है कि हमारे शरीर मे कुछ वैक्टीरिया ऐसे होते हैं जो फफूदो की प्रगति पर नियत्रण रखते है। चूकि प्रतिजीवाणु अनेक प्रकार के वैक्टीरिया को नष्ट कर देते हैं किन्तु फफूदो को नष्ट नही करते, इसलिए वे उन वैक्टीरिया को भी नष्ट कर देते है जो फफूदो के नियत्रण के लिए शरीर मे रहने आवश्यक है। ऐसा होने पर फफूदें आश्चर्यजनक रूप से वढ सकती है और एक वीमारी को जन्म दे सकती है जिसे डाक्टर लोग मोनिलियासिस कहते है, मरीज़ यही समझते हैं कि उनके मुह मे छाले पड गए है, और उनके लिए कुछ भी खाना दु स्वप्न की विभीपिका हो जाता है।

यह उन अनेक उदाहरणो मे से एक है कि फफूदें वीमारी को किस प्रकार जन्म देती हैं। प्रतिजीवाणुओ को भारी मात्रा मे दिए जाने के वाद इस तरह के इतने अधिक उदाहरण सामने आने लगे कि वैज्ञानिक किसी ऐसे प्रतिजीवाणु की खोज करने लगे जो फफूदो को मार सके, जैसे दूसरे प्रतिजीवाणु वैक्टीरिया को नष्ट करते है, और साथ ही मनुष्यो के लिए हानिरहित भी हो।

सन् १९४० के दशक के उत्तरार्द्ध मे डा० ब्राउन और डा० हाज़ेन ने जोकि इस राजकीय प्रयोगशाला मे सूक्ष्म जीव-वैज्ञानिक थी, फफूदो को नष्ट करनेवाला एक प्रतिजीवाणु खोज निकालने का सयुक्त प्रयास करने का निश्चय किया। तव तक हुए काम को सावधानीपूर्वक दोहराते हुए उन्होने अपने अनुसधान की एक स्पष्ट रूपरेखा वनाई। डा० हाजेन एक्टिनोमाइसिटीज (Actinomycetes) पर पहले भी कुछ काम कर चुकी थीं। ये सूक्ष्म जीव कुछ-कुछ फफूद जैसे होते हैं, और मिट्टी मे पाए जाते हैं, और तव तक इनसे कई प्रतिजीवाणु प्राप्त किए जा चुके थे। उसने ऐसी मिट्टी के वहुत-से नमूने इकट्ठे किए जिनमे इन सूक्ष्म जीवों के मिलने की आशा थी। फिर उन मिट्टी से एक्टिनोमाइसिटीज़ अलग किए और

परीक्षण करके देखा कि इनमे से कोई मनुष्यो को रोगी बनानेवाली फफूदो का विरोधी है या नही। इस काम मे उसे कई ऐसे सूक्ष्म जीव दिखाई दिए जिनसे उमे सफलता की आशा बध चली। लेकिन अभी इन सूक्ष्म जीवो मे से किसी एक से प्रतिजीवाणु प्राप्त करने, और फिर यह निश्चय करने का काम बाकी था कि इस प्रतिजीवाणु का उपयोग मनुष्यो के हित मे किया जा सकता है या नही? दरअसल, डा० हाज़ेन जो काम कर चुकी थी उसके आगे का काम करने के लिए एक अनुभवी जीव वैज्ञानिक की अपेक्षा थी।

इस प्रकार के सहयोग को ध्यान मे रखकर फफूदो को नष्ट करनेवाले एक प्रतिजीवाणु की खोज शुरू की। अलग-अलग स्थानो मे जमा किए गए मिट्टी के नमूनो मे वर्जीनिया के पशुओ के चरागाह से लिए गए नमूने मे ऐसे एक्टिनो-माइसीट मिले जो उन्हे अपने काम के सर्वाधिक उपयुक्त लगे। परीक्षणो से पता चला कि इस मिट्टी मे पाए जानेवाले ये सूक्ष्म जीव फफूद-विरोधी तो थे ही, अन्य ज्ञात एक्टिनोमाइसीट से भिन्न गुण रखनेवाले भी थे। डा० हाज़ेन ने तो इन सूक्ष्म जीवो को मिट्टी से सफलतापूर्वक अलग कर लिया, अब यह देखना था कि डा० ब्राउन इन एटिनोमाइसीट से प्रतिजीवाणु अलग कर सकती हैं या नही। इस बिन्दु पर आकर दोनो वैज्ञानिक यह तो समझ गई थी कि एक प्रतिजीवाणु उनके सामने हाजिर है, लेकिन यह जरूरी नही था कि उन्हे अपने उद्देश्य मे सफलता मिल ही जाए। अक्सर ऐसा होता है कि वैज्ञानिक जिस प्रतिजीवाणु पर अपनी आशाए केन्द्रित किए हुए हैं वह शोधन-प्रक्रिया मे अपनी सक्रिय क्षमता खो बैठे, और व्यर्थ हो जाए। दूसरे, फफूद-विरोधी प्रतिजीवाणु पहले जब कभी अलग भी किए गए तो देखा गया कि वे इतने अधिक विषैले है कि मानव के हित की बजाय उनका अहित ही कर सकते है।

डा० ब्राउन ने प्रतिजीवाणु प्राप्त करने के लिए जो पद्धति अपनाई, उसकी खास-खास बाते इस प्रकार हैं. उसने एक्टिनोमाइसीट का मासरस-संवर्द्धन (Broth culture) तैयार किया। हर पाच या छ दिन के बाद वह सतह पर जमा हुई कोमल झिल्ली (Pellicle) को निकाल देती थी, जिससे बहुत-सी अशुद्धिया दूर हो जाती थी। जो परीक्षण किए गए उनसे पता चला कि फफूद-विरोधी कारण (Agent) एक नही बल्कि दो है—एक मासरस मे और दूसरा कोमल झिल्ली मे। बाद मे चलकर उन्हे पता चला कि यदि इस अवस्था मे

परीक्षणो मे उनसे जरा भी चूक हो जाती तो उन्हे अपने काम मे सफलता कभी न मिलती। उन्होने यह काम यही रोक दिया। इसे रोककर डा० ब्राउन काफी दिनो तक इसी बात का पता लगाती रही कि इन दोनो कारको मे क्या भेद है। अन्तत उन्होने कोमल झिल्ली मे पाए जानेवाले कारक पर ही काम करने का निश्चय किया। अव इससे आगे का, यानी फफूद-विरोधी कारक को प्राप्त करने का, काम एक उच्चतर योग्यता-प्राप्त जीव वैज्ञानिक के लिए भी कठिन था। प्रयोग के तौर पर, एक विलायक (Solvent) मैथेनौल का प्रयोग किया, जिसमे प्रतिजीवाणु तो घुल गया किन्तु बाकी तत्त्व ज्यो के त्यो रहे। इस प्रकार डा० ब्राउन को एक महीन पीले चूर्ण की प्राप्ति हुई, और अन्तत उन्हे छोटे-छोटे स्फटिक (Crystal) प्राप्त हुए, जिनका नाम उन्होने कुछ वक्त के लिए फजाइ-साइडीन (Fungicidin) रख दिया, और चूहो पर उसके परीक्षण शुरू कर दिए।

सन् १९५० के पतझड के प्रारम्भिक दिनो मे डा० हाज़ेन और डा० ब्राउन इस स्थिति मे हो सकी कि उन्होने न्यूयार्क मे होनेवाली राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी की बैठक मे घोषणा की कि उन्होने मिट्टी मे होने वाले एक्टिनोमाइसीट से फफूद-विरोधी दो कारक उत्पन्न किए हैं, इन दोनो मे से एक कारक तो ऐसा है जो आज तक ज्ञात सभी प्रतिजीवाणुओ से भिन्न है। अव तक के किए गए परीक्षणो मे यह कारक वडी सख्या मे उपस्थित फफूदो के विरुद्ध सफल हुआ है और भारी परिणाम मे दिए जाने पर भी, इसने शरीर मे स्थित उन सामान्य बैक्टीरिया को क्षति नही पहुचाई है जिन्हे दूसरे प्रतिजीवाणु हानि पहुचाते है। मनुष्यो को हानि पहुचाने-वाली फफूदो से मिलती-जुलती फफूदो पर प्रयोगशाला मे किए गए प्रयोग इतने आशाप्रद सिद्ध हुए है कि इस बात का अध्ययन जरूरी हो गया है कि मनुष्यो के लिए इस प्रतिजीवाणु के चिकित्सीय गुण क्या है—इस प्रकार के अनुसधान के लिए चिकित्साशास्त्रियो की अपेक्षा थी।

शैनेक्टडी मे उनके यह घोषणा करते ही उनके पास उन फार्मेस्युटिकल कम्पनियो से दे-दनादन टेलीफोन व पत्रादि आने लगे जिनके पास इस दिशा मे आगे अनुसधान करने के साधन थे, और जो इस प्रतिजीवाणु का निर्माण या उत्पादन करने के लिए तैयार थी क्योकि प्रतिजीवाणु वडे-वड़े किण्वन-कुडो (Fermentation Tanks) मे उत्पन्न जीवित ऑरगेनिज्मो से प्राप्त किए जाते हैं। ऐसा लगता था कि इन दोनो वैज्ञानिको के हाथ एक ऐसी चीज़ लग गई है

जिसे पेटेंट कराया जा सकता है, और भारी मुनाफा कमाया जा सकता है। चूंकि ये दोनो जानती थी कि दोनो मे से किसीको भी अपनी इस खोज से अपने लिए धन नहीं चाहिए, और चूंकि फार्मेस्युटिकल उद्योग की सहायता के बिना आगे का अनुसधान, परीक्षण, उत्पादन और मारकेटिंग सम्भव नही था, इसलिए उन्होने रिसर्च कारपोरेशन से सपर्क स्थापित किया कि इन परिस्थितियो मे वह क्या-कुछ कर सकता है।

थोडे-से ही समय मे इस अनुभव-प्राप्त कारपोरेशन ने इस प्रथम हानिरहित फफूद-विरोधी प्रतिजीवाणु कोहा ज़ेन-ब्राउन के नाम से पेटेंट कराने के काम मे हाथ लगाया। इस बीच इस प्रतिजीवाणु की अनुसन्धाता इसे एक स्थायी नाम भी दे चुकी थी—नाइस्टाटिन (Nystatin) इसके पहले अक्षरो का प्रयोग न्यूयार्क राज्य को आदर देने के लि किया गया था जिसकी प्रयोगशाला मे यह कार्य सम्पन्न हुआ था। फिर, कारपोरेशन ने ई० आर० स्क्विब एण्ड सन्स को इस पेटेंट प्रतिजीवाणु का प्रयोग करने का लाइसेंस दे दिया, और जल्दी ही उसकी प्रयोग-शालाओ मे इसका उत्पादन प्रारम्भ हो गया। इस काम मे गम्भीर कठिनाइयां सामने आई, जैसीकि रासायनिक पदार्थों का व्यापार के स्तर पर उत्पादन करते समय अक्सर उठा करती है, लेकिन स्क्विब इस्टीट्यूट फॉर मेडिकल रिसर्च की सहायता से उनपर काबू पा लिया गया। शीघ्रातिशीघ्र डाक्टर लोग मरीज़ो पर नाइस्टाटिन का प्रयोग करके इस दिशा मे सहयोग देने लगे।

नाइस्टाटिन न केवल रोगोत्पादक फफूदो से होनेवाली अनेक बीमारियो को दूर करने मे सफल सिद्ध हुआ बल्कि यह एकमात्र ऐसा प्रतिजीवाणु भी सिद्ध हुआ जो मनुष्यो के लिए निर्विष था। इसे अकेले या दूसरे प्रतिजीवाणुओ के साथ मिला-कर शरीर मे पहुचाकर मरीज़ो की बीमारी को रोका या ठीक किया गया। सारांश यह कि ज्योही यह सिद्ध हो गया कि नाइस्टाटिन का प्रयोग सर्वथा हानिरहित है वैसे ही इस प्रतिजीवाणु का बाजार गर्म हो उठा।

इसकी व्यापक उपादेयता का कुछ अनुमान रिसर्च कारपोरेशन द्वारा प्रका-शित अपनी वार्षिक रिपोर्ट मे सन् १९५७ मे (जोकि इस प्रतिजीवाणु के उत्पादन का प्रथम वर्ष था) नाइस्टाटिन के पेटेंट से प्राप्त रायल्टी के आकडो से लगाया जा सकता है। पहले ही वर्ष इसकी रायल्टी से लगभग १,३५,००० डालर प्राप्त हुए। इन आकडो से ऐसा लगता है कि शायद चद वर्षों मे ही रायल्टी से प्रथम दस

लाख डालर प्राप्त हो जाएगे।

रिसर्च कारपोरेशन और नाइस्टाटिन की अनुसधाताओ मे हुए राजीनामे के अनुसार रायल्टी से प्राप्त धनराशि प्राकृतिक विज्ञानो के अनुसधान के विकास-कार्यों पर खर्च होती है, इस धनराशि का आधा भाग तो, अन्य कोशो की तरह ही रिसर्च कारपोरेशन द्वारा वैज्ञानिक क्षेत्रो को अनुदान के रूप मे दिया जाता है। दूसरा आधा भाग ब्राउन-हाज़ेन फड की कमेटी (जिसमे डा० ब्राउन और डा० हाज़ेन भी है) द्वारा जीवरसायन, प्रतिरक्षण विज्ञान और सूक्ष्म जीवविज्ञान मे मौलिक अनुसन्धान-कार्य के लिए वितरित किया जाता है, इस बारे मे न्यूयार्क राज्य की प्रयोगशालाओ और अनुसन्धान विभाग मे काम करनेवाले कर्मचारियो को वैज्ञानिक प्रशिक्षण देने पर भी विशेष बल दिया जाता है। अब तक डा० ब्राउन नाइस्टाटिन की रायल्टी का कुछ भाग उन लोगो पर व्यय करने का सुखद अनुभव प्राप्त कर चुकी है जिनकी समस्याओ व प्रतिभाओ को वह निकट से जानती है। लेकिन इस सबसे उसके निजी जीवन मे कोई अन्तर नही आया है। प्रयोगशाला मे उसका काम अब भी बहुत कुछ पहले की तरह जारी है, और उसकी विशेष रुचि अनुसन्धान की समस्याओ मे है।

प्रयोगशाला के बाहर भी उसका जीवन बहुत कुछ पहले जैसा ही है—उसे जीवन से कोई शिकायत नही है, और इसका एक प्रमुख कारण यह है कि आवश्यकता से अतिरिक्त धन जीवन मे जो अतिरिक्त वृद्धि करता है, उसका मौका ही उसने नही आने दिया अपनी मा और दादी का खर्चा अपने ऊपर उठाने के बाद उसने पहला काम यह किया कि अपनी एक व्यापारी मित्र के साथ मिलकर एक ऐसा मकान खरीद लिया जिसमे वे चारो सुखपूर्वक रह सकती थी, और बाहर की तरफ वे लॉन और फूल-पौधे वगैरह लगा सकती थी। यह इन्तजाम बहुत कुछ बुजुर्गाना था, और शायद इसी तरह चलता, लेकिन एपिस्कोपल चर्च (जिसकी वह सदस्य थी) को छोटे बालको को पढाने के लिए रविवारीय स्कूल-टीचरो की जरूरत पडी, और वह एक टीचर हो गई। उससे उसे अनेक बच्चो के सम्पर्क मे आने का अवसर मिला, फलत. कई वर्षो बाद उसे नये आश्रमो के मुआयने के लिए बुलाया जाने लगा और जल्दी ही वह बपतिस्मे के समय भी उपस्थित होने लगी। आजकल उसका परिवार बहुत बढ गया है, और बढता ही जा रहा है। पिछले कई वर्षो से वह दस वर्षीय बच्चों को पढा रही है, इस आयु वर्ग मे उसकी विशेष

रुचि है।

राशेल ब्राउन को जानना इस सत्य का साक्षात्कार करना है कि विज्ञान एक ऐसा क्षेत्र है जिसमे मानव चाहे तो ऐसे प्रतिमानो और मूल्यो को अपना सकता है जो भौतिक मानदड से नही मापे जा सकते। और न इन प्रतिमानो को अपनाने से वैज्ञानिक को अपने व्यवसाय मे प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त करने मे कोई बाधा होती है। लेकिन वैज्ञानिक प्रतिष्ठा ऑनरेरी 'फाइ 'बीटा कैप्पा' और माउंट होल-योक की ओर से विशिष्ट वैज्ञानिक के रूप मे उल्लेखनीय होने की अपेक्षा इस सहृदय और विनम्र महिला को कही अधिक सतोष यह सोचकर मिलता है कि उसके कार्य ने मानव-जीवन की रक्षा करने और मानव-कष्टो को कम करने में योग दिया है।

च्येन श्युंग वू

आज एक चीनी महिला की गणना अमरीका की सर्वाधिक लब्धप्रतिष्ठ महिला वैज्ञानिको मे की जाती है। इस महिला का नाम च्येन श्युग वू है, और वह कोलम्बिया विश्वविद्यालय मे भौतिकी की प्रोफेसर है। श्रेष्ठतासूचक विशेषणो का प्रयोग वैज्ञानिको के लिए करते समय सतर्कता बरतनी चाहिए। इस बात को ध्यान मे रखते हुए, यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि डा० वू का स्थान निश्चित रूप से उन महिलाओ के बीच मे है जिनकी गणना ससार की चोटी की महिला वैज्ञानिको मे होती है। सन् १९५८ मे जब प्रिंस्टन विश्वविद्यालय ने उसे विज्ञान मे ऑनरेरी डॉक्टरेट की डिग्री प्रदान की तो विश्वविद्यालय के प्रेसीडेंट ने कहा था कि च्येनश्युग वू ने वास्तवमे 'विश्व की अग्रणी महिला प्रयोक्ता भौतिकविद्' के नाम से सबोधित किए जाने का अधिकार अर्जित कर लिया है। इससे पहले इस विश्वविद्यालय ने किसी महिला को विज्ञान मे ऑनरेरी डाक्टरेट नही दी थी।

डा० वू के श्रेष्ठ वैज्ञानिक कार्य ने उसे कोलबिया विश्वविद्यालय मे प्रोफेसर बनवा दिया है। यह पद नाभिकीय भौतिकी के क्षेत्र मे काम करनेवाली असाधारण अमरीकी महिलाओ के लिए भी दुर्लभ है। लेकिन इस उच्च पद पर आसीन होने के बाद डा० वू मे किसी भी प्रकार का भी सकोच या मिथ्या गौरव नही आया। उसका कद बहुत छोटा है, और वह प्राय. एक प्रकार का चीनी स्कर्ट पहने रहती है जो उसपर खूब फबती है। इस पोशाक से उसके अपनी जन्मभूमि के प्रति स्थायी प्रेम का परिचय मिलता है।

और जिस अपनापे और ममता से वह हाथ मिलाता है वह जाति और राष्ट्री-

यता से बहुत ऊपर की चीजें है। उसके स्वभाव मे मानवीय और नारी-सुलभ तत्त्वो की इतनी प्रचुरता है कि उससे हाथ मिलाते ही सब तरह के औपचारिक सकोच समाप्त हो जाते है। विज्ञान से अनभिज्ञ सामान्य जन के लिए उसका व्यवहार एक चुनौती की तरह है कि वह अपने सकोच और पूर्वाग्रहो को त्यागकर उन्मुक्त मन मे उसके वैज्ञानिक कार्य को समझने का प्रयत्न करे। यदि वह ऐसा कर सके तो उसे अपने मस्तिष्क और इस नाभिकीय भौतिकविद् के बीच सवेदना का एक पुल नज़र आएगा जिसकी मदद से वह उसके उस वैज्ञानिक कार्य को बडी आसानी से समझ सकेगी जिसे समझने की उसने पहले कोई कोशिश नही की थी।

यह सच है कि सामान्य जन के लिए नाभिकीय भौतिकी सबसे अधिक एब्स-ट्रैक्ट और पेचीदा विज्ञान है। फिर भी यह तथ्य कि आधुनिक सगीत की गणना सर्वाधिक अमूर्त और पेचीदा कलाओ मे होती है, अनेक सामान्य जनो को इस सगीत मे नूतन अर्थवत्ता और सौन्दर्य खोजने से नही रोक पाया है, जिसे वह पहले 'अर्थ-हीन आवाजो का हुजूम' कहकर छोड देता था। विज्ञान हो या कला—उसे समझने के लिए समुचित बौद्धिक प्रयास आवश्यक है। यह प्रयास करने पर हम उन्ही क्षेत्रो मे ज्यादा अधिकारपूर्वक विचरण कर सकते है जिनमे पहले अजनबियो की तरह भटकते थे। सामान्य जन के लिए किसी अपरिचित विषय से परिचय प्राप्त करने की शुरुआत वयस्क हो जाने के बाद करना कठिन होता है। छोटी उम्र मे यह कठिनाई कम होती है। फिर भी, हर उम्र के वे लोग, जिनके दिमाग किसी निश्चित साचे मे ढल नही चुके है, जिन्होने अपनी कल्पना का चिरकाल से दमन नही किया है। हमारे शरीरो, और चारो ओर फैले पदार्थों के निर्माता अदृश्य तत्त्वो को, जिन्हे परमाणु कहते है, समझने की शुरुआत कर सकते है।

आखिर हममे से अधिकाश लोग हाई स्कूल मे पढते समय यह अनुभव कर चुके है कि जैसे ही दो अदृश्य गैसो (हाइड्रोजन व ऑक्सीजन) को परीक्षण नली मे मिलाया गया। वे दृश्यमान पानी मे बदल गई। इस प्रकार का अनुभव हमारी कल्पना को यह सोचने के लिए उत्तेजित कर सकता है कि हम पानी से भरे जिस गिलास को देख रहे है वह गिलास और उसका पानी कुछ ऐसे अदृश्य कणो से बने है जो किसी तरह मिल गए है, और दृश्यमान हो गए है। जब हम यह समझने की कोशिश कर रहे होते है कि गिलास और उसका पानी 'परमाणु' नामक अदृश्य कणों से मिलकर बने है, तो अपनी कल्पना की सहायता से हम परमाणु

भौतिकी के क्षेत्र मे पहला कदम रख चुके होते है।

जो सामान्य जन यह पहला कदम उठाने मे सफल हो जाता है उसके लिए दूसरा कदम रखना कुछ मुश्किल नही होता, और यह दूसरा कदम उसे डा० वू के विशिष्ट क्षेत्र नाभिकीय भौतिकी, यानी परमाणु के नाभिक या कोर (Core) की भौतिकी, मे ले आता है। हमारा यह दूसरा कदम तब उठता है जब हम जानकर या अनजाने ही यह समझने की कोशिश करते है कि गिलास और उसके पानी का हर अदृश्य परमाणु[1] और भी छोटे अदृश्य कणो से मिलकर वना है, जैसे—घनात्मक और ऋणात्मक विद्युत्-चार्ज जिन्हे प्रोटोन और इलेक्ट्रोन कहते है, चार्ज-हीन न्यूट्रोन, 'मेसन' नामक अस्थायी कण, और के-मेसन (K-meson) जिनकी खोज सन् १९५२-५३ मे हुई है और जो क्षय होने पर कभी दो और कभी तीन पाइ-मेसनो (Pi-mesons) मे बदल जाते है।

इतना समझ लेने के वाद इस तथ्य को मान लेने मे विशेष कठिनाई नही होती कि अदृश्य परमाणुओ का निर्माण अदृश्य कणो से मिलकर होता है। किन्तु—और यह एक महत्त्वपूर्ण 'किन्तु' है—जव एक सामान्य जन उन वैज्ञानिको के कार्य का अध्ययन आरम्भ करता है जिन्होने इस प्रकार के उपकरणो का निर्माण किया है जिनसे ये अदृश्य कण सधे हुए करतवी पिस्सुओ की भाति दिखाई देते हैं, तव वह खो जाता है। यदि वह इस विपय मे और अधिक जानने का तो इच्छुक हो किन्तु यह निश्चय न कर पाए कि इस विषय मे उसमे जन्मजात क्षमता है या नही, तो इस विंदु पर आकर, उसे कुछ आधुनिक लब्धप्रतिष्ठ वैज्ञानिको के जीवन-चरित से प्रेरणा लेनी चाहिए। कुछ ऐसे वैज्ञानिक, जिन्होने आगे चलकर नाभिकीय भौतिकी के क्षेत्र मे वडा नाम कमाया और स्थायी महत्त्व के कार्य किए, शुरू मे वहुत दिनो तक यह निश्चय न कर पाए थे कि उनमे इस क्षेत्र मे जन्मजात प्रतिभा है अथवा नही।

लेकिन च्येन श्युग वू उन वैज्ञानिको मे से नही थी। चीन मे अपने वाल्य-काल मे ही वह समझ गई थी कि वडी होकर वह एक वैज्ञानिक वनेगी, यद्यपि उन दिनो वह कोलविया विश्वविद्यालय, अमरीका, की प्रयोगशाला या किसी अन्य देश के स्वप्न देखती थी, और न विज्ञान मे रुचि रखनेवाली उस युग

[1] यदि आप परमाणु के आकार के वारे में भूल गए हैं तो पृष्ठ ३० पर पादटिप्पणी में लाइज मेट्नर द्वारा दिया गया विवरण देखिए।

को अमरीकी लडकियो की तरह घर पर बने रेडियो-सेट की मरम्मत करने मे ही लगी रहती थी। उसका जन्म शघाई के निकटवर्ती ल्यू हो नामक छोटे-से कस्बे मे हुआ था। उसका जीवन अपने वर्ग की अन्य लडकियो की ही भाति था और वह अपने चीनी घर मे खुश थी। हा, एक अर्थ मे उसका जीवन अपने समुदाय के बच्चो से किसी कदर भिन्न था। उसका पिता ल्यू हो मे एक स्कूल का प्रिंसिपल था। वह स्वय विद्वान् था और अपनी सतान को भी योग्य बनाना चाहता था। फलत. च्येन श्युग और उसके दोनो भाइयो के चारो ओर पुस्तकें बिखरी रहती थी और उन्हे पढने के लिए प्रेरित किया जाता था। यद्यपि इस बच्ची की रुचि खेल-कूद मे विशेष थी, तथापि पढने के मामले मे उससे कहना नही पड़ता था। अपने पिता के स्कूल की छात्रा होने तथा पुस्तको और घर के वातावरण के कारण उसने अपनी मातृभूमि की पारपरिक सस्कृति और उसके प्रति एक स्थायी सम्मान—पुरानी रीति-नीति, पुराने लोगो, चीनी आप्तग्रथो और प्राचीन कला और सगीत के प्रति सम्मान—सीख लिया था।

"वह जीवन कितना उल्लासपूर्ण था। मेरा शैशव सौभाग्य और सुख मे परिपूर्ण था।" वह आज भी कहती है।

अपने ज़माने को देखते हुए उसका पिता बहुत अधिक प्रगतिशील था। वह अपने स्कूल के बच्चो को प्राचीन सनातन मूल्यो के साथ-साथ आधुनिक जीवन-मूल्यो और अधुनातन विचारो के प्रति सम्मान रखना सिखाता था। वह इन बच्चों को आधुनिक जीवन के लिए तैयार करता था और इस तैयारी मे वह उन्हे चीनी सस्कृति के उन सनातन मूल्यों को ग्रहण करना सिखाता था जो किसी भी युग मे मनुष्य के जीवन को पूर्णतर एव समृद्धतर बनाने मे सक्षम है। प्राचीन साम्राज्ञी व उसके उत्तराधिकारियो का ज़माना लद चुका था। वू ज़ोग-यी पूर्व के देशों मे उठनेवाली परिवर्तन की लहर को पहचानता था। वह छोटे बच्चो को इन परिवर्तनो के लिए तैयार करना चाहता था, यद्यपि यह सच है कि उसके साथ कदम से कदम मिलाकर चलनेवालो की ल्यू हो मे भारी कमी थी।

वहा उपलब्ध शिक्षा पूरी कर लेने के बाद हाइस्कूल के लिए उसे सूचाऊ भेजा गया। यहा कई ऐसी बातें हुई जो आगे चलकर उसके जीवन मे बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई। पहली बात तो यह कि उसने अग्रेज़ी पढनी शुरू कर दी। यह भाषा आगे चलकर उसके लिए बड़ी सहायक, बल्कि अनिवार्य सिद्ध हुई। दूसरी बात,

जो इससे भी कही महत्त्वपूर्ण थी, यह हुई कि उसने एक भौतिकविद् बनने का फैसला किया। वह किसी नाटकीय क्षण मे या किसी ऐसी ही घटना के कारण इस फैसले पर पहुची हो, ऐसा उसे याद नही आता। वह उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहती थी, इस अर्थ मे वह अपने बाप की सच्ची बेटी थी। पढने मे उसका मन रमता था, और हाईस्कूल मे अध्ययन करते समय उसकी समझ मे यह बात आ गई कि दूसरे विषयो की अपेक्षा कुछ खास विषयो मे उसकी दिलचस्पी खास तौर पर है। निश्चय ही गणित और विज्ञान मे उसकी विशेष रुचि थी। तब उसने भौतिकी पढनी शुरू की और, "जल्दी ही मैं समझ गई कि मुझे इसी विषय मे काम करना है।" उसका कहना है कि उसकी अन्तरात्मा ने उसे यह बताया था, लेकिन उस समय वह नही जानती थी कि उसने सत्य को कितने निश्चयात्मक रूप मे हृदयगम कर लिया है जो उसकी किसी आभ्यतर प्रक्रिया ने उसकी मन चेतना के सम्मुख उपस्थित किया था।

भावी कार्य का निश्चय कर लेने के बाद स्वाभाविक रूप से, उसने सूचारु हाईस्कूल से ग्रेजुएट होने के बाद नानकिंग-स्थित सरकारी मदद से चलनेवाले राष्ट्रीय केन्द्रीय विश्वविद्यालय मे नाम लिखाया। उन दिनो नानकिंग राष्ट्रवादी सरकार की राजधानी था और सम्पूर्ण पूर्वी चीन की भाति वह भी अव्यवस्थित था, किन्तु छात्र-जीवन प्राय सामान्य रूप से ही चल रहा था। कुमारी वू ने गणित और भौतिकी का सारा पाठ्यक्रम ले लिया, और अपने सहपाठियो के साथ चीनी विश्वविद्यालय मे सहजप्राप्त बौद्धिक साहचर्य का आनन्द उठाते हुए वह सन् १९३६ मे विज्ञान मे 'बेचलर' हो गई।

अब वह भौतिकी मे ग्रेजुएट होना चाहती थी, और इसके लिए तैयार थी, मगर चीन मे इस प्रकार के अध्ययन की कोई व्यवस्था नही थी। उसने अपने मा-बाप को इस बात के लिए राज़ी कर लिया कि वे उसे उच्चशिक्षा प्राप्त करने के लिए अमरीका भेज दें। इस प्रकार, सन् १९३६ मे उसने बर्कले-स्थित कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय मे दाखिला ले लिया। इन्ही दिनो डा० अर्नेस्ट लॉरेंस को विश्व-विद्यालय की विकिरण-प्रयोगशाला का निदेशक बनाया गया था। अमरीका मे उत्पन्न और शिक्षित इस भौतिकविद् ने इसी विश्वविद्यालय मे रहकर अपने आविष्कार एक परमाणु-भजक साइक्लोट्रोन पर अपना काम आगे बढाया, और परमाणु-रचना और तत्त्वातरण के क्षेत्र मे अपना शोध-कार्य किया जिसपर आगे

चलकर उसे भौतिकी मे नोवल पुरस्कार प्राप्त हुआ। इन दिनो मिस वू उसकी छात्र थी। यह सच है कि उन दिनो नाभिकीय भौतिकी मे रुचि रखनेवाले किसी भी विद्यार्थी के लिए डा० लॉरेंस की प्रयोगशालाओ मे काम करना सौभाग्य की वात समझी जाती थी। ग्रेजुएट विद्यार्थी के रूप मे दाखिला मिल जाने के वाद सव कुछ इस वात पर निर्भर करता था कि चीनी विश्वविद्यालय मे प्राप्त की गई शिक्षा और उनकी निजी योग्यताए इस अमरीकी ग्रेजुएट केन्द्र मे होनेवाले काम मे कहा तक सहायक हो सकती है जिसमे कि नाभिकीय भौतिकी के क्षेत्र के कुछ श्रेष्ठतम मस्तिष्क काम कर रहे थे।

अमरीकी विश्वविद्यालय-जीवन के साथ ही कक्षा और प्रयोगशाला के वाहर के अमरीकी जीवन मे भी अपनी सगति विठाने की वात उसके सामने आई। वह इटरनेशनल हाउस मे रहती थी, वहा रहनेवाले पूर्वी देशो और यूरोप के छात्रो मे वह जल्दी ही घुलमिल गई। धीरे-धीरे उसे अमरीकी पाक कला, काम मे कम उसकी कुछ चीजें पसद आने लगी। नृत्य के अलावा वह इटरनेशनल हाउस मे रहनेवाले छात्रो के सामाजिक जीवन को भी पसद करने लगी। धीरे-धीरे वह पश्चिमी शास्त्रीय सगीत और पश्चिमी लोकगीतो मे भी रुचि लेने लगी। उसका ग्रेजुएट-सहपाठी ल्यूक चा-ल्यू युआन, जिससे कि च्येन श्युग ने अमरीका मे आने के कुछ वर्ष वाद विवाह किया, सगीत-प्रेमी है और पूर्वीय और यूरोपीय दोनो प्रकार के वाद्ययत्रो को वजाने और सुनने का शौकीन है। उनके घर पर अक्सर दोनों प्रकार का सगीत सुना जा सकता है।

विश्वविद्यालय से वाहर अमरीकी जीवन से अपनी सगति वैठाने मे शुरू मे उसे शायद थोडी-वहुत कठिनाई हुई हो, किन्तु उसके अध्ययन मे किसी प्रकार का व्याघात नही पडा। कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय का ग्रेजुएट-पाठ्यक्रम कठोर श्रम की अपेक्षा रखता था, मगर उसने सव काम वडी आसानी से पूरा कर लिया और फिर उसे अध्यापन-सहायक का पद दिया गया; हर साल उसे यह पद नये सिरे से तव तक दिया जाता रहा जव तक कि उसने सन् १९४० मे नाभिकीय भौतिकी मे पी-एच० डी० न कर लिया। अपने शोध-प्रवध के लिए उसने जो अनुसधान-कार्य किया वह दो भागो मे था। पहले मे उसने वीटा के क्षय से होनेवाले एक्स-विकिरण (X-Radiation) पर काम किया। उसने विघटन के दौरान दो प्रकार की किरणो को अलग करने की नई विधिया निकालने मे विशेष दक्षता दिखाई।

और अपने सैद्धान्तिक भविष्य-कथन को परीक्षणो के परिणामो से पुष्ट करने मे सफलता प्राप्त की। बर्कले मे इस घोषणा के तुरन्त बाद, कि यूरेनियम के परमाणु का विखडन हो चुका है, उसने अपना दूसरा शोध-कार्य आरम्भ किया। इस वार उसने यूरेनियम के विखड से होनेवाली रेडियो-एक्टिव नोवल (Noble) गैसो को अपनी शोध का विषय बनाया। डा० ई० सैग्रे के साथ काम करते हुए उसने "अर्द्ध-जीवनो, विकिरणो और समस्थानिका-अको (Isotope Numbers) को पूरी तरह पहचानकर रेडियोधर्मी क्षय की दो पूर्णश्रृखलाओ को सिद्ध कर दिखाया। युद्ध की समाप्ति तक उसका यह शोध-प्रबध प्रकाशित नही हो सका, किन्तु, प्रार्थना करने पर, इसे लॉस एलमॉस लेवोरेटरीज़ भेज दिया गया।

कहना न होगा कि डाक्टरेट के लिए अपना शोध-प्रबध पूरा करने के पहले ही डा० वू नाभिकीय भौतिकी के क्षेत्र मे अपनी प्रतिभा का परिचय देने लगी थी। ग्रेजुएट विद्यार्थी के रूप मे साधारण महत्त्व का कार्य करने पर उसे 'फाइ बीटा कैप्पा' के लिए चुन लिया गया, और विश्वविद्यालय ने उसके सामने डा० लॉरेंस का रिसर्च-असिस्टेंट वन जाने का प्रस्ताव रखा। चूकि चीन मे युद्ध की स्थिति बिगडती ही जा रही थी, इसलिए उसने इस पद को स्वीकार कर लिया, और कुछ समय तक विशुद्ध वैज्ञानिक शोध मे लगी रही। इसके वाद उस प्रयोग-शाला मे प्रतिरक्षणात्मक शोध होने लगी और विशुद्ध-कार्य स्थगित कर दिया गया। सन् १९४२ मे, डा० वू पूर्व की ओर स्मिथ कॉलेज मे भौतिकी पढाने चली आई।

स्मिथ कालेज मे उसका पहला वर्ष पूरा होने ही वाला था कि एक ऐसी वात हुई जिससे सावित होता है कि डा० लॉरेंस के साथ काम करते हुए उसने ज़रूर कुछ ऐसे गुणो का परिचय दिया होगा जो उन दिनो भौतिकविदो के लिए विरल रहे होगे। हुआ यह कि प्रिंसटन विश्वविद्यालय ने इस २७ वर्षीय युवती को अपने पुरुष-छात्रो को नाभिकीय भौतिकी पढ़ाने के लिए आमत्रित किया। डा० वू का कहना है कि अमरीका मे पाई जानेवाली सवसे वेतुकी वात यह है कि उच्चतर शिक्षा के कुछ सर्वश्रेष्ठ सस्थान महिला-छात्रो को दाखिला नही देते। इस वात पर उसे आज भी आश्चर्य होता है क्योकि यह अमरीका के समानता के सिद्धात के विरोध मे है। डा० वू प्रिंसटन के इस निमत्रण का कारण यह बताती है, "युद्ध चल रहा था और भौतिकी के अध्यापको की उन दिनो भारी कमी महसूस की

जा रही थी।" स्पष्टत यह कथन उसकी स्वभावगत विनम्रता का परिचायक है। फिर भी युवा डा० च्येन श्युग वू के पास, जिसे डा० लॉरेंस की प्रयोगशाला से निकले एक ही वर्ष हुआ था, कुछ ऐसा असाधारण था जो वह प्रिसटन विश्व-विद्यालय को दे सकती थी। यह विश्वविद्यालय नाभिकीय अनुसधान के लिए आवश्यक वहुमूल्य उपकरणो से सुसज्जित था।

उसने प्रिसटन का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, किन्तु वहा वह अधिक दिन न रह सकी। कुछ ही महीनो वाद उसके पास एक और प्रस्ताव आया जिसके द्वारा उसे कोलबिया विश्वविद्यालय मे चलनेवाले मैनहटन प्रोजैक्ट पर काम करने के लिए आमन्त्रित किया गया था। इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने का अर्थ था युद्ध की तैयारियो मे प्रत्यक्ष योगदान, और उस समय वह यही चाहती थी। इसलिए सन् १९४४ के मार्च मे वह 'डिवीजन ऑफ वार रिसर्च' के वैज्ञानिक कर्मचारी-मडल की सदस्य वना ली गई, जहा कि वह युद्ध की समाप्ति तक रही। यहा उसका मुख्य काम विकिरण का पता लगानेवाले यत्रो का विकास करना था। इन्ही दिनों उसे गीगर काउटर पर अभ्रक की पहली खिडकी (Mica Window) लगाने की निर्दोप विधि खोज निकालने मे सफलता मिली।

युद्ध की समाप्ति के तुरन्त वाद डा० वू कोलम्बिया मे रिसर्च एसोशिएट हो गई। यहा उसे वीटा-क्षय पर काम करने का अवसर मिला, इस विपय पर वह कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय मे भी काम कर चुकी थी। वीटा-क्षय के वारे मे सिद्धान्त तो विद्यमान थे किन्तु सिद्धान्तो को सिद्ध या असिद्ध करने के लिए प्रमाणो की अपेक्षा थी, और सन् १९४६ मे वीटा-वर्णक्रम विज्ञान की तकनीकें इतनी अल्प विकसित थी कि इस क्षेत्र के सैद्धान्तिक और प्रायोगिक निष्कर्पो मे एक भारी असंगति विद्यमान थी। कोलम्बिया-स्थित अपनी प्रयोगशाला मे उसने वीटा-वर्णक्रमो की आकृतियो और वीटा-क्षय की परस्पर क्रिया का अध्ययन करने की नई विधियो का आविष्कार करके इस भारी असंगति को दूर करने का दुष्कर कार्य आरम्भ किया। वर्णक्रमो का अध्ययन करने के लिए उसने एक नई तकनीक अप-नाई, जिसमें उसने एक चुम्वकीय वर्णक्रममापी (Spectro metre) के अन्दर स्फुरण पटल (Scintillation counter) और वीटा-डिटैक्टर का प्रयोग किया। कोलंबिया मे कई वर्षो तक वह इस कार्य मे लगी रही। इन परीक्षणों मे वीटा-क्षय का 'फर्मी सिद्धान्त' सही सिद्ध होता था और यह भी सावित होता था कि वह

बडी तेज़ी से एक कुशल भौतिकविद् बनती जा रही है। इस शोध-कार्य के आधार पर उसकी पद-वृद्धि कर दी गई और सन् १९५२ मे उसे कोलम्बिया मे एसोशिएट प्रोफेसर बना दिया गया ।

डा० वू के साथ काम करनेवाले ग्रेजुएट विद्यार्थी अनजाने ही अमरीका मे प्रायोगिक भौतिकी के क्षेत्र मे होनेवाले सर्वोत्तम शोध-कार्य मे भागीदार होने का सुअवसर पा रहे थे। बीटा-क्षय, सहार विकिरण (Annihilation radiation) और विकिरण की पहचान करनेवाली युक्तियो से सम्बद्ध समस्याओ को एक-एक करके अध्ययन किया जा रहा था। वह खुद और उसके विद्यार्थी अपने कुछ निष्कर्षों पर आप ही चकित रह जाते थे। उसका मेधावी मस्तिष्क प्रायोगिक अनुसधान की नई-नई विधिया निकालता रहता था, और दूसरे भौतिकविद् इस प्रयोगशाला मे होनेवाले काम को बडी रुचि से देखने लगे थे। सन् १९५६ मे एक ऐसा अवसर आया जिससे उसे दो युवा चीनी-अमरीकी भौतिकविदो के साथ सक्रिय रूप से काम करना पडा, जिनके शोध-निष्कर्षों ने अमरीका को विश्वव्यापी प्रतिष्ठा दिलाई। इन दोनो युवा वैज्ञानिको को इस कार्य पर भौतिक मे नोबल पुरस्कार दिया गया।

इनमे से एक कोलबिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर त्सुग दाओ ली थे और दूसरे प्रिंसटन-स्थित 'इस्टिट्यूट फॉर एडवास्ड स्टडी' के प्रोफेसर चेन निंग याग। ये दोनो वैज्ञानिक सैद्धान्तिक भौतिकविदो के उस छोटे-से वर्ग के सदस्य थे जो सन् १९४६ के मध्य तक आते-आते एक ऐसी धारणा की पूर्णव्यापी मान्यता मे सन्देह व्यक्त करने लगा था जिसे समता के सिद्धान्त (Principle of parity) के नाम से पुकारा जाता है। उक्त सिद्धान्त को सभी सैद्धान्तिक भौतिकविद् लगभग पिछले तीस वर्षों से भौतिकी का आधारभूत सिद्धान्त मानते आए थे। तीन दशको से यह नियम सभी भौतिकीय सिद्धान्तो मे स्थान पाता आ रहा था। इस सिद्धान्त को इतनी पूर्ण व्यापी मान्यता प्राप्त थी कि वैज्ञानिको के लिए 'समता के सिद्धान्त' मे सन्देह करना 'गुरुत्वाकर्षण के नियम' मे सन्देह करने के समान, अतः असम्भव था।

फिर भी कुछ लोग सन्देह करने लगे थे। उनके सन्देह का एक कारण यह था कि जब वे के-मेसनो (जिनकी खोज सन् १९५२-५३ मे हुई थी) के विघटन का प्रेक्षण करते थे तो उसके परिणाम वे नही होते थे जो समता के सिद्धान्त के अनुसार

होने चाहिए थे। डा० ली और याग ने इस चुनौती को स्वीकार किया और 'समता' से सम्बद्ध सम्पूर्ण प्रायोगिक जानकारी की व्यापक छानवीन करने के इरादे से एक व्यवस्थित अनुसधान प्रारम्भ किया, और इस सिद्धान्त मे पोल-पट्टी पाकर वे आश्चर्यचकित रह गए। इस सिद्धान्त को मान्यता देनेवाला ज्ञान अधूरा था। इसलिए उन्होने दृढतापूर्वक इस वात पर वल दिया कि समता का सिद्धान्त त्रुटिपूर्ण है। उन्होने अपनी परिकल्पना का परीक्षण करने के लिए दो प्रकार के प्रयोगो का सुझाव दिया—(१) पाइ और मुअन (Pi & muon) मेसनो पर, (२) वीटा किरणो पर। डा० वू ने इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रयोग मे वीटा किरणो पर प्रयोग करने का काम अपने हाथ मे लिया।

समता के नियम को सक्षेप मे इस प्रकार समझा जा सकता है · इस नियम के अनुसार, नाभिकीय जगत् मे किसी पदार्थ और उसके दर्पण प्रतिविम्व का व्यवहार एक-सा होता है। दर्पण प्रतिविम्व के व्यवहार को समझने के लिए दर्पण के सामने खडे हो जाइए। एक हाथ मे कागपेंच रखिए और दूसरे मे काग-लगी वोतल। अव कागपेंच को काग मे लगाकर वायी ओर से दाहिनी ओर घुमाइए। तव तक घुमाते रहिये जव तक कि काग वाहर न निकल आए। दर्पण मे आपको ऐसा लगेगा जैसे आप कागपेच को दाहिनी ओर से वायी ओर घुमा रहे हो—और काग वोतल से वाहर निकल आया हो। लेकिन अगर आप वास्तव मे कागपेंच को काग मे लगाकर दाहिनी ओर से वायी ओर घुमाए तो आपको पता चलेगा कि इस तरह घुमाने से कागपेंच काग के अन्दर जाता ही नही है, अर्थात् आपको दिखाई देनेवाला दर्पण-प्रतिविम्व का व्यवहार कागपेंच के वास्तविक व्यवहार से ठीक उल्टा है।

समता का नियम कहता था कि अदृश्य नाभिकीय सरचनाओ मे पदार्थ और उसके दर्पण-प्रतिविम्व का 'वास्तविक' व्यहार समरूप होता है। डा० वू अपने प्रयोगो से इस वात का निश्चय करना चाहती थी कि क्या नाभिकीय सरचनाओ मे इस वात से कोई फर्क नही पडता कि कागपेच का घुमाव, नाभिक का स्पिन, किस तरफ को है, और हर हाल मे काग वास्तव मे वोतल से वाहर निकल आता है, अर्थात् क्या क्षय के दौरान कण नाभिक से दूर की तरफ उडते है।

यह एक वडा ही जटिल और कठिन प्रयोग था, तथा इसे इस विषय के लोग ही समझ सकते है। डा० वू ने नेशनल व्यूरो ऑफ स्टैंडर्ड्स के निम्न तापमान

भौतिकी ग्रुप से सहयोग मागा, और उक्त ब्यूरो के रेडियोधर्मी माप-तौल विशेषज्ञो और परमाणु-शक्ति कमीशन की सहायता से आधुनिक भौतिकी का यह सर्वाधिक पेचीदा प्रयोग आरभ किया। सक्षेप मे, कोबाल्ट ६० के एक रेडियोधर्मी नाभिक को एक ऐसे सश्लिष्ट शीतलन और निर्वात तन्त्र मे रख दिया जो परम शून्य (अर्थात्—४५६ डिग्री फॉरेनहाइट) से ०·०१ डिग्री ऊपर का तापक्रम उत्पन्न करने मे सक्षम था। इस तापमान मे ऊष्मीय गति (Thermal Motion) इतनी घट जाती है कि एक चुबकीय क्षेत्र के प्रयोग से कोबाल्ट के घूर्णमान नाभिको को छोटे चुबको की भाति, चुबकीय क्षेत्र के समानातर पक्तिबद्ध किया जा सकता है। इस उपकरण मे एक और यत्र—एक स्फुरण-पटल—भी सम्मिलित था जो पक्ति-बद्ध कोबाल्ट के नाभिको के विघटन के समय उनमे से उत्सर्जित इलेक्ट्रोनो को गिनता चलता था।

जब यह गिनती की गई तो समता का नियम गलत साबित हो गया। स्पेन की दिशा के मुकाबले उसकी विरोधी दिशा मे उत्सर्जित होनेवाले इलेक्ट्रोनो की सख्या कही अधिक थी—इतनी अधिक कि यह स्पष्ट रूप से सिद्ध हो गया कि इलेक्ट्रोन अधिकतर कोबाल्ट ६० के स्पिन-अक्ष की विरोधी दिशा मे ही बढते है। उनकी दिशा पूर्वनिर्धारित होती है, जैसेकि कागपेच के निचले हिस्से का लहरिया निर्धारित करता है कि कागपेच को दाहिनी ओर घुमाया जाए या बायी ओर। बायी ओर को घूमनेवाला कागपेंच भी बनाया जा सकता है, और वह दाहिनी ओर से बायी ओर को घूमकर काग को बोतल से बाहर निकालेगा। अगर हम वैज्ञानिक की भाषा मे कहे तो डा० वू और उसके सहयोगियो के इस सफल प्रयोग से यह सिद्ध होता है कि इलेक्ट्रोन किसी भी दिशा मे उत्सर्जित हो सकते है। आरम्भ मे इन कणो को दक्षिणवर्ती या वामावर्ती कहा गया होगा। वास्तव मे ये इलेक्ट्रोन घूर्णाक्ष के साथ दाहिनी अथवा बायी ओर बढते हैं और अपने घूर्णन या स्पिन की विपरीत दिशा मे उत्सर्जित होते है।

जब इस सिद्धात की स्थापना मे डा० वू के योगदान का पता चला तो उसे उच्च सम्मान प्रदान किया गया। उसके दोनो देशबन्धु वैज्ञानिको अर्थात् डा० ली और डा० याग को इसी सिद्धात पर भौतिकी मे नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। प्रिंसटन विश्वविद्यालय द्वारा ऑनरेरी डाक्टरेट प्रदान किए जाने का जिक्र पहले किया जा चुका है। वह राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी की सातवी महिला सदस्य बनाई

गई तब यह अकादमी अपने जीवन् के सौ वर्ष पूरे करनेवाली थी। उसे कोलंबिया मे पूर्ण प्रोफेसर बना दिया गया। साथ ही, उसे 'ऐकेडेमिया सिनिका' (चीनी विज्ञान अकादमी) का सदस्य चुन लिया गया। सन् १९५८ मे उसे राष्ट्रीय विज्ञान पुरस्कार पानेवाले छात्रो के सम्मुख भाषण देने के लिए आमन्त्रित किया गया। विद्यार्थियो के लिए उसका मुख्य सदेश यह था कि उनमे शका करने का साहस होना चाहिए। उसने कहा, "समता के नियम का खडन इस बात का प्रमाण है कि विज्ञान स्थिर नही है बल्कि सतत विकासोन्मुख और गतिशील है। चिरकाल से चली आई स्थापनाओ मे शका करने और उनके औचित्य को परखने और प्रमाण एकत्र करने की अनवरत खोज से ही विज्ञान का रथ आगे बढता है।"

अपनी कक्षाओ और प्रयोगशाला मे ग्रेजुएट छात्रा मे दूसरे देशो की लडकियो का बहुमत देखकर उसके अपने मन मे यह शका उठती है कि अमरीका शायद भौतिकी के क्षेत्र मे अपनी नवयुवतियो की क्षमताओ का ठीक से विकास नही कर पा रहा है। उसकी समझ मे नही आता कि भौतिकी की ओर आकृष्ट होनेवाली अमरीकी नवयुवतियो की सख्या इतनी कम क्यो है। वह यह नही मानती कि अमरीकी लडकियो मे इस क्षेत्र मे प्रतिभा की कमी है, क्योकि वह देखती है, दूसरे देशो की लडकियो मे इस प्रतिभा की कमी नही है। उसका विचार है कि सामाजिक या बौद्धिक जीवन मे ऐसी प्रवृत्तियो को लेकर चलना अनुचित है जो युवा पीढियो की जन्मजात प्रतिभा का गला घोट दें, उसका पति भौतिकविद् है, और उनके पुत्र को अपनी जन्मजात क्षमताओ को भौतिकी, या किसी भी दूसरे क्षेत्र मे विकसित करने मे अपने मा-बाप का पूरा सहयोग प्राप्त होगा। वह खुद महसूस करती है कि नाभिकीय भौतिकी के क्षेत्र मे किसी भी प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति को सतोष-लाभ हो सकता है।

एडिथ हिकले क्विम्बी

एडिथ क्विम्बी की कहानी उस लडकी की कहानी है जो अमरीका के मध्य-पश्चिम से प्रकृत्या जिज्ञासु मन लेकर शिक्षा के लिए सुदूर पश्चिम और फिर पूर्व की ओर आई, और यहा आकर उसने अपनी शिक्षा का प्रयोग विज्ञान के एक नवीन क्षेत्र अर्थात् विकिरण भौतिकी के निर्माण मे किया। आज अमरीका के प्रत्येक वर्ग मे उसके शोधकार्य के लाभदायक परिणाम पहुच चुके हैं। जब भी किसी दन्त-विशेषज्ञ या दूसरे किसी डाक्टर के यहा दात या शरीर के किन्ही दूसरे अगो की एक्स-रे परीक्षा होती है, जब भी किसी अस्पताल मे किसी प्रकार के रेडियम या विकिरण से उपचार किया जाता है तब एडिथ क्विम्बी के विकिरण विज्ञान-विपयक योगदान के किसी न किसी पक्ष का उपयोग अवश्य किया जाता है। अकेले अथवा किसीके साथ लिखी गई अपनी पाठ्य-पुस्तको से उसने इतने अधिक डाक्टरो को पढाया है कि उसकी बराबरी करने वाले लोग अमरीका मे गिने-चुने हैं।

सन् १६०४ मे जबकि एडिथ हिकले अपने जन्म-स्थान रौकफोर्ड, इल्निोइस, के ग्रामर स्कूल से ग्रेजुएट हुई तब इस बात की चर्चा चलनी आरम्भ हो गई थी कि बीमारियो का इलाज करने के लिए एक्स-रे और रेडियम का प्रयोग सभव है, और वह भी दुनिया के गिने-चुने चिकित्सा-केन्द्रो मे। आजकल की भाति तब स्कूलो मे बच्चो को दात या छाती के एक्स-रे के बारे मे कुछ पता नही था। इस तथ्य का कुछ ही वर्ष पहले पता चला था कि धरती की पपडी मे निहित रेडियधर्मी कच्ची धातुओ से एक प्रकार की शक्तिशाली किरणें निर्गत होती है। तब किसे पता था कि अतत इन किरणो से नवीन वैज्ञानिक जानकारी मिलेगी

और इस नवीन ज्ञान को हाईस्कूलो व कॉलेजो की पाठ्य-पुस्तको द्वारा सर्वत्र पहुचाया जाएगा। लेकिन जब एडिथ हाईस्कूल मे जाने काबिल हुई तो हिंकले परिवार बोइस, ईदाहो, मे चला आया। बोइस मे भौतिकी और रसायन के जो पाठ्यक्रम उसे पढने पडे वे उस जमाने को देखते हुए तो कही अच्छे थे लेकिन आज उन्हे 'उन्नीसवी सदी का विज्ञान' ही कहा जाएगा। रेडियधर्मी युग अभी जनमा ही था और उसके परिणाम अभी हाईस्कूल की पाठ्य-पुस्तको मे नही पहुचे थे।

यही बात किसी हद तक वालावाला-स्थित ह्विटमैन कॉलेज मे पढाई जानेवाली भौतिकी के बारे मे भी सच थी, जहा उसने भौतिकी और गणित को अपना प्रमुख विषय चुना, यद्यपि सन् १९१२ मे वहा से ग्रेजुएट होने के पूर्व उसे अपनी प्रयोगशाला मे एक प्रयोग रेडियम से और दूसरा एक्स-रे से करना पडा था। अत. यदि एडिथ क्विम्बी का मस्तिष्क जन्मजात रूप से तीक्ष्ण और जिज्ञासु न होता तो अधिक सभावना इसी बात की थी कि वह भी अपने जमाने की हजारो नवयुवतियो की भाति विज्ञान की एक ऐसी अध्यापिका बनकर रह जाती जो चारो ओर हो रही वैज्ञानिक प्रगति से परिचय-मात्र करके सतुष्ट रहती है। अधिक सभावना इसी बात की थी कि उसकी गणना उन वैज्ञानिको मे कभी न हो पाती जो किसी छोटे, किन्तु महत्त्वपूर्ण क्षेत्र मे वैज्ञानिक प्रगति को अपने प्रयत्नो से सभव बनाते है।

वह अपने मा-बाप की पहली सन्तान थी। सौभाग्य से उसे ऐसा पिता मिला जो उसके सतत जिज्ञासु मन के प्रति अत्यधिक सहानुभूतिशील था। एडिथ ऐसी बच्ची थी जो हर समय, क्यो, क्या और कैसे आदि सवालो के जवाब-तलब करती रहती थी, और उसके पिता ने उसे कभी सवाल करने पर झिटका नही। जिन सवालो का जवाब वह खुद नही दे पाता था, या समझता था कि बच्ची इन सवालो के जवाब खुद ढूढ सकती है, उनके लिए वह एडिथ को अपने प्रश्नो के उत्तर अन्यत्र ढूढ लेने के लिए प्रेरित करता था। यह भी उसका सौभाग्य था कि हाईस्कूल मे उसे विज्ञान का एक ऐसा शिक्षक मिल गया जिसने रसायन और भौतिकी मे उसकी दिलचस्पी पैदा की और प्रयोगशाला मे अपने सवालो का जवाब खुद ही ढूढ निकालने का तरीका सिखाया। शायद अपने इन्ही अध्यापक मि० रौटेन बॉग के प्रभाव के कारण उसने कॉलेज मे भौतिकी और गणित को अपना प्रमुख विषय चुना।

फिर व्हिटमैन कॉलेज मे भी वह निश्चित रूप से भाग्यशाली सिद्ध हुई। चारो वर्ष उसे ट्यूशन-छात्रवृत्ति ही नही मिली, वल्कि सौभाग्य से वह एक ऐसे अमरीकी कॉलेज मे पढती थी जो न वहुत छोटा था, न वहुत वडा, जिसमे सह-शिक्षा थी, शिक्षा का स्तर ऊचा था और शिक्षको और छात्रो मे सद्भाव था। फलत उसने वहा से वी० एस० पास किया। भौतिकी के अपने ज्ञान को सतही समझने के कारण उसके मन मे आगे पढने की इच्छा उत्पन्न हुई। इसके लिए वह व्हिटमैन फैकल्टी, विशेष रूप से उसके सलाहकार और गणित के प्रोफेसर ब्रैटन, जो वाद मे कॉलेज के प्रेसिडेंट बने, और भौतिकी के शिक्षक प्रो० ब्राउन का आभार मानती है कि उन्होने उसे गणित और भौतिकी को अपने प्रमुख विषय चुनने के लिए प्रेरित किया और प्रश्न करके विषय को भली भाति समझने के लिए उसे सदैव उत्साहित किया। उसके पहले किसी लडकी ने ये विषय नही लिए थे।

हिंकले परिवार की स्थिति साधारण थी और छोटे वच्चो के लालन-पालन, शिक्षा-दीक्षा आदि का भी ध्यान रखना था। इसलिए, अब यह ज़रूरी हो गया था कि परिवार की सबसे वडी सतान होने के नाते एडिथ हिंकले कमाना शुरू करे। उसका रुझान और विचार पढाने की ओर था, इसलिए उसने एक हाईस्कूल मे रसायन और भौतिकी के शिक्षक के पद पर नौकरी कर ली। दो साल वाद उसे कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय मे एक टीचिंग फेलोशिप मिल गई और वह भौतिकी मे एम० ए० करने के इरादे से वहा चली गई। विश्वविद्यालय मे पहले वर्ष के अत मे उसने अपने सहपाठी ग्रेजुएट विद्यार्थी शिर्ले एल० क्विम्वी से विवाह कर लिया। अगले वर्ष के अत मे उसने एम० ए० कर लिया, और उससे अगले वर्ष सितम्वर मे क्विम्वी-दपती वर्कले से कोई पचास मील पूर्व एंटियोक, कैलिफोर्निया, चले गए। यहा शिर्ले क्विम्वी को हाईस्कूल मे विज्ञान के शिक्षक का पद मिल गया था। एडिथ ने अपनी घर-गृहस्थी सभाली। खाना पकाने मे उसकी खास दिलचस्पी थी। रसोई एक ऐसी प्रयोगशाला है जिसमे पाक-विद्या की पुस्तके रखनेवाली गृहिणी की अपेक्षा नई सूझ-वूझवाली महिला को अधिक सफलता मिलती है।

निश्चय ही इस विंदु तक एडिथ क्विम्वी के जीवन मे कोई ऐसी घटना नही घटी थी जो उसके ज़माने की चुस्त युवा ग्रेजुएट के लिए असाधारण कही जा सके। कोई आश्चर्य की वात न होती यदि काली आखोवाली, पाच फुट आठ इच लवी, सुदर्शन, सुनहरे-घने वालोवाली यह सहज-प्रसन्न महिला उन सैकडो युवतियो मे

से एक बनकर रह जाती जो कॉलेज से निकलकर पढाने के लिए राज़ी हो जाती हैं, किंतु यदि उन्हे कोई ऐसा सुयोग्य पति मिल जाए जो उनसे नौकरी न कराना चाहे तो पढाना छोडने के लिए भी तैयार रहती है। इस तथ्य मे भी कोई असाधारणता न थी कि जब वे एटियोक मे थे, और अमरीका प्रथम विश्वयुद्ध मे शामिल हो गया, तो शिर्ले क्विम्बी नौसेना मे भरती हो गया और एडिथ अपने पति के स्थान पर अध्यापिका हो गई। न इस बात मे ही कोई विचित्रता थी कि जब शिर्ले क्विम्बी को युद्ध-समाप्ति के बाद न्यू लडन, कनेक्टीकट, मे नौसैनिक अड्डे पर पनडुबियो का पता लगाने के कार्य के लिए एक वर्ष और रोक लिया गया तो एडिथ क्विम्बी ने एटियोकवाली नौकरी छोड दी और अपने पति के पास जाकर एक बार फिर अपनी गृहस्थी मे मगन हो गई।

जब नवयुवक शिर्ले क्विम्बी सेवामुक्त हुआ तो उसके मन मे भौतिकी मे पी-एच० डी० करने की बडी इच्छा थी। उन दिनो 'जी० आई० बिल ऑफ राइट्स' जैसी कोई व्यवस्था नही थी, इसलिए प्रथम विश्वयुद्ध मे भाग लेनेवाले सैनिक के नाते उसे उच्च शिक्षा के लिए आर्थिक सहायता नही मिल सकती थी। अधिक से अधिक यह हो सकता था कि डाक्टरेट का काम करने के साथ-साथ उसे एक अशकालिक प्रशिक्षक की नौकरी मिल जाती जिससे उसे अपने अध्ययन के दौरान प्रति वर्ष १,००० डालर वार्षिक की आय हो जाती। चूंकि इस आय से यह मुमकिन नही था कि दो आदमी न्यूयार्क मे ढंग से गुजर-बसर कर सकें, इसलिए एक ही रास्ता बचा था, और वह यह कि एडिथ क्विम्बी कही नौकरी कर ले। उन्हें पता चला कि कैसर और समवर्गी रोगो के लिए न्यूयार्क सिटी मेमोरियल हॉस्पिटल के प्रमुख भौतिकविद् डा० फैलिया हाल ही मे सैन्य-सेवा से वापस लौटे हैं और उनकी योजना इस अस्पताल मे विकिरण-विज्ञान की एक प्रयोगशाला खोलने की है। उन्हे यह भी पता चला कि डा० फैलिया को एक सहायक भौतिक-विद् की जरूरत है। एडिथ क्विम्बी की योग्यताओ से परिचित किसी व्यक्ति ने डा० फैलिया से इसके लिए सिफारिश की।

इस प्रकार के कार्य के लिए किसी महिला को नियुक्त करने का विचार कुछ नया-सा था। उन दिनो अमरीका मे एक भी स्त्री चिकित्सीय-भौतिक अनुसधान मे काम नही कर रही थी। परतु शिक्षा की दृष्टि से एडिथ क्विम्बी इस पद के लिए विशेष रूप से योग्य थी, और डा० फैलिया को औरतो के साथ काम करने

मे कोई एतराज़ नही था, फलत: एडिथ को वह पद मिल सका। उसने डा० फैलिया के साथ काम सन् १६१६ मे शुरू किया था और आज तक वे दोनो साथ-साथ वैज्ञानिक शोध मे जुटे हुए है।

जिस समय इन दोनो ने अपना काम शुरू किया उस समय विकिरण-भौतिकी (Radiological Physics) नाम के किसी विज्ञान का अस्तित्व नही था, यद्यपि कुछ अस्पतालो मे विकिरण-चिकित्सा (Radiotherapy) अर्थात् बीमारी के इलाज मे एक्स-रे और रेडियम के प्रयोग की व्यवस्था की जा चुकी थी। जब इन चीज़ो का प्रयोग कुशल डाक्टर करते थे तो बीमारी को मिटाने मे उन्हे आश्चर्य-जनक सफलता मिलती थी, किन्तु जिस तरह के उपकरण और टैक्नीशियन उन दिनो उपलब्ध थे उन्हे देखते हुऐ इन चीज़ो का प्रयोग मरीजो और डाक्टरो दोनो के ही लिए खतरे से खाली नही था। इस स्थिति मे कुछ भौतिकविद् चिकित्सको के सहयोग से एक नई दिशा मे प्रयोग कर रहे थे। उनका उद्देश्य यह पता लगाना था कि एक्स-रे और रेडियम के प्रयोग मे भौतिकी के नियम किस प्रकार लागू किए जा सकते हैं, और उनके इस अनुसधान का लाभ चिकित्सक किस प्रकार उठा सकते हैं।

कुछ ही दिनो मे यह सिद्ध हो गया कि उपयुक्त विकिरण-चिकित्सा के लिए चिकित्सा-क्षेत्र मे दो नये प्रकार के विशेषज्ञो को प्रशिक्षित करना पडेगा—विकिरण-चिकित्सक और विकिरण-भौतिकविद्। विकिरण-चिकित्सक के लिए यह ज़रूरी है कि वह एक ऐसा चिकित्सक हो जो बीमारियो का निदान कर सके, और शरीर की विशेष स्थितियो मे विशेष खुराको मे उचित दवाए दे सके। विकिरण-भौतिकविद् के लिए ग्रेजुएट भौतिकविद् होना ज़रूरी है ताकि वह विकिरण की सही माप कर सके ताकि चिकित्सक मरीज़ को सही मात्रा मे विकिरण दे सके। इस बात का ध्यान रखना भी उसीका काम है कि किरण-उपचार मे प्रयुक्त उपकरण मरीज़ो को उनके लिए विशेष रूप से नियत खुराके देने मे कोई चूक न करे ताकि मरीज़ो का उन्हे विकिरण देनेवालो के लिए खतरा पैदा न हो सके।

जब मिसेज़ क्विम्बी ने डा० फैलिया के सहायक भौतिकविद् के रूप मे काम शुरू किया तो उन दिनो रेडियम इतने कम परिमाण मे प्राप्त था, और इतना अधिक महगा था कि मेमोरियल हॉस्पिटल की गिनती उन थोडे-से सस्थानो मे

होती थी जिनके पास चिकित्सा के अनुसधान-क्षेत्र मे भौतिक-शोध मे प्रयोग करने के लिए पर्याप्त मात्रा मे रेडियम था। अमरीका मे उत्पन्न रेडियम इस प्रकार के लिए सन् १९१३ से पूर्व प्राप्त नही था, और अमरीकी कच्ची धातुओ से रेडियम को अलग करना और फिर उसे परिशुद्ध करना इतनी लबी और दुष्कर प्रक्रिया थी कि अमरीका मे सर्वप्रथम उत्पन्न किया गया रेडियम १,२०,००० डालर प्रति ग्राम के हिसाब से बिका था। मिसेज़ क्विम्बी के काम शुरु करने के कुल तीन वर्ष पहले सन् १९१६ मे चिकित्सको ने रेडियम और विकिरण को आयनित करनेवाले अन्य साधनो के वैज्ञानिक अध्ययन को उनके भौतिक गुणो और चिकित्सा-क्षेत्र मे उनके प्रयोग के सदर्भ मे आगे बढाने के उद्देश्य से 'अमरीकन रेडियम सोसाइटी' की स्थापना की थी, जिसकी पूरी सदस्यता केवल चिकित्सक ही प्राप्त कर सकते थे।

इस सबसे यह ज़ाहिर होता है कि तीस साल से भी कम अवधि की एम० ए० पास और हाईस्कूल मे कुछ वर्ष पढाने का अनुभव-प्राप्त मिसेज़ क्विम्बी इस नये विकिरण-विज्ञान की पहली मजिल पर एक मजदूर के रूप मे ही स्वीकार की गई थी—विकिरण-विज्ञान, यानी विज्ञान की वह शाखा जिसका सम्बन्ध विकिरण-ऊर्जा (Radiant Energy) और रोगो के निदान व उनके उपचार मे उसके प्रयोग से है। २१ वर्ष बाद अपने ही विश्वविद्यालय से विज्ञान मे ऑनरेरी पी-एच० डी प्राप्त डा० एडिथ क्विम्बी 'अमरीकन रेडियम सोसाइटी' की एक बैठक मे उसका सर्वोच्च सम्मान जेनवा पदक प्राप्त करने के लिए खड़ी हुई। एक वर्ष पहले इस पदक को प्राप्तकरने वाले डा० फैलिया को छोडकर वह प्रथम वैज्ञानिक थी, जिसे एम० डी० की डिग्री न होने पर भी, यह पदक प्रदान किया गया था। इस पदक को प्राप्त करनेवाली वह पहली और अतिम महिला थी। इनके अलावा ११ वर्ष बाद सन् १९५१ मे इस सोसाइटी ने उसे पूर्ण सदस्यता प्रदान करते हुए पहली बार किसी ऐसे वैज्ञानिक को अपना पूर्ण सदस्य बनाया जिसके पास एम० डी० की डिग्री नही थी, यद्यपि यह सच है कि सोसाइटी को अपने लक्ष्य की सिद्धि के लिए उच्च योग्यताप्राप्त भौतिकविदो की आवश्यकता पडती रहती थी।

मेमोरियल हॉस्पिटल मे, सहायक और बाद को सहयोगी, भौतिकविद् के रूप मे २१ वर्ष के काम मे डा० क्विम्बी का विशिष्ट योगदान यह था कि उसने

विकिरण के विभिन्न रूपो के उत्पादन और पैठ की माप की, ताकि विकिरण-चिकित्सा के लिए सही खूराकें निर्धारित की जा सके। यद्यपि डाक्टर लोग इस बात को जानते थे कि किरणें अपने सामने खुले हुए मानव-शरीर मे पैठ जाती है, और कुछ किरणो की पैठ दूसरी किरणो से अधिक गहरी होती है, मगर यह किसीको ठीक-ठीक नही मालूम था कि ये किरणें कितने गहरे और कितने क्षेत्र मे पैठती हैं। उन दिनो जब कोई डॉक्टर विकिरण-चिकित्सक से प्रार्थना करता था तो उसका रूप कुछ इस प्रकार होता था, "मेरे मरीज़ को काफी मात्रा मे विकिरण दे दीजिए, मगर उसकी त्वचा को नुकसान न पहुचने पाए।" अक्सर उसकी समझ मे यह नही आता था कि वह विकिरण की मात्रा को और अधिक निश्चित और स्पष्ट कैसे करे।

डॉक्टर क्विम्बी ने विशेष रूप से इन सवालो के जवाब ढूढ निकालने की कोशिश की किरणीयन (irradiation) की विभिन्न स्थितियो मे किसी विशेष स्रोत से कितना विकिरण उत्सर्जित होता है, इसमे से कितना विकिरण हवा मे बट जाता है, कितना त्वचा मे पहुचता है, और कितना शरीर मे। उसने जीवित शरीर मे विकिरण की प्रतिक्रियाओ पर भौतिकी के नियम लागू किए। और इस प्रकार, उसकी गणना हमारे अग्रणी जीव भौतिकविदो मे होने लगी। सन् १९२०-४० के बीच के समय मे उसने अपने शोध के निष्कर्षों का हवाला देते हुए वैज्ञानिक पत्रिकाओ मे ५० से अधिक लेख प्रकाशित कराए। इन लेखो मे व्यावहारिक ज्ञान निहित था जिसे इस प्रकार के चिकित्सा-सस्थानो मे अविलम्ब उपयोग मे लाया जा सकता था। सन् १९४० मे जब इस कार्य पर उसे जेनवे पदक मिला था, उस अवसर पर उसने जो लेख पढा था उसमे उन सब खोजो और उपलब्धियो का सक्षिप्त विवरण था, लेकिन उसके बाद भी वर्षों तक वह नाप-तोल और खोज-बीन के काम मे लगी रही।

हर साल जैसे-जैसे चिकित्सक न्यूनाधिक सफलता के साथ विकिरण-चिकित्सा का प्रयोग करते गए, वैसे-वैसे नई बाते प्रकाश मे आती रही। इन चिकित्सकों के लिए एक भौतिकविद् का सहयोग कितना अमूल्य है, इस बात को एक सामान्य जन भी समझ सकता है। उदाहरण के लिए, विकिरण-चिकित्सा के आरम्भिक दिनो मे यदि कोई चिकित्सक किन्ही दो मरीज़ो को एक ही प्रकार के दो अर्बुदो के लिए एक ही विकिरण-उद्भासन मे रखता था और यदि एक मरीज़ का अर्बुद

त्वचा से २ सेंटीमीटर नीचे और दूसरे का त्वचा से ७ सेंटीमीटर गहरा होता था, तो वह चिकित्सक यह तो समझ लेता था कि इन दोनो अर्बुदो पर उसकी चिकित्सा का प्रभाव एक-सा नही पडेगा, लेकिन उसका अपना प्रशिक्षण या ज्ञान इतना नही होता था कि वह यह समझ सके कि दोनो मरीजों की चिकित्सा में कैसा परिवर्तन करने मे दोनो अर्बुदो पर एक-सा प्रभाव पडेगा।

डॉ० क्विम्बी द्वारा की गई ठीक-ठीक नाप-तोल और गणना से यह प्रदर्शित किया जा सकता था कि इनमे से एक अर्बुद को दूसरे से दुगुने विकिरण की आवश्यकता पड सकती है। किसी अर्बुद को विकिरण की कितनी मात्रा दी जाए यह इस बात पर निर्भर करता है कि वह त्वचा से कितनी निचाई पर है, किरणीयन प्राप्त करनेवाला क्षेत्र कितना बडा है, शरीर से एक्स-रे नली कितनी दूरी पर है, और इसी तरह की और कुछ बाते इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। एक बार ये तथा इनसे सबद्ध दूसरी बाते सिद्ध हो जाने के बाद लोगो के लिए यह समझना आसान हो गया कि १०० पौड वजन वाले एक बीमार पर एक विशेष विकिरण-उद्भासन १७० पौड वज़न वाले बीमार के मुकाबले कही गम्भीर प्रतिक्रिया उत्पन्न कर सकता है।

यदि डॉक्टरो ने एडिथ क्विम्बी को यह पदक प्रदान किया तो इसमे कोई अचरज की बात नही है, क्योकि वह भी पिछले बीस वर्षों से उन्हे सही और ढेर-से आकडे देती चली आ रही थी, जिनकी मदद से डॉक्टरो के लिए बीमारियो मे सही-सही विकिरण देकर उनका इलाज करना सम्भव हो सका था। वास्तव मे इनमे से कुछ डॉक्टरो ने उसे पदक देने मे भी बडा एक और काम किया; उन्होने उसे कार्नेल मेडिकल स्कूल मे विकिरण-विज्ञान के असिस्टेंट प्रोफेसर के पद पर नियुक्त करा दिया। इस स्कूल का मेमोरियल हॉस्पिटल से घनिष्ठ सम्बन्ध था जहा कि वह डॉ० फैला के साथ काम कर रही थी।

उसे यह नियुक्ति सन् १९४१ मे मिली। इसी वर्ष उसे 'रेडियोलॉजिकल सोसाइटी ऑफ नॉर्थ अमेरिका' का स्वर्ण-पदक प्राप्त हुआ जो उससे पहले मेरी क्यूरी के अलावा कभी किसी महिला को प्रदान नही किया गया था। इस स्वर्ण-पदक पर लिखित वाक्याश "विकिरण-विज्ञान के क्षेत्र मे अनवरत सेवा" से स्पष्ट होता है कि उसके काम "विकिरण की मात्रा की समस्या का समाधान" के कारण प्रत्येक विकिरणविद् ही नही, अगणित मरीज भी उसके ऋणी हो गए थे।

कार्नेल फैक्टरी मे नियुक्त हो जाने के बाद उसे कक्षा और प्रयोगशाला मे डॉक्टरो को विकिरण-विज्ञान पढाने का अवसर मिला। वह स्वय विकिरण-विज्ञान के निर्माताओ मे से एक थी। चिकित्सा के क्षेत्र मे शल्य-चिकित्सा, स्त्री-रोग-विज्ञान, बाल-रोग-विज्ञान और दूसरे विशिष्ट विज्ञानो की भाति विकिरण-विज्ञान भी अब एक विशिष्ट विज्ञान बन चुका था, और इसके कुछ भौतिक पक्षो के अध्यापन के लिए डॉ० क्विम्बी को अन्य डॉक्टरो की अपेक्षा विशेष योग्यता प्राप्त थी। इसके बाद उसके जीवन मे एक और बडा सुअवसर आया जबकि सन् १९४३ मे उसे कोलम्बिया विश्वविद्यालय के कॉलेज ऑफ फिज़िशियन्स एड सर्जन्स के, जो पी० एण्ड एस० के नाम से विख्यात है, एसोशिएट प्रोफेसर के पद पर आमन्त्रित किया गया, और उसने इसे स्वीकार कर लिया। डॉ० फैला को भी इस कॉलेज ने आमत्रित कर लिया। सन् १९५४ मे उसे इस सर्वश्रेष्ठ मेडिकल स्कूल मे पूरा प्रोफेसर बना दिया गया। इस वर्ष वह अमेरिकन रेडियम सोसाइटी की सभापति भी रही। इस सोसाइटी ने अमरीका मे विकिरण भौतिकविद् (Radiation Physisist) और विकिरण-विशारद (Radiologist) को विकिरण-विज्ञान के क्षेत्र मे व्यावसायिक स्तर पर समान मानने की शुरुआत की।

अस्पतालो मे विकिरण-चिकित्सा के वढते हुए प्रचार के साथ-साथ सुरक्षा के उपायो का महत्त्व भी उसी अनुपात मे वढता गया। सन् १९४०–५० के उत्तरार्द्ध मे डॉक्टरी चिकित्सा मे विकिरण-समस्थानिकाओ (Radioisotopes) का भी प्रयोग होने लगा, और इस प्रकार चिकित्सा के क्षेत्र मे एक्स-रे और रेडियम के अलावा एक तीसरी चीज भी आई जिसके प्रयोग मे पहली दो चीजो के समान ही खतरे मौजूद थे। विकिरण-भौतिकी के इस पक्ष के वारे मे जानकारी प्राप्त करने का वीडा भी डॉ० क्विम्बी ने उठाया और फिर एक वैज्ञानिक की सूक्ष्मता के साथ वह इस काम मे जुट गई। पी० एण्ड एस० की विकिरण-समस्थानिका प्रयोगशाला की निदेशक की उसने इन तीनो चीजो को सभी स्तरो पर प्रयोग करने के सर्वोत्तम उपाय ढूढ निकाले। उसकी शोध समस्थानिकाओ के प्रयोग तक ही सीमित नही थी वल्कि उसने यह भी निर्धारित किया कि जव मरीज़ो का इस तरह का इलाज किया जा रहा हो तो नर्सों को उनकी देख-भाल किस तरह करनी चाहिए, और समस्थानिका-चिकित्सा कराने के कुछ ही देर वाद यदि कोई मरीज मर जाए तो उसका अतिम सस्कार करने मे क्या-क्या एहतियात रखना चाहिए। इन खोजो के

कारण वह अस्पतालो मे होनेवाली रेडियोएक्टिव बचन-खुचन को ठिकाने लगाने और रेडियोएक्टिव उपचार के दौरान हुई दुर्घटनाओ के दुष्प्रभाव को दूर करके वहा व्यवस्था कायम करने के मामले मे विशेषज्ञ मानी जाने लगी।

एडिथ विवम्बी के जीवन को चद पृष्ठो मे प्रस्तुत और सक्षिप्त करना बड़ा कठिन है। एक प्रकार मे उसके कार्यों का सक्षिप्त दिग्दर्शन कराते हुए कहा जा सकता है कि एक नवीन विज्ञान की रचना मे उसने तीन प्रकार से योगदान दिया: (१) मरीजो के लिए विकिरण की ठीक-ठीक मात्राए निर्धारित की, (२) सबको यह समझाया कि विकिरण का प्रयोग करते समय उसके खतरो को कैसे दूर किया जा सकता है, (३) विकिरण-विशारद बनने के इच्छुक चिकित्सको को विकिरण-चिकित्सा की आधारभूत भौतिकी पढाई। लेकिन यह पूरी कहानी का एक पहलू-भर है, सच तो यह है कि इस विज्ञान के निर्माण मे उसके व्यक्तित्व, अर्थात् उसके मानव-पक्ष का भी उतना ही महत्त्व है जितना उसके कार्य का। इस बात को इस प्रकार समझा जा सकता है

डॉक्टरो के सहयोग मे रोगियो की परिचर्या-विषयक काम करनेवाले व्यक्ति के लिए (जो खुद डॉक्टर न हो) डॉक्टरो से व्यावसायिक सहमति ले लेना बडी टेढी खीर है। विकिरण-विज्ञान मे विकिरण-भौतिकी को चिकित्सा-पद्धति का एक अनिवार्य अग बनाना इसी तरह का काम था। डॉक्टर लोग अपने व्यावसायिक विशेषाधिकारो की रक्षा बडे जोश मे करते है, और ऐसा करने का उन्हे हक है। जहा तक रोग का सम्बन्ध है उसे ठीक करने का काम बहुत दिनो से डॉक्टर ही करते आए है, और बाकी लोग डॉक्टर के ही बताए काम करते है। फिर भी आज डॉक्टरी करने के लिए अपेक्षित ज्ञान का क्षेत्र इतना अधिक विशाल हो गया है कि अधिक से अधिक ईमानदार और परिश्रमी डॉक्टर भी इतना विशाल और विविध ज्ञान उपार्जित नही कर सकता।

विकिरण-विज्ञान के लिए उच्चशिक्षित भौतिकविदो और उच्चशिक्षित डॉक्टरो का सहयोग आवश्यक था, और इन दोनो को परस्पर सहयोग देते हुए भी स्वतन्त्र रूप से काम करना था। इस तथ्य को मनवाने के लिए एक खास तरह का व्यक्तित्व और भौतिकी का एक विशेष प्रकार का ज्ञान अपेक्षित था। डॉ० विवम्बी मे ऐसा व्यक्तित्व, अपेक्षित वैज्ञानिक ज्ञान और उसके प्रयोग की क्षमता—ये सभी तत्त्व विद्यमान थे। आगामी वर्षों मे उसने चिकित्सा-जगत् के चोटी के नेताओं ने

विकिरणविदो के लिए विकिरण-चिकित्सा के क्षेत्र मे व्यावसायिक समानता दिलवाने मे सफलता प्राप्त की।

स्वय डॉक्टर न होते हुए भी वह एक मेडिकल स्कूल की फैकल्टी मे विकिरण-विज्ञान मे विशेषज्ञ बनने के इच्छुक ग्रेजुएट डॉक्टरो के शिक्षक के पद पर कार्य कर रही थी। शायद उसके इस पद ने उसके हाथ मे एक प्रभावशाली शस्त्र का काम किया। उसकी कक्षा मे पढने वाले डाक्टर यह अच्छी तरह महसूस करते थे कि उन्हे अपने व्यवसाय मे अपने से कही अधिक उच्च गणितीय और भौतिकीय निपुणता-प्राप्त वैज्ञानिक अर्थात् विकिरण-भौतिकविद् की सहायता की आवश्यकता पडेगी।

उसके तथा कुछ दूसरे अग्रणी भौतिकविदो के प्रयत्नो से अब भौतिकविदो के लिए एक नया व्यावसायिक क्षेत्र तैयार हो गया है। विकिरण-भौतिकविद् डाक्टरो की आवश्यकता और इच्छा के अनुसार उन्हे सहयोग देता है, मगर वह डाक्टरो की ही तरह सिर्फ अपने विभागाध्यक्ष के प्रति ही उत्तरदायी होता है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमे वहुत-सी महिलाए सुचारु रूप से काम कर रही है, यद्यपि वहुमत पुरुषो का ही है। इस क्षेत्र के लिए भौतिकी मे पी-एच० डी० होता तो वहुत ही अच्छा है और कुछ स्नातकोत्तर कार्य भी आवश्यक है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमे, आधुनिक विकिरण-चिकित्सा के उपकरणो से युक्त अस्पतालो और इसकी व्यवस्था वाले उच्चतर शिक्षा-सस्थानो की अल्प सख्या के वावजूद, प्रशिक्षित भौतिकविदो की सख्या की अपेक्षा नौकरी के सुअवसरो की सख्या कही अधिक है।

एडिथ क्विम्बी को इतने अधिक अवसरो पर सम्मानित किया गया है कि उन्हे यहा गिनना वहुत कठिन है, और अभी यह सिलसिला जारी ही है। पिछले दिनो सन् १९५६ मे रुटगर्स विश्वविद्यालय ने उसे विज्ञान मे ऑनरेरी डाक्टरेट की डिग्री प्रदान की, और १९५७ मे अमेरिकन कैंसर सोसाइटी ने अपना पदक प्रदान करके उसका सम्मान किया। राष्ट्रीय स्तर पर वह परमाणु-शक्ति आयोग की रेडियोएक्टिव समस्थानिकाओ के नियन्त्रण और वितरण के लिए वनाई गई समिति तथा विकिरण से बचाव-सम्वन्धी राष्ट्रीय समिति की सदस्य वनाई गई। वह वहुत दिनो से अमेरिकन वोर्ड ऑफ रेडियोलॉजी की एक परीक्षक है। यह सस्था डाक्टरो को विकिरण-विज्ञान के विशेषज्ञ के रूप मे मान्यता

प्रदान करती है।

इस सबके बीच, और अपने बहुधन्धी व्यावसायिक जीवन के बावजूद एडिथ क्विम्बी को अपने व्यवसाय के बाहर के जीवन से हमेशा मोह रहा है। जैसे ही उसके पति ने पी-एच० डी० किया (तब से आज तक डॉ० शिर्ले क्विम्बी कोलबिया विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग मे है) उन्हे ग्रिनिच गाव मे एक मकान पसन्द आ गया, और तब से आज तक वे उसी मकान मे रहते है। इस घर को बनाने मे एडिथ क्विम्बी ने एक गृहिणी का कर्तव्य निभाया है, और आज भी निभाती है। घर मे वह अपने व्यावसायिक जीवन से भिन्न जीवन जीती है—यहा यह पढती है और ब्रिज खेलती है, अपने बहुत-से कपडे खुद सीती है और अपने पति और मेहमानो के लिए लजीज खाना बनाने मे उसे एक विशेष आनन्द आता है। घर के काम-धन्धे मे उसे उतना ही मजा आता है जितना उन बहुत-सी औरतो को जिन्हे घर से बाहर कोई काम नही करना होता।

छुट्टियो मे क्विम्बी-दम्पती घर से बाहर, न्यूयार्क से दूर, चले जाते है। वे दोनो ही घूमने के बेहद शौकीन है और प्राय हर साल विदेश-यात्रा करते है। जरूरी होने पर वे हवाई जहाज से यात्रा करते है, अन्यथा वे धीमे चलने वाले जलयान को प्राथमिकता देते है और कही पहुचने की जल्दी न करके राह का लुत्फ उठाते चलते है। न्यूयार्क मे अदेखी चीजो को देखने तथा यूरोप और लैटिन अमरीका-स्थित अपने अनेक परिचितो से मिलने-जुलने से इस अग्रणी वैज्ञानिक का व्यस्त जीवन परिपूर्णता प्राप्त करता रहता है जिसके कार्य ने आज युवा वैज्ञानिको को अनेक नये सुअवसर प्रदान किए है।

जोसेलिन क्रेन

उसे प्राणियो से वेहद प्यार था। प्राणी जितना छोटा होता, उसका यह प्यार उतना ही बढ जाता। छ वर्ष की होते-होते वह समझ गई थी कि उसे इन्हीं प्राणियो पर आजीवन काम करना है। जोसेलिन क्रेन के मन मे आज भी वह स्मृति ताजा है। इल्ली (Caterpillar) से उसे विशेप मोह था। मकडियो को भी वह वहुत पसद करती थी। आगे चलकर उसे इन्ही पर तथा दूसरे प्राणियो पर काम करना था। अन्य लोगो की अपेक्षा उसने यह तथ्य कही पहले हृदयगम कर लिया था कि इन जानवरो तथा पेड-पौधो से इतर अन्य जीवधारियो को प्राणिवर्ग मे रखा जाता है।

इस नन्ही वालिका के सभी परिचित, विशेप रूप से उसके मा-वाप, शीघ्र ही समझ गए कि उसके जन्म-दिवस या वडे दिन के अवसर पर उसे किस प्रकार की पुस्तकें उपहार मे देनी चाहिए। प्राणियो से सवद्ध हर वात मे उसे आनन्द आता था। छोटे प्राणियो मे उसे अपेक्षाकृत अविक आनन्द आता था। केकडो, मधुमक्खियो और दूसरे छोटे-छोटे प्राणियो की तस्वीरो मे (उसे आगे चलकर पता चला कि इन्हे सधिपाद कहते हैं) वह खो जाती थी। जव भी मौका मिलता वह सधियुक्त उपागोवाले इन सुदर नन्हे प्राणियो की तस्वीरो पर चिंतन करती वैठी रहती थी। आज भी वह चाहती है कि काश, उसे याद आ सके कि उन चित्रो पर दृष्टि गडाए वह मन ही मन क्या कुछ सोचती रहती थी।

पढ़ना सीखते ही उसने विदेशो के वारे मे अधिक मे अविक जानकारी हासिल करनी शुरु कर दी। इस वार फिर उसके मां-वाप ने वुद्धिमत्तापूर्वक उसे सहयोग

दिया। एशिया उसे आकृष्ट करने लगा—विशेष रूप से उसके गर्म प्रदेश—यह सम्मोहन कुछ वैसा ही था जैसा वचपन मे इल्लियो का था। वह निश्चित रूप से नही कह सकती कि वह खुद एशिया के प्रति आकृष्ट हुई थी या उस महाद्वीप मे रहनेवाले असंख्य छोटे प्राणियो के प्रति, किन्तु इतना तो निश्चित ही है कि वह वडी होते ही वहा के लिए चल देना चाहती थी। उसे उत्तरी चीन या तिव्वत के उन ठडे और निर्जन प्रदेशो ने या हिमालय की उन चोटियो ने आकर्षिक नही किया जिनका आकर्षण पर्वतारोहण मे रुचि लेनेवाले वच्चे के मन मे होता। उसे पूर्व के उष्णकटिवधीय जगलो ने आकर्षित किया। इसके वाद उसने अफ्रीका और दक्षिण अमरीका के जगलो की वावत सुना और उसके मन मे इन महाद्वीपो मे रहनेवाली हर छोटी जीवित चीज़ से साक्षात्कार करने की लालसा जाग उठी।

जोसेलिन क्रेन की कोटि के वच्चे विरले होते है जो इतनी छोटी उम्र मे जान सके कि उन्हे क्या करना चाहिए। देखा जाए तो जोसेलिन के साथ तो यह यू भी नही होना चाहिए था क्योकि उसके परिवार मे उसके पहले इन चीजो मे किसीने रुचि नही दिखाई थी। ऐसे वच्चे तो और भी विरले होते हैं जो वय प्राप्त होते ही अपने अभीष्ट काम मे हाथ लगा दे; और ऐसा तो एकाध ही होता है जो जीवन के मध्य मे पहुचकर यह निष्कर्ष निकाले कि छ· वर्ष की अवस्था मे उसने जो निश्चय किया था उसके लिए वही उचित था तथा किसी दूसरे काम मे उन्हे वह सतोप मिल ही नही सकता था, जो उन्होंने अपने जीवन मे पाया। "मैं वडभागी थी," उसका कहना है। वह महसूस करती है कि अपना काम चुनने मे उसे कोई उलझन नही हुई क्योंकि वह अपने इसी काम मे सफल सिद्ध होने के लिए उत्पन्न हुई थी।

वडभागी तो वह थी, किन्तु जोसेलिन क्रेन की प्रारभिक शिक्षा-दीक्षा कुछ इस प्रकार की हुई कि यदि विज्ञान के किसी दूसरे विद्यार्थी को वैसी शिक्षा मिली होती तो शायद वह पिछड जाता। जव वह छ. वर्ष की थी, और स्कूल जाने ही वाली थी, तभी उसके परिवार ने उसके जन्म-स्थान सैंट लुई को छोड दिया और उसके वाद अपने शेप स्कूल-जीवन मे वह वार-वार स्थान वदलती ही रही। पहली छ. कक्षाओ की उसकी शिक्षा ११ स्कूलो मे हुई जो वाशिंगटन डी० सी० और लॉस एंजिल्स, आदि नगरो में स्थित थे। उसे हर जगह से इतनी जल्दी चल देना पडता था कि आज जव वह अपने अध्यापको, स्कूल की कक्षाओ और इमारतों को याद करती है तो कुछ भूल कर जाती है, और यह एक हद तक स्वा-

भाविक ही है, जब वह ११ वर्ष की थी और सातवी कक्षा के लिए तैयार थी तो उसकी मा ने उसे शिकागो के यूनिवर्सिटी स्कूल मे दाखिल करा दिया। इस स्कूल मे उसे उन लडकियो के साथ चलने मे कोई परेशानी नही हुई जिन्होने एक ही स्कूल मे जमकर पढाई की थी। वर्षांत मे हाई स्कूल की पढाई के लिए उपयुक्त समझकर उसके अध्यापको ने उसे आठवी कक्षा मे चढा दिया। अध्यापको का यह निर्णय उचित ही था, इस प्रकार जब सन् १९२६ मे जोसेलिन ग्रेजुएट हुई तो उसकी उम्र औसत ग्रेजुएट से एक वर्ष कम अर्थात् १७ वर्ष की ही थी, और कॉलिज प्रवेश-परीक्षा मे उसके इतने नबर आ गए थे कि वह जिस कॉलेज मे चाहती, प्रवेश पा सकती थी।

जिस प्रकार छ वर्ष की उम्र मे उसे यह मालूम हो गया था कि वह छोटे प्राणियो पर काम करेगी, ठीक उसी प्रकार १३-१४ वर्ष की अवस्था मे उसे यह भी मालूम हो गया था कि वह स्मिथ कॉलेज मे पढेगी। उसे याद नही कि उसने स्मिथ कॉलेज का नाम पहले-पहल किस सिलसिले मे सुना था या वह वहा क्यो जाना चाहती थी। यूनिवर्सिटी स्कूल मे उसकी अध्यापिका समझ गई थी कि उसकी रुचि प्राणिविज्ञान मे है, और यद्यपि उस स्कूल मे प्राणिविज्ञान नही पढाया जाता था कि जोसेलिन की योग्यता का निश्चय कर पाना सम्भव होता, लेकिन उन्होने उसे भौतिकी रसायन और ढेर-सा गणित आदि विषय दे दिए थे जो विज्ञान के छात्र के लिए आवश्यक माने जाते हैं, और वे सब इस तथ्य को स्वीकार करती थी कि जोसेलिन क्रेन एक ऐसी छात्रा है जो यह समझती है कि उसे क्या करना है। उसे यह भी पता था कि प्राणिविज्ञान की पढाई के लिए स्मिथ कॉलेज सर्वश्रेष्ठ है। इस प्रकार सन् १९२६ मे इस नीली आखोवाली लम्बी, पतली, और उजले रग की नवयुवती ने नार्थेम्पटन मे पदार्पण किया। उसे ज्ञात था कि वह स्मिथ कॉलेज क्या करने आई है, भले ही कालेज के अधिकारियो ने दूसरे वर्ष के अत से पहले उसे अपना प्रमुख विषय चुनने की अनुमति नही दी।

नई छात्रा के रूप मे उसे प्राणिविज्ञान विषय दे दिया गया। उसे इस विषय मे बडा आनन्द आया, और वह इसमे बडी सफल रही, मगर उसने अपने अध्ययन के शेष सभी विषयो मे भी अच्छे अक प्राप्त किए। अगले वर्ष उसने प्राणिविज्ञान का एक और कोर्स लिया और खगोलविज्ञान मे भी एक कोर्स ले लिया—ताकि जगलो की इस यायावर को तारो का भी ज्ञान हो सके। उस वर्ष उसकी फैकल्टी

के परामर्शदाता ने उसे प्राणिविज्ञान मे विशेष ऑनर्स कर लेने का सुझाव दिया। जब वह जूनियर इयर का काम करने के लिए तैयार हो गई तब उसने इस सुझाव को मान लिया।

जोसेलिन क्रेन आखिरी दम तक इस बात के लिए अत्यन्त कृतज्ञ रहेगी कि स्मिथ कॉलेज ने उसकी व्यक्तिगत आवश्यकताओ को समझा और अपने जीवन को इच्छानुसार ढालने के लिए उसके सामने सुविधाओ का अक्षय भडार खोल दिया। कोई एक शिक्षक नही, बल्कि बहुत-से शिक्षक उसे स्मिथ कॉलेज से अधिकाधिक लाभ उठाने को प्रेरित करते थे। वे अधिक से अधिक ज्ञान अर्जित करने मे उसकी सहायता करते थे। कॉलेज मे अपने अतिम दो वर्षो मे वहा उपलब्ध और प्राणिवैज्ञानिक के जीवन मे प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सम्बद्ध, सभी विषयो का उसने अध्ययन किया, जैसे तुलनात्मक शरीर-रचना विज्ञान, अवशेष विज्ञान (Paleotology), मानव विज्ञान, कीट विज्ञान और भ्रूण विज्ञान। विशेष ऑनर्स की छात्रा होने के नाते उसे अपने सीनियर इयर से पहले परीक्षा मे बैठने की छूट थी। प्रति सप्ताह वह प्रोफेसरो के साथ बैठको मे भाग लेती, ऑनर्स न लेनेवाले छात्रो के काम से अतिरिक्त विशेष प्रायोगिक अध्ययन करती थी, और इस दौरान उसने अपनी मौलिक शोध पर आधारित एक प्रबन्ध भी लिखा। जोसेलिन क्रेन के लिए स्मिथ कॉलेज एक भावी प्राणिवैज्ञानिक का 'सर्व सुविधा-सम्पन्न स्वर्ग' था। उसे अग्रेजी, कला और सस्कृति-विषयक दूसरी कक्षाओ मे उपस्थित होकर अधिकाधिक ज्ञान अर्जित करने की अनुमति प्राप्त थी। सन् १९३० मे वह फाई बीटा कैप्पा और उच्चतम ऑनर्स और प्राणिविज्ञान मे ए० बी० के साथ ग्रेजुएट हुई और उसी वर्ष, तुरन्त ही वह न्यूयार्क के लिए रवाना हो गई जहा उसे न्यूयार्क जूओलॉजिकल सोसाइटी के उष्णकटिबधीय शोध विभाग मे नौकरी मिल गई थी, और तब से आज तक वह वही है।

उसे एक नौकरी विलियम बीब ने दी थी। अपने जमाने के प्राणिविज्ञान के अनेक युवा छात्रो की भाति जोसेलिन भी इस रंगीन और साहसी वैज्ञानिक के साथ काम करना चाहती थी, और उसकी मा के एक मित्र ने यह प्रबन्ध किया था कि जोसेलिन अपने जूनियर इयर को बडे दिन की छुट्टियो मे एक दिन लच पर उससे और मिसेज बीब से मिल ले। डॉ० बीब को अपने पक्ष मे करना आसान नही था, क्योकि वह उससे तीस वर्ष सीनियर थे और युवा वैज्ञानिको का चयन करने का

उन्हे सुदीर्घ अनुभव था। "अट्ठारह महीनो तक मुझे अनवरत श्रम करना पडा था," वह सुनाया करती है, "पत्र-व्यवहार से तीन बार और मिलकर, बहुत ही अच्छे अको के प्रमाण-पत्र दिखलाकर, परीक्षा की कापियो और ऑनर्स के दिनो मे लिखे गए प्रबन्ध को दिखाकर बमुश्किल तमाम मैं उन्हे समझा पाई कि मै इस योग्य हू कि मुझे स्वेच्छकर्मचारी के रूप मे काम करने का एक मौका दिया जाए।"

उसके प्रयत्नो का परिणाम यह हुआ कि दीक्षात समारोह के बाद बहुत दिनो तक उसे सोने के लिए समय ही न मिल पाता था। किन्तु अतत उसे नौनसच आइलैंड, बारमूडा, मे जूओलॉजिकल सोसाइटी की रिसर्च लेबोरेटरीज मे जगह मिल गई जहा डॉ० बीब ने पिछले दिनो ही महासागर की गहराई मापने और 'नीचे तली' मे रहनेवाले नन्हे प्राणियो के अपने अध्ययन-कार्य को आगे बढाने के उद्देश्य से अगाध मडल (Bathysphere) का प्रयोग शुरू किया था।

मिस क्रेन मछलियो को सर्वाधिक प्रेम नही करती थी। मगर अगले बारह वर्षों मे उसका सबसे अधिक वास्ता उन्हीसे पडा, क्योकि इस अवधि मे डॉ० बीब बारमूडा के आसपास के क्षेत्र मे गहरे समुद्र की विभिन्न प्रकार की मछलियो के अध्ययन मे लगे रहे। अगले दस वर्षों मे वह एक अनुसधान-जीववैज्ञानिक के रूप मे लगभग छ या आठ बार उसके साथ गई। इन अभियानो के समय यह दल महीनो तक बारमूडा फील्ड स्टेशन पर ठहरता था। वे रोज़ अगाध मडल के प्रयोग से सागर की गहराइयो की खोज करने के लिए एक ऐसी नाव पर निकलते थे जो सागर के निर्दिष्ट क्षेत्र मे सब जगह जा सकती थी। सागर पर विचरण करते समय वे जालो की सहायता से मछलियो के नमूने इकट्ठे करते चलते थे। जालो मे इकट्ठी की गई मछलियो को बाहर से और अन्दर की तरफ से देखने से जोसेलिन क्रेन अब उनमे नये सिरे से रुचि लेने लगी थी। और जब उसके सामने ५४ इची इस्पाती गोलक मे डॉ० बीब के बराबर वाली सीट पर बैठकर समुद्र के हरे पानी मे नीचे उतरने का प्रस्ताव आया तो उसे अपने जीवन मे एक सर्वथा नई पुलक का अनुभव हुआ। एक नाव के सहारे उसका गोलक समुद्र मे उतार दिया गया।

उसकी आखे गोलक की खिडकी से सटी हुई थी, और उस खिडकी के परे छोटे-छोटे जीव तैर रहे थे। उसने देखा, समुद्र का पानी पहले नीलिमायुक्त हरा, और फिर, कालिमायुक्त नीला हो गया। फिर पानी गहरा नीला हो गया। अब

छोटी-छोटी विजलिया चमकने लगी थी—समुद्री जीवन की वह अवदीप्ति (Luminesence) उजागर हो रही थी जो प्रकाश और वायु के अभाव मे भी लाखो वर्षो से अपने अस्तित्व को वनाए हुए थी। अव अगर आप स्वय को इस स्थिति मे रख सकते है तो कल्पना कर सकते है कि उसे कितना आनन्द आया होगा—वीव उस तिमिर-गर्भ मे प्रकाश फेक रहे थे और चारो ओर रगीन जीव दिखाई दे रहे थे, उनमे से कुछ तो वाकई वडे विचित्र थे। जो कुछ वह देख रही थी उससे भी कही अधिक वीव का वह विवरण था जो वह विजली की-सी तेज़ी अगाधमडल मे लगे हुए टेलीफोन पर दे रहे थे। सागर-तट पर वैठे वैज्ञानिक उस विवरण को सुनकर उसकी रिपोर्ट तैयार करते जा रहे थे। उनमे चीज़ो को देखते ही उन्हे पहचान लेने की अद्भुत क्षमता थी, और अव डॉ० वीव के निरीक्षण की गति और सुस्पष्टता के प्रति जोसेलिन की आदर-भावना पहले से भी अधिक हो गई। वह सोच रही थी कि डॉ० वीव जिन चीज़ो को पलक मारते पहचान लेते है उन्हे पहचानने मे स्वय उसे काफी देर लग जाती—भले ही अव उसे इतना ज्ञान हो चला था कि वह डॉ० वीव के मुह से शब्द निकलते ही समझ जाती थी कि उनका विवरण सही ही है।

सन् १९३४ मे एक दिन डॉ० वीव समुद्र मे ३००० फुट से भी अधिक नीचे उतरे, मगर मिस क्रेन को वह लगभग चौथाई मील से नीचे नही ले गए। यद्यपि एक ऐसे व्यक्ति के लिए, जो लोहे के तारो से वाधकर समुद्र मे उतारे गए चौथाई मील नीचे के पानी के भयकर दवावो से दोलायमान इस्पात के खोखले गोलक मे वैठने से नही डरता, नीचे उतरना एक आनन्ददायक अनुभव ही सिद्ध होता, लेकिन इन अभियानो की रिपोर्ट तैयार करना और पडाव पर होनेवाले दूसरी तरह के काम वडे कठिन थे। जो भी इन लम्वे तकनीकी लेखो को देखता है जिनसे दुनिया को इस प्रकार के अध्ययनो और निरीक्षणो से प्राप्त जानकारी हासिल हो सकी है, वह उनके सूक्ष्म विवेचन एव विश्लेषण, वैज्ञानिक ज्ञान और निरीक्षण की सुस्पष्टता का कायल हो जाता है, और कल्पना कर सकता है कि अन्वेषकों के वे महीने मानसिक और शारीरिक रूप से कितने श्रमपूर्ण रहे होगे।

वारमूडा अभियान की गहरे समुद्र की मछलियो से सवद्ध इन चार विस्तृत रिपोर्टो पर विलियम वीव के साथ जोसेलिन क्रेन के भी दस्तखत मौजूद है। उन रिपोर्टो मे कई सौ नमूनो की मछलियो के वारे में विस्तृत जानकारी दी गई है,

बीसियो जातियो मे उनका वर्गीकरण किया गया है, और वैज्ञानिको द्वारा वरसो मे जमा किए गए उसी जाति और अन्य जातियो के नमूनो के वर्गीकरण-विपयक आकडो मे उन्हे समुचित स्थान दिया गया है।

समय बीतने के साथ मिस क्रेन के मन मे यह स्पष्ट होता जा रहा था कि मृत की अपेक्षा जीवित प्राणियो मे उसकी रुचि अधिक है। अपने दूसरे सहकर्मी प्राणिविदो की भाति वह भी किसी मृत प्राणी का विच्छेदन और विश्लेषण कर सकती थी और इस प्रकार, मानवीय ज्ञान मे यत्किचित् अभिवृद्धि करके सतोप-लाभ कर सकती थी। लेकिन, छोटे जीवित प्राणियो के व्यवहार का अध्ययन करने की उसकी इच्छा अत्यन्त बलवती थी। उसने केकडो का अवलोकन भी शुरू कर दिया था और उसे प्रतीत हुआ कि उनकी व्यवहार-पद्धति मे उसकी रुचि वहुत अधिक है। वह इन प्राणियो का अध्ययन करना चाहती थी, क्योकि इन्हे अपने काम मे लगे देखकर, और एक-दूसरे के सदर्भ मे इनका अध्ययन करने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुची कि इनसे सबद्ध क्रियाए आदि निश्चित रूप से ऐसे रहस्यो पर प्रकाश डाल सकती हैं जो अभी मानव-मन के लिए अगम्य है। अब इन छोटे प्राणियो की सामाजिक आदतो का अध्ययन उसका सर्वाधिक प्रिय विषय हो गया, और इसके लिए उसे निश्चय करने मे कोई झझट नही हुई, वल्कि अपनी जन्मजात प्रतिभा के कारण वह स्वाभाविक रूप से इसी निष्कर्ष पर पहुची।

अब हर युवा प्राणिविद् की भाति उसे भी एक वात का फैसला कर डालना था। उसे दो विकल्पो मे से एक को चुनना था, या तो वह पी-एच० डी० करती अथवा उसके विना ही छोटे प्राणियो के व्यवहार के आकर्षक क्षेत्र मे उतर पडती। यद्यपि उसने पी-एच० डी० को छोडकर दूसरा विकल्प ही चुना, लेकिन अन्य युवा वैज्ञानिको को वह ऐसा करने की सलाह नही देती। उसके अपने शब्द इस प्रकार है

"मैंने इस वात पर विचार किया, और डॉ० वीव से भी वात की। इतना तो मैं निश्चित रूप से समझ चुकी थी कि मेरी रुचि अध्यापन मे नही थी, वल्कि मैं छोटे प्राणियो का उनके प्राकृतिक निवासो मे अध्ययन करना चाहती थी। किसी विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला मे मैं जो काम कर सकती थी वह मैं पहले ही कर चुकी थी, और प्रयोगशाला मे उसे जारी रख सकती थी। डॉ० वीव मेरी इस वात से सहमत थे कि मैं जिस प्रकार का प्राणिवैज्ञानिक अध्ययन करना चाहती थी,

उसके लिए आवश्यक शिक्षा मैंने स्मिथ कॉलेज मे ही प्राप्त कर ली थी, इसलिए मैंने कॉलेज वापस न लौटने का फैसला किया।

"मेरा यह निश्चय मेरे लिए शुभ रहा, क्योकि मैं अपनी सोसाइटी मे और डॉ० वीव के साथ पूर्ववत् काम करती रही, अपने अभीप्सित काम मे सफल रही, और अपने प्रशासकीय उत्तरदायित्व को भी निभाती रही। किंतु यदि कॉलेज के दस-पंद्रह वर्ष बाद मुझे अचानक किसी नई नौकरी की तलाश करनी पडती तो पी-एच० डी० के अभाव मे मुझे अपने लिए कोई बहुत अच्छी नौकरी तलाश करने मे कठिनाई हो सकती थी। मैंने यह खतरा मोल लिया, और मैं खुश हूं कि मैंने ऐसा किया, लेकिन ईमानदारी की बात यह है कि मै दूसरो को यह सलाह नही दे सकती। मैं भाग्यशाली थी।"

हा, वह भाग्यशाली थी—क्योकि ग्रेजुएट होने के पाच वर्ष बाद वह एशिया के अपने पहले दौरे पर निकल पडी। कुछ महीने वह कुर्दिस्तान रही। वहा उसने पहाडी इलाको के कीडे-मकोडो का अध्ययन किया। एक दिन नारंगी जाकेट पहने एक छोटा लडका उसके पास आया और उसने उसे एक ऐसी चीज दी जिसकी उसे सख्त जरूरत थी। यह चीज़ एक फुदकती हुई सलेटी फरवाली नन्ही-सी गिलहरी थी जो कुछ ही पहले एक पेड पर एक घोसले मे पैदा हुई थी, जहा से वह लडका उसे उठा लाया था। गिलहरी का यह बच्चा इतना छोटा था कि मिस क्रेन उसके माध्यम मे उन गिलहरियो के व्यवहार का अध्ययन नही कर सकती थी जो अपना खाना खुद जुटाती हैं। इसलिए, उसने यह पता लगाने का निश्चय किया कि यदि इस बच्चे को उसकी प्राकृतिक आदतें न सीखने दी जाए, उसे बिना प्रयत्न के भोजन दे दिया जाए, और घर के अन्दर पालतू बनाकर रखा जाए तो इसकी उसपर क्या प्रतिक्रिया होगी।

तीन दिन बाद एक ऐसी घटना घटी कि उसका यह प्रयोग नष्ट होने मे बाल-बाल बच गया। मिस क्रेन अपने कमरे मे बैठी टाइप कर रही थी कि किसी बात से डरकर गिलहरी का यह बच्चा उसके जलते हुए चूल्हे मे घुस गया। वह तडप-कर बाहर निकला और चीं-चीं करता हुआ कमरे की पत्थर की दीवार पर चट-कर कडी के एक छेद मे छिपकर बैठ गया। अपने खाने के समय से पहले वह वहा से नही उतरा। खाने के समय पर ही दवा डालने के ड्रॉपर मे बकरी का दूध भरकर, और उसे दिखाकर वह उसे नीचे आने के लिए फुसला सकी। उसका

फर जल गया था, मुह के ऊपर के वाल भी जल गए थे, लेकिन सौभाग्य से उसे कोई विशेष क्षति नही पहुची थी। उसने वच्चे का नाम शाड्राच (Sbadrach) रख दिया और फीते की एक मुलायम गद्दी पहनाकर उसके गले मे एक डोरी वाध दी ताकि घर के वाहर भी उसकी गतिविधि का अध्ययन किया जा सके। जव कोई कुत्ता या अपरिचित व्यक्ति उसके घर की ओर आता तो उस वच्चे के व्यवहार से ही उसे यह सूचना मिल जाती थी। ऐसे मौको पर शाड्राच फौरन मिस क्रेन के ऊपर चढकर उसकी जेव मे छिप जाता था।

लेकिन वह सभी जानवरो से, विशेष रूप से जव वह कमरे के अन्दर होता तव, नहीं डरता था। एक दिन शाम के समय वह टाइप कर रही थी कि उसे कुछ आवाज-सी सुनाई दी और उसने देखा कि वडी आखोवाले दो जगली चूहे किवाड की दराज़ मे कमरे मे घुसने के लिए ज़ोर लगा रहे है। जव वे सही-सलामत अन्दर आ गए तो वे कुछ रुके, इधर-उधर सूघा और चौकन्ने होकर उस ओर वढे जिधर शाड्राच के भोजन मे से वची हुई कुछ अखरोट की गिरी रखी थी, उसके पास ही शाड्राच अपने खोखले तूवे मे सो रहा था। वह जगा, पहले नाक और फिर पूरा सिर तूवे के वाहर निकाला, और चूहो को घूरकर देखा। चूहे सहमकर एक क्षण पीछे हटे। इसपर शाड्राच ने एक प्रकार की आवाज की और फिर तूवे मे जाकर सो गया। चूहो ने उसका वचा हुआ भोजन चट किया, और चलते वने। अगले दिन शाम को वे फिर आए और फिर मिस क्रेन और शाड्राच जितने दिन वहा रहे, ये चूहे अक्सर आते ही रहे। इससे स्पष्ट हो गया कि शाड्राच चूहो की तरफ से निडर ही नही था, वल्कि वह अपने उस भोजन का कुछ हिस्सा भी उन्हे दे देना चाहता था जिसे अर्जित करने मे उसे कोई मेहनत नहीं करनी पडती थी। फिर भी, जिस दिन चूहे पहली वार आए थे उसके अगले दिन मिस क्रेन ने देखा कि शाड्राच ने पहली वार कमरे के फर्श मे एक छेद वना लिया है। इसके वाद उसने अपने भोजन मे से एक गिरी उठाई और उसे इस छेद मे दवा आया—मानो पिछली शाम के अनुभव ने उसकी कोई सहज वृत्ति जाग उठी हो कि जरूरत के वक्त के लिए कुछ भोजन जमा कर लेना अच्छा रहेगा।

कुर्दिस्तान मे अपना अध्ययन समाप्त करने के वाद उसे पता चला कि उष्ण-कटिवधीय शोध विभाग का फील्ड स्टेशन एक जलपोत पर दो वर्ष के लिए कैलि-फोर्निया की खाडी और पूर्वी प्रशात महासागर की ओर जा रहा है। वह भी इस

जलपोत पर गई और वहा जाकर उसने केकडो का अध्ययन किया। इन जीवो पर उसने पहले-पहल जो लेख लिखे उनमे से कुछ लेख इन दौरो मे, लोअर कैलिफोर्निया प्रायद्वीप और मैक्सिको व केन्द्रीय अमरीका के पश्चिमी किनारे पर पाए गए केकडो के बारे मे हैं। रास्ते मे विभाग द्वारा किनारो पर स्थापित स्टेशनो मे रुककर उसने ब्राक्यूरन केकडे इकट्ठे किए, और उन्हे अध्ययन के लिए न्यूयार्क ले आई। लेकिन सबसे पहले उसने जीते-जागते केकडों का ही अध्ययन किया। उनका सुर्ख मूगे जैसा लाल, गहरा भूरा, पीला या पीला-हरा अबरी रग उसके लिए बडा दिलचस्प विषय था। एक मादा केकडे को पकडने के लिए मिस क्रेन को एक अधेरे-तूफानी दिन रेत मे दूर तक भागना पडा था। पकडाई के वक्त इसकी बाहरी खोल का रग कुछ बैंगनी और सलेटी जैसा था। जब दो दिनो तक इस केकडे को, तली मे रेती की तह लगे हुए सदूक मे, धूप मे रहना पडा तो इसका रग चमकीले मूगे जैसा हो गया। उसने गौर किया कि कुछ अन्य जीवो की भाति बडे नर केकडे का रग सबसे अधिक चमकीला था, मादा केकडो का रंग नर के मुकाबले कम चमकीला था, और बच्चो का रग सबसे कम चमकीला था।

यह शब्दश. सत्य है कि उसने अपने बिल खोदने मे लगे हुए कई सौ केकडो का निरीक्षण किया। उसे पता चला कि वे अपना बिल बनाने मे तीन अलग-अलग शिल्पो का प्रयोग करते हैं। वह इस निश्चय पर पहुची कि केकडो की इन आदतों और उनके रेत-कणो को ढोने और उस रेत से अपने बिलो के इच्छानुसार निर्माण करने के ढग का विस्तृत अध्ययन होना चाहिए। उसने देखा, उच्च ज्वार के उतरते ही केकड़े अपने बिलो के दरवाजो पर आ जाते है। पहले कुछ सुस्ताकर वे अपने बदन की सफाई करते हैं। शुरू मे वे "अपने तीसरे मैक्सिलिप्ड के स्पर्शक (Pelp) से अपनी आखे मलते थे।" एक घण्टा बीतने पर वे प्राय सबसे बड़े केकडे को आगे करके ज्वार के किनारे की ओर चल पडते थे ताकि वहां रह गई चीजो का भोजन कर सकें, जो चीज़े उनके बिलो के आसपास जमा हो जाती थीं उनकी खबर वे बहुत बाद को लेते थे। पहले वे धीरे-धीरे चलते, फिर कुछ तेज़, और अन्ततः वे दौडने लगते थे।

ज्वार के पुनरागमन के पूर्व ही वे अपने पुराने बिलो की मरम्मत करने और नये बिल बनाने के लिए वापस लौट आते थे। काम करते समय वे अपने बिलों के

आसपास रह गई चीज़ो को खाते थे। "तब केकडे धीरे-धीरे अपने बिलो की ओर लौट पडते, सामान्यतया वे अपने साथ कुछ रेत लेकर लौटते थे। उच्च ज्वार के आने से कोई पचास मिनट पहले एक भी केकडा सागर-तट पर न रहने पाता था।" उच्च ज्वार, निम्न ज्वार—और प्रतिदिन यही कहानी दुहराई जाती थी।

अभी दुनिया-भर के समुद्र-तटो पर पाए जानेवाले इन प्राणियो पर किया गया उसका महत् कार्य आरम्भ ही हुआ था। केकड़ो, विशेष रूप से फिडलर (एक प्रकार के छोटे) केकडो के बारे मे वह इतनी दिलचस्प बाते बता सकती है कि सुननेवाले या उसकी स्लाइडो और चलचित्रो को देखनेवाले अधिकाश लोग यह रहस्य समझ सकते है कि उसने महीनो और वर्षों पकिल तटो पर बैठकर इन जीवो के व्यवहार का अध्ययन क्यो किया है, और आगे भी इसे क्यो जारी रखना चाहती है। दूसरे लोगो की तरह वह होटलो के मीनू-कार्ड पर केकडो की तलाश नही करती, बल्कि उसके लिए केकडे छोटे प्राणियो के उन तीन वर्गों से सम्बन्ध रखते है जिनके सामाजिक व्यवहार की विभिन्नता और पेचीदापन सदैव उसकी रुचि का विषय रहा है। ये तीन वर्ग है—केकडे, मकडिया और तितलिया। वह एक निपुण चलचित्र-कैमरा-ऑपरेटर हो गई। उसे रगीन व काले और सफेद—दोनो ही प्रकार के चलचित्रो के निर्माण मे निपुणता प्राप्त हो गई। उसके तीनो प्रिय वर्गों के प्राणियो के रगो का उनके सामाजिक जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है, इसलिए इनके अध्ययन मे रगीन चलचित्रो का महत्त्व सर्वोपरि है।

जैसाकि इस सबसे स्पष्ट है, काम शुरू करने के बाद मिस क्रेन को १२ वर्षों तक उष्णकटिबध के जगलो मे जाकर अपनी बचपन की साध को पूरा करने का अवसर नही मिला, लेकिन यह कमी भी पूरी होती ही थी। सन् १९४२ मे उसके विभाग ने केरीपौटो, वेनेजुला, नामक स्थान पर, उस क्षेत्र के आस-पास काम करनेवाली अमरीकी तेल कम्पनियो की रुचि होने के कारण एक अस्थायी फील्ड स्टेशन स्थापित किया। उस वर्ष, इस काम मे इतनी सफलता मिली कि दक्षिण अमरीका के जंगलो मे एक स्थायी स्टेशन खोलने पर पैसा खर्च करना सभव हो सका। अब मिस क्रेन को यह काम सौंपा गया कि वह वेनेजुला, कोलबिया और इक्वेडोर प्रदेशो की छानबीन करके यह पता लगाए कि स्टेशन के लिए सबसे अच्छी जगह कौन-सी रहेगी।

इस तरह का काम शारीरिक कष्ट से रहित नही था। [illegible] नेचे

का निर्धारण करना ही आसान था जो न बहुत गीला हो न बहुत सूखा, जिसमे बाहर से आनेवाला सामान बिना किसी कठिनाई के आ सके, जिसमे जीवो और पौधो के जीवन का सर्वोत्तम रूप पाया जाता हो, जो मानवो के हस्तक्षेप से परे कुछ काल तक स्वाभाविक विकास करता रहे, और जो उन मोटिलोन आदिवासियो से दूर पडे जिन्हे गोरे लोगो को मार डालने मे विशेप आनन्द आता है। वह हवाई जहाज से उतरकर घोडे पर बैठ जाती, और कई-कई दिनो तक घोड़े की पीठ पर बैठी जगलो की खाक छानती फिरती थी। कभी उसे पता चलता कि अमुक जगल मे बारिश होती है और एक बार बारिश होने पर वह महीनो गीला रहता है, और चूकि उसमे बारिश का पानी जमा हो जाता है, इसलिए उसमे कुछ विशेप जीव ही रह सकते है, सब नही। कभी पता चलता कि किसी दूसरे जगल मे बारिश तो ठीक अनुपात मे होती है लेकिन ढलवा होने के कारण उसकी मिट्टी इतनी जल्दी सूख जाती है कि अध्ययन के लिए आवश्यकता पडने पर जीव-जन्तु अपने-अपने बिलो मे छिप जाते है।

बाकी दिनो मे वह झीलो और नदियो के जगलो मे पडनेवाले किनारो का अध्ययन करती थी। यद्यपि वह सामान्यजन को सतानेवाले अनेक प्रकार के भय से मुक्त थी, फिर भी एक जगह उसने कबूल किया है कि एक बार जब उसके विमान-चालक ने नीचे जगल की ओर इशारा करते हुए कहा कि यदि इस समय हमारा विमान दुर्घटनाग्रस्त हो जाए तो हम हत्यारे कबीलो के हाथो पड जाएगे, तो मैं डर गई थी, "एक महीने पहले विमान-चालक की इस बात को शायद मैं मज़ाक समझकर उडा देती, लेकिन अब अनजाने ही मेरे कान विमान के इजन की गड़गडाहट पर लग गए, और मेरा मन चाहने लगा कि यह निर्बाध रूप से ऐसी ही जारी रहे।"

इस दौरे के परिणामस्वरूप जूओलॉजिकल सोसाइटी का नया फील्ड स्टेशन उत्तरी वेनेजुला मे एक पहाडी की चोटी पर रान्चो गाड नामक स्थान मे स्थापित हुआ। शीघ्र ही मिस क्रेन फुदकनेवाली मकडियो के गभीर अध्ययन में तल्लीन हो गई। उसे पता चला कि इन पेचीदा प्राणियों की कामारायन की कुछ आदतें (courting habits) फिडलर केकडो से मेल खाती हैं। जिस प्रकार अमरीकी फिडलर अपनी मादा को रिझाने के लिए अपने लम्बे पजे को हिला-हिलाकर देर तक पेचीदा नृत्य करता है, उसी प्रकार इस जाति के मकडे भी अपनी मादाओ

को आकर्षित करने के लिए नृत्य का सहारा लेते थे। ये मकडे दूसरे नरो से, 'जावा के नर्तको की तरह सश्लिष्ट और स्टाइलयुक्त द्वद्व मे उलझ जाते थे," और द्वद्व मे ज़िदा वचे मकडे मादाओ को रिझाते थे, और इनकी आखो का रग बहुत ही तेज़ रफ्तार से हरे से काला और काले से हरा होता रहता था। इन मकडो की कामाराधन की आदतो पर उसने जो लेख लिखे उनका प्राणियो के व्यवहार के अध्ययन मे वही महत्त्व है जो केकडो पर लिखे गए उसके लेखो का है।

ऐंड्स मे, और फिर ट्रिनीडाड मे, उसने तितलियो का भी अध्ययन किया, वह वहुत दिनो से उष्णकटिबधो के कुछ प्राणियो के चमकीले रगो के वारे मे शोध कर रही थी। क्या इन रगो का उनके सामाजिक सम्बन्धो मे कोई उपयोग है ? मिस क्रेन इसका पूरा उत्तर नही जानती, लेकिन उसने तितलियो पर जो काम किया उससे इस प्रश्न का आशिक उत्तर मिल गया है। उसने इन तितलियो पर एक हल्के निश्चेनक (Anesthetic) का प्रयोग किया, और उन्हे रग प्रदान करनेवाली धूल जैसी पपडी को आहिस्ता से खुरच दिया। उसने किसी-किसी खूवसूरत मादा तितली को, उसके पखो को काला रगकर, हू-व-हू वाल फ्लॉवर की शक्ल मे बदल दिया, और मादा तथा नर तितलियो को फैल्ट कपडे की वनाई गई नारगी और लाल रग की नकली तितलियो की तरफ आर्कषित किया। इस प्रकार उसे पता चला कि विरोधी लिगवाली तितलियो को एक-दूसरे के प्रति आकृष्ट करने और उनकी जातियो को स्थायित्व प्रदान करने मे सदैव नही तो कभी-कभी रग सहायक सिद्ध होता है।

द्वितीय महायुद्ध के अतिम रूप से समाप्त हो जाने पर मिस क्रेन पहले एशिया गई, फिर दक्षिण पैसिफिक, और तव अफ्रीका। सन् १९५० के दशक के आरभ मे नेशनल माइस फाउडेशन ने उसे एक अनुदान दिया और जूओलॉजिकल सोसाइटी के सहयोग से यह व्यवस्था की कि मिस क्रेन पाच वर्षों तक हर वर्ष अपना एक-तिहाई समय ससार-भर मे फैले हुए ओसिपोडिड केकडो के अध्ययन मे व्यतीत करे। इस तरह के फड यूही नही दे दिए जाते, लेकिन मिस क्रेन प्राणियो के व्यवहार के जिस क्षेत्र मे काम करना चाहती थी उसके लिए क्रस्टेशिया का यह वर्ग-विशेष उपयुक्त था। इसका कारण यह था कि इस वर्ग के विकासात्मक पक्ष मे केवल प्राणिविद् ही नही बल्कि दूसरे जीव-वैज्ञानिक भी रुचि ले रहे थे। इसलिए इस अनुदान द्वारा वह जो काम करेगी, वह जीव-विज्ञान के सामान्य क्षेत्र के दूसरे

विशेषज्ञो के लिए भी महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा।

तीन वर्षों तक लगातार वह अकेली उन स्थानो पर जाती रही जहा जाने की उसकी उत्कट इच्छा थी। वह अपने साथ कैमरा और दूसरा जरूरी साज-सामान भी ले गई, और शीघ्र ही उसे मलाया, ताहिती, दूसरे दक्षिणी समुद्री द्वीपो और अफ्रीका के पकिल तटो पर बैठा पाया जा सकता था। जब छोटे प्राणियो के इस विश्वव्यापी वर्ग का यह व्यापक अध्ययन पूर्ण हो जाएगा और इसके निष्कर्ष प्रकाशित कर दिए जाएगे तो इस क्षेत्र मे यह सर्वाधिक प्रामाणिक, दिलचस्प और पूर्ण वैज्ञानिक योगदान माना जाएगा। केवल वैज्ञानिक ही इसमे रुचि नही लेंगे। जीवन के विभिन्न रूपो मे पाई जानेवाली समानताओ और विभिन्नताओ को जानने के लिए सामान्य जन भी उत्सुक रहते हैं। जीवन-शक्ति की एकता, मनुष्य और अन्य जीवो का विकास और उनके पूर्वजो के मूल की खोज—ये कुछ ऐसे विषय है जिनपर अनेक चितनशील मनुष्य सोचते रहते हैं। मिस क्रेन ने प्राणियो के व्यवहार के क्षेत्र मे अब तक जो कार्य किया है उसने इस क्षेत्र मे मनुष्य के ज्ञान मे अभिवृद्धि की और उसकी कल्पना को व्यापक बनाया है।

हारवर्ड के भूतपूर्व प्रेसिडेंट जेम्स कोनेट ने अपनी एक पुस्तक मे लिखा है कि अधिकाश वैज्ञानिको के, "काम का औचित्य उस कार्य-विशेष मे उन्हे मिलनेवाले सृजन के आनन्द मे ढूढा जा सकता है," जेम्स कोनेट को वह भावना प्रिय थी जो किसी वैज्ञानिक को, कलाकार को अनुप्राणित करनेवाला कल्पनाशील दृष्टिकोण अपनाने की ओर प्रवृत्त करती है। इसमे कोई सदेह नही है कि जोसेलिन क्रेन एक ऐसी ही वैज्ञानिक है। वह मूलतः स्वात सुखाय दृष्टिकोण से काम करती है, और फिर भी, उसके समवर्गीय वैज्ञानिक उसके काम को सराहना की दृष्टि से देखते है। उसका विश्वास है कि जीवित प्राणियो के व्यवहार के अध्ययन से सम्पूर्ण प्राणियो की जातियो के विकास के बारे मे अत्यन्त मूल्यवान सकेत और जानकारी मिल सकेगी, और नये विषयो के चुनाव मे बुद्धिमत्ता का प्रयोग करते हुए प्राणि-वैज्ञानिक उस विषय मे महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकेंगे।

इस जानकारी को हासिल करना ही उसका लक्ष्य है। यद्यपि यह सच है कि उसे अपने काम मे प्रवृत्त करनेवाली प्रमुख शक्ति यह नही है। उसके मन मे जीवित प्राणियो के बारे मे अधिक से अधिक जानने की जन्मजात अभिलाषा है, और मूलत. अपनी इसी ज्ञान-पिपासा को तुष्ट करने के लिए वह परिश्रम करती

है। उम्र को देखते हुए वह अभी काफी काम करने की आशा कर सकती है, लेकिन यह काम भी उसकी प्यास को कुछ काल के लिए ही शात कर सकता है, सदा के लिए बुझा नही सकता।

फ्लोरेंस वैन स्ट्रैटन

मौसम-विज्ञान एक नवीन विज्ञान है। द्वितीय महायुद्ध के पहले तार-प्रणाली का प्रयोग शुरू हो गया था और इसके कारण मौसम-विज्ञान ने कुछ प्रगति की थी, किन्तु इसका सर्वांगीण विकास नही हुआ था। जब अमरीका दूसरे महायुद्ध मे कूद पडा तो फ्लोरेंस वैन स्ट्रैटन नौसेना मे भरती हो गई, और उसके आला अफसरो ने उसे इस नये विज्ञान के क्षेत्र का काम सौंप दिया। तब से वह इसी काम मे है। पहले वह अमरीकी नौसैनिक अधिकारी थी और सन् १९४६ के बाद से नौसैनिक परिचालन के प्रधान के कार्यालय मे सिविलियन तकनीकी परामर्शदाता के रूप में काम कर रही है। इन पदो पर रहते हुए उसने ऐसे अनेक महत्त्वपूर्ण कामो मे सफलता प्राप्त की है जो इस अपेक्षाकृत नवीन विज्ञान को धीरे-धीरे उसके लक्ष्य की ओर बढा रहे है।

मौसम-विज्ञान (Meteorology) का लक्ष्य इस शब्द मे प्रयुक्त 'मीटर' के सामान्य अर्थ से कही अधिक व्यापक है। इसका लक्ष्य उन सभी भौतिक क्रियाओ का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना है जो 'मौसम' को जन्म देती है, चाहे 'मौसम' शब्द के प्रयोग से हमारा तात्पर्य प्रशान्त महासागर के तूफान से हो, भारत अथवा टैक्सास मे पडनेवाले अकाल से हो या उच्चतर वातावरण की उन व्यवहार-पद्धतियो से हो जिनका सामना वायुयानो या पृथ्वी-तल से छोडे जानेवाले उपग्रहो को करना पडता है। संक्षेप मे मौसम-विज्ञान वातावरण का विज्ञान है।

जब फ्लोरेंस वैन स्ट्रैटन अमरीकी नौसेना मे भरती हुई और उसे इस नवीन विज्ञान से संबद्ध काम सौंपा गया, उसके पहले ही वह भौतिक रसायन मे पी-एच०

डी० कर चुकी थी। यह डिग्री उसके लिए अत्यन्त मूल्यवान सिद्ध हुई। उन दिनो पुरुष मौसम-वैज्ञानिको की बहुत कमी थी, इसलिए नौसेना मे काम करनेवाली पच्चीस महिलाओ को वायुवैज्ञानिक इजीनियरिंग (नौसेना मे मौसम-विज्ञान के लिए प्राय इसी शब्द का प्रयोग होता था) मे एक ट्रेनिंग के लिए भेजा गया ताकि पता लगाया जा सके कि स्त्रिया इस क्षेत्र मे काम कर सकती हैं या नही। फ्लोरेस को अभी नौसेना मे भरती हुए सिर्फ पाच सप्ताह हुए थे, लेकिन पी-एच० डी० होने के कारण उसे भी इन पच्चीस महिलाओ के प्रथम दल मे शामिल कर लिया गया। यह ट्रेनिंग ९ महीने की थी, और मेसाचुसेट्स के प्रविधि सस्थान मे प्रदान की गई। २५ मे से २२ महिलाए यह कठोर ट्रेनिंग पूरी कर सकी—वैन स्ट्रैटन भी उनमे से एक थी। इन महिलाओ को सनदयाफ्ता मौसम-वैज्ञानिक के डिप्लोमा प्रदान किए गए। इस ट्रेनिंग के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम का बौद्धिक अनुशासन कितने ऊचे दर्जे का था, इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि अगर वह पहले ही पी-एच० डी० न कर चुकी होती तो इन नौ महीनो मे किया गया काम इस सस्थान मे वायु-वैज्ञानिक इजीनियरिंग मे पी-एच० डी० की डिग्री के लिए ढाई वर्ष के ग्रेजुएट-कार्य के बराबर समझा जाता। जो तीन महिलाए यह ट्रेनिंग पूरी नही कर सकी, उनके लिए भी यह नही कहा जा सकता कि उत्तीर्ण महिलाओ की अपेक्षा उनकी बुद्धि-लब्धि (I Q) कम थी।

फिर भी, हाईस्कूल मे अपने अन्तिम सीमेस्टर-कार्य के लिए तैयार होने के पहले फ्लोरेस वैन स्ट्रैटन ने भौतिक विज्ञान की ज्ञाता बनने की बात सोची तक न थी। वह इस विषय मे निश्चित थी कि उसे क्या करना है, लेकिन उसकी महत्त्वाकाक्षा का विज्ञान से दूर का भी सम्बन्ध नही था। वह एक लेखक बनना चाहती थी। उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि भी इसके लिए अत्यन्त उपयुक्त थी। उसके मा-बाप हॉलैंड से आकर अमरीका मे बस गए थे। उसकी मा एक प्रतिभाशाली भाषाविद् थी और छ भाषाओ की ज्ञाता थी (प्रतिपत्र या 'प्रॉक्सी' द्वारा जैक्स वैन स्ट्रैटन से विवाह करने और तदन्तर न्यूयार्क मे आ बसने से पहले वह हॉलैंड-भर मे सबसे अधिक वेतन प्राप्त करनेवाली महिला थी) और उसका पिता अपनी एकमात्र बच्ची फ्लोरेस की हर इच्छा पूरी करने के लिए तैयार था।

उसका पिता मेट्रो-गोल्डविन-मेयर पिक्चर्स का वित्तीय प्रतिनिधि था। उसका प्रमुख कार्यालय न्यूयार्क मे था। कभी-कभी उसे अपने काम से बाहर भी जाना

पड़ता था। इसी सिलसिले मे एक वार फ्लोरेंस उसके साथ नाइस गई, और उसने अपनी माध्यमिक शिक्षा का एक वर्ष वही विताया। इस वीच उसने फ्रेंच भापा पर अच्छा अधिकार कर लिया। वह अग्रेज़ी और डच भाषा पर समान अधिकार से वोलती थी। इसके अलावा उसने अपने मा-वाप से जर्मन, इटालियन और स्पेनिश भाषाओ का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था, फलत "मुझे कभी भी इनमे से किसी भी भाषा मे एकदम कोरा वनकर नही जाना पडा।" एक भावी लेखक के लिए यह एक सुन्दर सास्कृतिक पृष्ठभूमि हो सकती थी। अग्रेजी उसका प्रिय विषय था, किन्तु वह अपने अध्ययन के सभी विषयो मे रुचि लेती थी और अच्छे अक प्राप्त करती थी। फिर भी, स्कूल के दिनो मे इस सवका उसपर कोई खास असर नही पडा था। इस छोटे-से परिवार के तीनो सदस्य न्यूनाधिक रूप मे यह स्वीकार कर चुके थे कि फ्लोरेंस एक दिन लेखक वनेगी।

लेकिन वे तीनो ही इस तथ्य से परिचित थे कि लेखन कोई ऐसा व्यवसाय नही है जिसमे प्रवृत्त होने का निश्चय करके आप उसकी तैयारी के लिए किसी कॉलिज मे दाखिल हो जाए, और जव वहा से शिक्षा पूर्ण करके निकले तो अपनी जीविका कमा सकें। इस सचाई की याद दिलाने के लिए उसका पिता अक्सर उससे यह पहेली पूछा करता था, "जानती हो लेखक लोग दुछत्तियों मे क्यो रहते हैं?" फ्लोरेंस इस पहेली का उत्तर जानती थी, "क्योकि वे पहली, दूसरी या तीसरी मज़िलो पर नही रह सकते।" वूढे होने के पहले लेखक सामान्यत· काफी पैसे नही कमा पाते—इस वात का ज्ञान फ्लोरेंस के लिए विशेष महत्त्व रखता था क्योकि यह तय था कि ब्रुकलिन-स्थित गर्ल्स हाईस्कूल से वह कुल सोलह वर्ष की अवस्था मे ग्रेजुएट हो जानेवाली थी। मा के पढाने और अध्ययन मे स्वाभाविक गति होने के कारण उसने अपनी स्कूल की शिक्षा दो वर्ष कम उम्र मे पूरी कर ली थी।

इसके अलावा फ्लोरेंस अपने पिता जैक्स वैन स्ट्रैटन से अपने जीवन मे विशेष प्रभावित हुई है। जव जैक्स जवान था तो इम्सटर्डम मे उसे एक ऐसा अनुभव हुआ जिसने उसे सिखाया कि जीवन सदैव व्यक्ति की योजनाओ के अनुरूप नहीं ढल पाता। वह डॉ० वनने के लिए कृतसकल्प था, किन्तु अभी उसने कॉलिज में पढना शुरू किया ही था कि उसका सम्पन्न परिवार अचानक सर्वथा अकिंचन हो गया, और उसे अपने परिवार की सहायता करने के लिए पढाई छोडकर नौकरी करनी पड़ी जिसके वारे मे उसने स्वप्न मे भी न सोचा था। इस अनुभव को ध्यान

मे रखते हुए उसने अपनी बेटी को सुझाव दिया, "कॉलेज मे अपना कुछ समय किसी ऐसे विषय के अध्ययन मे लगाने मे क्या हानि है जो लेखन से इतर हो किन्तु जो, आवश्यकता पडने पर, तुम्हे जीविकोपार्जन मे सहायता दे सके।"

यह सुझाव इतना तर्कसगत था कि फ्लोरेंस ने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। कठिनाई यह थी कि वह इस बारे मे कोई निर्णय नही ले पा रही थी कि वह किस विषय को चुने। तब मिस्टर वैन स्ट्रैटन ने सोचा कि क्यो न इस बारे मे लडकी के स्कूल की प्रिंसिपल से सलाह ली जाए। उसने ऐसा ही किया। कुछ विचार करने के बाद प्रिंसिपल ने उसके लिए रसायनशास्त्र का सुझाव दिया। यह एक ऐसा विषय था जो फ्लोरेंस ने पहले कभी नही पढा था। अभी उसे हाईस्कूल मे एक कोर्स और करना था, इसलिए उसने वह कोर्स रसायन मे ले लिया और "अपने अध्ययन के अन्य विषयो की भाति मुझे यह भी अच्छा लगा, यह विचार मुझे सतोष देता था कि मेरी प्रिंसिपल और पिताजी समझते हैं कि रसायन एक ऐसा क्षेत्र है जिसमे मैं कभी भी अपनी जीविका अर्जित कर सकती हू।"

इस निर्णय की तरह ही यह निर्णय भी अनायास ही लिया गया कि यह भावी वैज्ञानिक न्यूयार्क विश्वविद्यालय मे अग्रेजी और रसायन को अपना प्रमुख विषय चुने और इन दोनो मे से किसी एक विषय मे बैचलर की डिग्री प्राप्त करे। फ्लोरेंस ने स्वप्न मे भी कभी न सोचा था कि वह अपनी डिग्री अग्रेज़ी मे न लेकर रसायन मे लेगी।

कॉलेज मे उसके अन्तिम वर्ष के प्रारम्भिक दिनो मे एक ऐसी घटना घटी जिसने उसके पिता की भाति आशातीत रूप से उसके जीवन की दिशा भी बदल दी। फैकल्टी की एक सदस्या बीमार पड गई और उसके ठीक होने तक फ्लोरेंस से उसकी छात्राओ की लेबोरेटरी की क्लास को रसायन पढा देने के लिए कहा गया। फैकल्टी की वह सदस्या ठीक नही हो सकी और फ्लोरेंस पूरे साल उस क्लास को पढाती रही। वसन्त आ गया, और वसन्त के साथ ही उसके सम्मुख यह प्रस्ताव आया कि यदि वह एक शर्त मान ले तो उसे अगले वर्ष के लिए टीचिंग फेलोशिप मिल सकती है। यह शर्त उसके लिए बहुत बडी थी। शर्त के अनुसार उसे यह फेलोशिप तभी मिल सकती थी जब वह बैचलर की डिग्री अग्रेजी के स्थान पर रसायन मे लेने और फेलोशिप का उपयोग रसायन मे पी-एच० डी० करने के लिए तैयार हो जाती।

उसने इस प्रस्ताव पर भली भाति सोचा। वह अभी कुल १९ वर्ष की थी। हाईस्कूल और कॉलेज मे से प्रत्येक मे उसे सिर्फ साढे तीन वर्ष लगे थे। लेखक के लिए तो सभी प्रकार का अनुभव पाथेय का काम करता है। उसने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। सन् १९३३ मे उसने रसायन मे शानदार अंको के साथ बी० एस० की डिग्री प्राप्त की और 'फाई बीटा कैप्पा' के लिए चुनी गई।

वह हाईस्कूल और कॉलेज जीवन मे फिक्शन लिखती आई थी। लेकिन, अब उसे ऐसा महसूस हुआ कि वह लिखने के अयोग्य हो गई है। वैज्ञानिक के सत्यादर्श और सत्य के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उसका इतना अधिक तादात्म्य हो गया था कि अब उसे फिक्शन लिखने की इच्छा तक नही होती थी। उच्चादर्शों वाली इस युवती के लिए सत्य का महत्त्व सर्वोपरि था। विज्ञान के सम्पर्क ने उसे इतना अधिक प्रभावित किया था कि अब उसके लिए सत्य के प्रति वैज्ञानिक दृष्टि-कोण ही एकमात्र ईमानदार दृष्टिकोण बन गया था। अगले कुछ वर्षों मे ही उसका चिन्तन कितना परिपक्व हो चुका था, यह स्वय उसीके शब्दो से प्रकट होता है, "गम्भीर फिक्शन-लेखक और वैज्ञानिक दोनो ही अपने-अपने ढग से सत्य की शोध करते है। यद्यपि मैं मूलत एक वैज्ञानिक हू, फिर भी मैं मानती हूं कि कला भी उसी सार्वभौमिक सत्य की शोध है जिसे अभिव्यक्ति देने का प्रयत्न वैज्ञानिक कर रहा है। सत्य एक और अखण्ड है। उसे 'वैज्ञानिक सत्य', 'धार्मिक सत्य,' 'कलागत सत्य' आदि खडो मे विभक्त नही किया जा सकता।"

धीरे-धीरे, इस सत्य की प्रतीति के साथ, उसके मन मे लिखने की इच्छा फिर से उत्पन्न होने लगी। ऐसे और भी अनेक लब्धप्रतिष्ठ वैज्ञानिक हुए हैं जो किसी कला में रुचि उत्पन्न हो जाने पर उसे बनाए रखते हैं, और व्यवसाय के रूप मे न अपनाकर भी अपने उस कलागत अनुराग को बुद्धिमत्तापूर्ण, बल्कि जरूरी, समझते हैं। आइन्स्टाइन हमेशा से वॉयलिन के प्रेमी रहे हैं, और गर्टी कोरी आजन्म पुस्तको के अध्ययन मे अपनी कलागत रुचि को सतुष्ट करती रही।

सनदयाफ्ता मौसमविज्ञान का डिप्लोमा प्राप्त करने के बाद ही डा० वैन स्ट्रैटन को वह वैज्ञानिक फोकस प्राप्त हो सका जिसे भविष्य में उसके मस्तिष्क के लिए एक स्थायी चुनौती और दिशा-दर्शक बनना था। न्यूयार्क विश्वविद्यालय मे वह नौ वर्षों तक फैकल्टी की लैसर मैंबर रह चुकी थी। इन नौ वर्षों मे उसने बी० एस० की डिग्री प्राप्त की और भौतिक रसायन मे पी-एच० डी० किया।

विलियम एफ० एहरेट के सहयोग मे उसने जो अनुसधान किया था उसके परिणाम कुछ वैज्ञानिक पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए थे, और इस सबसे उसे वैज्ञानिक सफलताजन्य सन्तोष भी मिला था, लेकिन मेसाचुसेट्स के प्रविधि सस्थान मे उच्चतर विशिष्ट अध्ययन करते समय ही उसे यह अनुभूति हुई कि कला से रूपातरित होकर विज्ञान वनते जानेवाले मौसम-विज्ञान मे अनेक सुअवसर उसे चुनौती दे रहे हैं।

शायद चुनौती का यह वल कई गुना इसलिए वढ गया था, क्योकि जव वह भरती हुई तो उन दिनो अमरीकी नौसेना दो महासागरो पर अपने और अमरीका के अस्तित्व को वचाए रखने के लिए भयानक सग्राम मे जुटी हुई थी। प्रशान्त महासागर मे मौसम की स्थितियो के अधिकाधिक ज्ञान और उपलब्ध ज्ञान के सर्वोत्तम उपयोग की विशेष रूप से जरूरत महसूस की जा रही थी। परम्परागत तथ्य यह था कि नौसैनिक युद्धो के परिणाम मौसम पर बहुत कुछ निर्भर करते है। पश्चिमी देशो मे पढनेवाला हर वच्चा जानता है कि ब्रिटिश जहाज़ी वेडे के अनु-कूल वायु मे एक अलक्षित परिवर्तन के कारण वायु का लाभ ब्रिटेन को न मिलकर उसके शत्रु स्पेन के जहाजी बेडे को मिल गया था और वह भाग निकला था। द्वितीय महायुद्ध मे अमरीकी राष्ट्रीय मौसम सेवा का काम इस बात का ध्यान रखना था कि हमारे जहाज़ो को मौसम की प्रतिकूल परिस्थितियो मे न फसना पडे, और युद्धो मे सफलता प्राप्त करने के लिए यथासम्भव मौसम का पूर्वानुमान लगा लिया जाए। यह काम और भी कठिन इसलिए था कि सामान्यतया यह माना जाता था कि प्रशान्त महासागर मे जापानी लोग अमरीका या मित्र राष्ट्रो की अपेक्षा मौसम की स्थितियो के वारे मे ज्यादा जानते है।

डॉ० वैन स्ट्रैटन का काम वायुयानो या जहाज़ो मे वैठकर मौसम-सम्बन्धी सूचनाए एकत्र और सचारित करना नही था। जाहिर है कि इस काम के लिए विज्ञान मे पी-एच० डी० प्राप्त व्यक्ति की आवश्यकता नही पडती। उसका काम अपने वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग उन तरीको और तकनीको के विकास मे करना था जो वायुवैज्ञानिक अधिकारियो को इस योग्य बना सके कि वे कमाडिंग अफसरो को नित्य, और हो सके तो हर घटे वाद, मौसम की स्थितियो के वारे मे सलाह दे सकें। इसे एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है:

युद्ध-काल मे कुछ वायुयान—वाहक डेक से [illegible] जाते है, और अपना काम

पूरा करके वे उसीपर लौट आते हैं। उनकी उडान व वापसी के समय जहाज़ को हवा के रुख की ओर बढना चाहिए और हवा व जहाज़ की सयुक्त गति एक निर्धारित निम्नतम गति से तीव्र होनी चाहिए। उडान के लिए अनुकूल और लक्ष्य के निकटतम हवाए खोजना, वायुयान के हवा मे उठने तक जहाज को सुरक्षित रेंज मे रखना, और वापसी के वक्त अनुकूल पवन मे उन्हे जहाज मे वापस लेना—ये सब काम दुष्कर हैं। इन कामो मे सफलता तभी मिल सकती है जवकि वायु-वैज्ञानिक अधिकारी एकदम सही सूचनाए दे सकें।

द्वितीय महायुद्ध के समय किए जानेवाले भविष्य-कथन के लिए दूरवर्ती क्षेत्रो के मौसम से सम्बद्ध अनेक तथ्यो की जरूरत पडती थी। रडार-तकनीकें विकसित हो चुकी थी, और उनकी सहायता से विशिष्ट रडार-गूजो और मौसम की विभिन्न स्थितियो को पहचाना जा सकता था। उदाहरणार्थ पहले रडारस्कोप की सहायता से तडित-झझा का पता लगाया जाता था, फिर कैरियर डेक को उस प्रदेश मे पहुचाया जाता था, जहा वह उस क्षेत्र के किनारो पर चक्कर लगाता था। तडित-झझा के साथ चलनेवाली तेज़ हवाओ के कारण जहाजो के लिए उडान भरना या खत्म करके कैरियर डेक पर उतरना सम्भव हो जाता था।

जव जापानियो ने मार्शल और गिलवर्ट द्वीपो पर हवाई हमला किया तव एक वार उनके वमवर्षको की नजर अमरीकी कृतिक वल (Task force) पर पडी। उस समय अमरीकी हवाई जहाज़ अपना काम खत्म करके वापस आए थे और उनकी आखिरी टोली कृतिक वल पर उतर ही रही थी। चूकि जहाजो की गति की अपेक्षा वायुयानो की गति वहुत तीव्र होती है, इसलिए वमवर्षको से वचाव करने मे यह समस्या उत्पन्न हुई कि कृतिक वल को वमवर्षको से दूर कैसे ले जाया जाए। वायुवैज्ञानिक अधिकारी को इसकी एक तरकीव सूझ गई। कुछ दूर आगे उसे एक शीताग्र (cold front) दिखाई दिया जिसने एक प्राकृतिक धूमावरण (smoke screen) का काम लिया जा सकता था। उसने जो अक्षाश और देशान्तर वताए उनसे होता हुआ कृतिक वल सुरक्षित रूप से उस शीताग्र तक जा पहुचा और तव जहाजो की गति शीताग्र की गति मे समजिन कर दी गई। वहा से कृतिक वल की तलाश मे घूमते हुए जापानी वमवर्षको की आवाज सुनाई दे रही थी। काफी समय के वाद यह निश्चित हो गया कि वमवर्षक असफल होकर लौट गए हैं तव कृतिक वल सुरक्षित रूप मे पर्ल हार्बर लौट आया।

सामान्य जन इस प्रकार की उपलब्धियो का सही मूल्याकन नही कर सकते। धरातल पर, या उसके आस-पास के मौसम का पूर्वानुमान लगाना उच्चतर वायु-मण्डल के पूर्वानुमान की अपेक्षा कही अधिक दुष्कर है। मौसम-विज्ञानवेत्ता का पूर्वानुमान गलत निकलने पर सामान्य जन के लिए हस देना वडा आसान है, किन्तु डा० वैन स्ट्रैटन का मत है कि यह पूर्वानुमान इतनी वार गलत नही निकलता जितना कि लोग-वाग समझते है। "दरअसल होता यह है कि आम आदमी 'विफलताओ' को तो याद रखता है, और 'सफलताओ' को भूल जाता है।" मौसम-वैज्ञानिक जानता है कि इस वात का भविष्य-कथन करना आसान है कि न्यूयॉर्क से लॉस एजिल्स तक पहुचने मे किसी वायुयान को किस प्रकार के मौसम का सामना करना पडेगा, किन्तु इसमे से किसी भी शहर के मौसम के वारे मे पूर्वानुमान लगाना, अपेक्षाकृत कही कठिन है। धरातल के आसपास की स्थितिया उस भू-प्रदेश के स्थानीय प्रभावो के कारण कही अधिक अनियत होती हैं। चौबीस से छत्तीस घटो के वीच के समय के मौसम का पूर्वानुमान लगाने के लिए सभी आवश्यक आकडो की जरूरत होती है, किन्तु सभी आवश्यक आकडे वहुधा उपलब्ध नही हो पाते।

डा० वैन स्ट्रैटन के नौसेना मे भरती होने के कुछ ही वाद एक ऐसी लोम-हर्षक दुर्घटना हुई थी, जिससे पता चलता है कि अनिवार्य आकडो की कमी से कितनी वुरी वीत सकती है। जिन दिनो अमरीका प्रशात महासागर द्वीपो पर एक के वाद एक अधिकार कर रहा था तो वायुयानो के उतरने का समय वायुवैज्ञानिक अफसर निर्धारित करते थे। अधिकतर उनके वताए समय पर वायुयान सकुशल उतर आते थे। लेकिन एक वार जव वायुयान उतर रहे थे तभी महासागर अप्रत्याशित रूप से विक्षुब्ध हो उठा, और उन भयंकर स्थितियो के कारण जान और माल की भारी हानि हुई। वाद मे पता चला कि ये भयकर स्थितिया उस द्वीप से कोई एक हजार मील दूर प्रशान्त महासागर मे उठे एक प्रचण्ड तूफान के कारण उत्पन्न हुई थी, किन्तु कोई भी वायुयान अथवा स्वचालित मौसम-केंद्र उस तूफान को पहले से लक्षित नही कर सका था।

युद्ध के समाप्त होते-होते फ्लोरेंस वैन स्ट्रैटन के सामने यह वात स्पष्ट हो गई थी कि मौसम की स्थितियो के वारे मे अभी अनेक वातें अज्ञात है, और उन्हे जानना जरूरी है। उसके प्रतिभाशाली मस्तिष्क के लिए यह [illegible] की चुनौती

थी। उसके आला अफसर इस बात से प्रभावित थे कि उसके पास उनके काम के लिए उपयुक्त योग्यताए हैं। वातावरण की स्थितियो के ज्ञान को प्रयोग योग्य प्रक्रियाओ मे विकसित करने के लिए उन दिनो जो वैज्ञानिक उपलब्ध थे उनमे उसके जैसी योग्यताओवाले व्यक्ति बहुत कम थे। आगे वह एक सिविलियन के रूप मे नौकरी करना चाहती थी। और इसमे भी कोई अडचन न थी, क्योकि उसका नाम नौसेना की सक्रिय सूची से हटाकर बडे आराम से निष्क्रिय (inactive) सूची पर लिखा जा सकता था। इस प्रकार, सन् १९४६ मे लेफ्टिनैंट-कमाडर की वर्दी छोडकर उस पद से अवकाश ग्रहण किया, और नौसेना मे सिविलियन परामर्शदाता बन गई, जहा कि वह आज भी है। और ज्यो-ज्यो वर्ष बीतते गए कुहरो से लेकर रेडियोधर्मी 'फॉलआउट' तक की सभी समस्याओ के लिए, "मैं नौसेना के लिए एक मिस्त्री-सी बन गई।"

शायद मिस्त्री के रूप मे असाधारण रचनात्मक प्रतिभा प्रदर्शित करने पर ही उसे नौसेना का उल्लेखनीय सेवा पुरस्कार प्रदान किया गया। इस पुरस्कार की प्राप्ति के समय उसे सिविलियन सर्विस मे काम करते हुए दस वर्ष बीत चुके थे, और वह नौसैनिक रिजर्व मे कमाडर की श्रेणी मे जा पहुची थी। जो भी हो, विश्व-युद्ध समाप्त हो जाने पर उसे जो पहली बडी नौकरी मिली वह किसी भी तरह मिस्त्री की नौकरी नही थी। ऐसा इस कारण हुआ, क्योकि उच्चतर वायुमण्डल मे जाने के लिए लम्बी दूरियो के प्रक्षेपणास्त्रो के निर्माण मे लगे वैज्ञानिको का ध्यान इस ओर नही गया था कि उन्हे अपने काम मे मौसम वैज्ञानिको से कितनी अमूल्य सहायता प्राप्त हो सकती है। वे ये भूल रहे थे कि वायुमण्डलगत स्थितिया—हवा, तापक्रम, घनत्व आदि उनकी 'चिडियो' को प्रभावित करेंगे। इसके विपरीत नौसैनिक मौसम सेवा का दृढ मत था कि वायुमण्डल और उसके विविध रूपो के विश्लेषण से ऐसी अनेक बाते प्रकाश मे आएगी, जिनका ध्यान लम्बी दूरीवाले प्रक्षेपणास्त्रो के निर्माण मे रखना आवश्यक है। अपने इसी विश्वास के कारण उन्होंने १,००,००० फुट की ऊचाई तक की हवा और तापक्रम-विषयक सभी सामान्य और असामान्य, सूचनाओ को प्राप्त करके उनका विश्लेषण करने का निश्चय किया। तभी यह घोषणा हुई कि इन सब सूचनाओ को एकत्र और विश्लिष्ट करने का काम डा० एफ० डब्ल्यू० स्ट्रैटन के निर्देशन में किया जाएगा।

यह एक लबा और भारी काम था, जैसाकि उन चार भारी-भरकम तकनीकी

रिपोर्टों के पन्ने उलटते ही स्पष्ट हो जाता है, जो डा० वैन स्ट्रैटन के कार्यालय से प्रकाशित हुई। इस बार भी उनका काम खुद प्रेक्षण करना नही था, वल्कि विभिन्न तरीको से किए गए हजारो प्रेक्षणो का विश्लेषण करनेवाली योजना के निदेशन मे अपने वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग करना था। ग्रीनलैंड से जापान तक के लगभग बीस भौगोलिक स्थानो से एकत्र की गई सूचनाओ का उसके डेस्क पर ढेर लगा दिया जाता था। दो वर्षों के अन्दर इबारत, तालिका और लेखाचित्र (Graph) आदि के रूप मे उसके द्वारा किए गए विश्लेपण का विवरण थोडा-थोडा करके प्रकाशित होता रहा, ताकि वैज्ञानिक लोग उनसे अविलब लाभ उठा सकें।

इन लेखाचित्रो और तालिकाओ को देखकर प्रक्षेपणास्त्र तैयार करनेवाले वैज्ञानिको की समझ मे आया कि उन्हे अपने काम मे मौसम-वैज्ञानिको से कितनी अधिक सहायता मिल सकती है। कुछ वैज्ञानिको का यह सुखद सिद्धात, कि प्रक्षेपणास्त्र ज्योही समतापमडल (Stratosphere) मे, अर्थात् पृथ्वी से ३०,००० से ४०,००० फुट ऊपर, पहुचता है वैसे ही निर्बाध और तूफानरहित क्षेत्र प्रारभ हो जाता है, चूर-चूर हो गया। कुछ प्रारभिक प्रेक्षणो से ही यह स्पष्ट हो गया कि ७० पौण्ड वज़न लेकर १,००,००० फुट की ऊचाई तक पहुच सकने-वाले गुब्बारे समतापमडल मे पहुचकर भयानक रूप से दोलायमान होते हैं, हवाए उन्हे झकझोर देती हैं। एक प्रेक्षण से पता चला कि ६५,००० से ७०,००० फुट ऊपर हवाओ मे इतनी शक्ति होती है कि उन्होने एक गुब्बारे से लटकते हुए ५५ पौण्ड के वज़न को इतने ज़ोर से ऊपर की ओर उछाला कि उसके लगने से गुब्बारे का थैला फट गया। यह सिद्ध हो गया कि समतापमडल मे सिर्फ वे प्रक्षेपणास्त्र ही प्रविष्ट हो सकते हैं जो या तो इन हवाओ को बचा सकें अथवा इनका सामना करने के लिए ज़रूरी साज-सामान मे लैस हो।

उन दिनो के मुकाबले आज गुब्बारे द्वारा हवा और मौसम की सूचनाए एकत्र करने की तकनीको मे वहुत अधिक सुधार हो गया है। जिन वैज्ञानिको के प्रयत्नो से यह सुधार सभव हुआ है उनमे डॉ० वैन स्ट्रैटन का नाम भी लिया जाता है। सन् १९५० के दशक के मध्य मे अमरीकी नौसेना जापान मे नित्य ४०-५० फुट वाले गुब्बारे छोड़ने लगी थी। इन गुब्बारो का थैला सिगरेट की डिब्बी पर लगे मोमिया कागज़ की तरह पतला होता था, मगर उनमे से हर गुब्बारे मे ६००

पौंड से अधिक भार ले जाने की क्षमता थी। इन गुब्बारो को, प्रत्येक के थैले मे हीलियम का एक बुलबुला रखकर, छोड दिया जाता है, वे ३०००००फुट की ऊंचाई तक उठ जाते है, और फिर स्थिर होकर उसी ऊचाई पर तैरते रहते है। हर दो घटे बाद वे अपनी स्थिति, तापक्रम और दवाव से सबद्ध जानकारी रेडियो से देते रहे हैं। हवाओ के साथ सैर करते हुए वे प्रशात महासागर पार करते हैं, अमरीका के ऊपर से होते हुए अटलाटिक महासागर को पार करते हैं, और तब, यूरोप के तट पर पहुचते ही खुद-व-खुद फूट जाते है ताकि किसी प्रकार का अन्तर्राष्ट्रीय नियम भग न हो। हर रेडियो-रिपोर्ट से उनकी स्थिति का मिलान करके उस क्षेत्र की हवाओ की गति के वारे मे मालूम किया जाता है जिससे होकर वे गुज़रे हं।

डॉ० वैन स्ट्रैटन का वहुत-सा काम अभी गोपनीय है। ठीक इसी प्रकार, एक दिन उसके उस काम का एक वड़ा हिस्सा गोपनीय था जिसके वारे मे पहले वताया जा चुका है। जिन उपलब्धियो पर उसे सन् १९५६ मे पुरस्कार प्रदान किया गया, उसके भी कुछ अशो पर ही प्रकाश डाला जा सकता है, दूसरे अश गोपनीय हैं। समय के साथ-साथ उसकी व्यक्तिगत प्रगति भी हुई है। आज वह उन वैज्ञानिको की श्रेणी मे शामिल हो गई है जो नौसेना से सबद्ध गूढ समस्याओ को सुलझाने के लिए बुलाए जाते हैं। कभी-कभी उसने इन पेचीदा समस्याओ को सुलझाने के मौलिक और सफल उपाय सुझाए हं। कभी वह एक नये प्रकार के उपकरण के निर्माण का सुझाव दे देती है, या उपलब्ध साधनो के प्रयोग की कोई नई तकनीक सुझा देती है, तो कभी उसका सुझाव होता है कि नई सूचनाए एकत्र करने से समस्या का निदान खोजा जा सकता है, उसके सभी सुझावो पर अमल नही किया जाता—उदाहरणार्थ उसकी उस योजना पर काम नही किया गया जो उसने वायुयानो पर वर्फ का जमना रोकनेवाले एक ध्वानिक यत्र (Sonic device) तैयार करने के लिए प्रस्तुत की थी, यद्यपि उसका यह विचार उसके नाम पर पेटेंट हो गया। दूसरी ओर, उसके सुझावो के अनुसार एक ऐसे रडार-प्रतिकृति-तंत्र पर काम किया जा रहा है जो सबधित क्षेत्र की जानकारी रडार-सैंट पर अथवा एक या अनेक वायु-स्टेशनो पर अपने-आप लिख देता है।

नई समस्याओं को सुलझाने की उसमें अद्भुत क्षमता है—यह सिद्ध हो जाने के बाद उसे इस बात की छूट दे दी गई कि यदि वह चाहे तो उन समस्याओ पर

भी काम कर सकती है जो उसके निर्धारित कार्य-क्षेत्र मे नही आती। इस प्रकार उसने रेडियोधर्मी 'फॉल आउट' की समस्याओ के कुछ पक्षो पर काम करना शुरू किया, विशेष रूप से उसका प्रयत्न ऐसे उपाय ढूढ निकालने की दिशा मे था जो एटमी हमले के समय अमरीका की रक्षा कर सके। वाशिंगटन-स्थित कार्यालय मे अपने डेस्क पर बैठे-बैठे वह सोचने लगी

'मान लो वाशिंगटन पर बमबारी हो जाए। ऐसी हालत मे अधिकारियो को यह कैसे पता चलेगा कि मनुष्यो को बचाने, अस्पतालो को लाने-ले जाने, और रेडियोधर्मी प्रभावो से बची हुई रसद को सर्वाधिक सुरक्षित स्थान पर पहुचाने के लिए क्या कदम उठाए जाए ?'

उसे ज्ञात था कि रेडियोधर्मी कण कुछ निश्चित 'फॉल आउट' पद्धतियो का अनुकरण करते है, और ये पद्धतिया वायुमण्डल की स्थितियो से प्रभावित होती है। ये कण कुछ क्षेत्रो मे तो अत्यधिक सघन होते है, और शेष क्षेत्रो मे बहुत ही कम घने, यहा तक कि विस्फोट के स्थान के निकटवर्ती क्षेत्रो मे भी ये कम घने हो सकते हैं। समय बीतने के साथ इनमे परिवर्तन होते रहते है। रेडियोधर्मी 'फॉल आउट' और उनकी अनुसरणीय पद्धतियो ने सगणना करनेवाली एक वैज्ञानिक प्रक्रिया को जन्म दिया। यदि इस प्रकार की सूचनाओ का निर्धारण नित्य किया जाए तो किसी भी बस्ती के अधिकारियो को तुरत पता चल जाएगा कि बमबारी-ग्रस्त क्षेत्र को अधिक से अधिक सुरक्षा के साथ किस प्रकार खाली कराया जा सकता है।

यह एक ऐसा एहतियाती कदम था जिसे बिना किसी विशेष व्यय या कठिनाई के उठाया जा सकता था, किन्तु जैसाकि नई सूझ के साथ प्राय होता है, अधिकारियो ने इसे कार्यरूप मे परिणत करने की ओर कोई दिलचस्पी नही दिखाई। अनेक वैज्ञानिक इस बात पर सहमत नही थे कि रेडियोधर्मी 'फॉल आउट' वास्तव मे कोई बडा खतरा पैदा कर सकता हैं। इसलिए डा० वैन स्ट्रैटन ने अपनी योजनाओ के कागज़ो का पुलिदा लपेटकर रख दिया, और दूसरे कामो मे जुट गई। फिर शायद एक साल बाद एक दिन दुनिया-भर मे यह कहानी बिजली की तरह फैल गई कि प्रशात महासागर मे अमरीका ने जो परमाणु-परीक्षण किए थे उनके रेडियोधर्मी 'फॉल आउट' मे कुछ जापानी मछुओ को गभीर क्षति पहुची है। तुरत ही दुनिया-भर मे लोगो के कान खडे हो गए और अमरीका सरकार ने अपनी

भी सशस्त्र सेनाओ को अपने सभी कामो मे रेडियोधर्मी 'फॉल आउट' का ध्यान खने के आदेश जारी कर दिए। दुर्भाग्य से यह कोई नही जानता था कि 'ध्यान कैसे रखा जाए।'

फिर भी एक व्यक्ति को इस बारे मे पर्याप्त ज्ञान था। फ्लोरेंस वैन स्ट्रैटन ने अपने उन कागजो की धूल झाडी जिनमे इस समस्या के निदान से सवद्ध मूलभूत जानकारी निहित थी, हाल ही मे इस विषय मे किए गए परीक्षणो से प्राप्त नवीन जानकारी के प्रकाश मे अपने पिछले काम को दुहराया और अपनी योजनाओ को फिर से प्रस्तुत कर दिया। दरअस्ल 'ध्यान रखने' से अभीप्सित भी यही था।

इस काम पर उसे जो पुरस्कार मिला उसमे इस दिशा में उसके पहले करने का उल्लेख किया गया है। बिना कहे ही उसने समस्या को पहचान लिया था, और उसका हल भी खोज निकाला था। उसके कार्य के फलस्वरूप अब समुद्र या भूमि पर स्थित प्रत्येक नौसैनिक अड्डे पर एक वायु-वैज्ञानिक अधिकारी नियुक्त रहता है जो नित्य एक लेखाचित्र अकित करता है। इस लेखाचित्र से यह पता चलता है कि यदि उसके क्षेत्र मे कोई बम गिरेगा तो रेडियोधर्मी 'फॉल आउट' किन पद्धतियो को अपनाएगा। इस वायुवैज्ञानिक अधिकारी के दैनिक कार्य का एक अग यह निर्धारित करना भी है कि वायुमण्डल की मौजूदा स्थितियो मे जहाजो के लिए, सघनतम 'फॉल आउट' के क्षेत्रो को बचाते हुए किन दिशाओ से गुजरना उचित रहेगा। यदि उसकी नियुक्ति भूमि के किसी अड्डे पर है तो उसे इस बात का निश्चय करना होता है कि अस्पताल, रसद, दवाइया और जनता किस मार्ग से होकर गुजरें और उन्हे किस स्थान पर पहुचाया जाए।

डा० वैन स्ट्रैटन का कार्यक्षेत्र मौसम-विज्ञान के सामान्य अर्थ से कही अधिक व्यापक हो गया है। यह तथ्य मान्यता प्राप्त कर चुका है—यह इस बात से स्पष्ट है कि सन् १९५८ के आरम्भ मे एयरो-मेडिकल एसोसिएशन महिला विभाग ने वायु-मंडलीय भौतिकी के क्षेत्र मे की गई उपलब्धियो के आधार पर उसे 'वर्ष की सर्व-श्रेष्ठ महिला' का सम्मान प्रदान किया। उसका विश्वास है कि खुद मौसम-विज्ञान मे आज की अपेक्षा कही अधिक युवतियो को रुचि लेनी चाहिए, क्योकि यह एक मनोरजक क्षेत्र है और इसमे सुअवसरो की कमी नही है। सन् १९५४-५५ के आस-पास अमरीका में अनुमानत. दो प्रतिशत महिलाए मौसम-विज्ञान को अपना व्यव-साय चुनती थी। यद्यपि मौसम का पूर्वानुमान इस विज्ञान का सर्वाधिक सुपरि-

चित अग है, लेकिन डा० वैन स्ट्रैटन का विश्वास है कि अनुसधान, दूसरी तरह के प्रायोगिक कार्य और अध्ययन के क्षेत्र मे महिलाओ के लिए अपेक्षाकृत अधिक सुअवसर है । उद्योगो के लिए जलवायु-विज्ञान के बढते हुए महत्त्व के कारण इस क्षेत्र मे सुअवसर कही अधिक हो गए है । वर्षा-तूफान मे अपवाह (Run off) का पूर्वानुमान लगानेवाले जल-विज्ञान का महत्त्व भी बढता जा रहा है, क्योकि अब बाढ-नियत्रण के कार्यों का विस्तार किया जा रहा है।

मौसम-विज्ञान की किसी भी शाखा मे काम किया जाए, गणित और भौतिक-विज्ञान इस क्षेत्र के लिए ज़रूरी है । इसके बिना किसी कॉलेज मे मौसम-विज्ञान मे डिग्री के लिए दाखिला नही मिल सकता । अभी अधिक शोधार्थी मौसम-विज्ञान मे शोध-कार्य नही कर रहे हैं, यद्यपि इस प्रकार के कार्य के लिए पी-एच० डी० किए हुए मौसम-वैज्ञानिको की आवश्यकता पडती है । उसका वैज्ञानिक क्षेत्र निश्चित रूप से ऐसा है जिसमे अतीत से कही अधिक काम भविष्य मे होना है । अब बाहरी आकाश के नियत्रण की बातें वैज्ञानिक उपन्यासकार नही करने । इन समस्याओ का अब गभीर वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है और भविष्य मे इन्हे सुलझाने मे मौसम-वैज्ञानिको का हाथ भी रहेगा ।

ग्लैडिस एण्डरसन एमर्सन

ग्लैडिस एमर्सन के आरम्भिक जीवन मे ऐसी कोई बात नही थी जिससे यह सूचना मिलती कि उसका भविष्य किस प्रकार का होगा। उसके पास केवल एक ही निधि थी—उसकी सहज-प्रसन्न चित्तवृत्ति—जिसके कारण किसी भी क्षेत्र मे कार्य करना उसके लिए सरल हो जाता। उसका जन्म कैंसास मे कार्डवैल नामक एक छोटे-से कस्बे मे हुआ, लेकिन अभी वह बच्ची ही थी कि उसके मा-बाप टैक्सास मे जाकर बस गए। किशोर अवस्था पार करने पर भी उसके कोई भाई या बहन नही हुई। उसे न तो पाठ्यक्रम की भारी-भरकम पुस्तको मे हर समय नाक घुसेडे रहने की जरूरत थी, और न इस ओर उसकी रुचि ही थी। किताबो और अध्यापको से सीखने मे उसे कोई परेशानी न होती थी, और अपनी कक्षा मे अच्छे अंको से उत्तीर्ण होकर भी वह तफरीह के लिए काफी समय निकाल लेती थी। प्रारम्भ से ही वह जीवन का आनन्द लूटने के लिए कुछ समय निकाल रखना सीख गई थी, और यद्यपि समय के साथ-साथ अवकाश का आनन्द उठाने के बारे मे उसके विचार परिपक्व होते गए तथापि उसने काम के बाद खेल और खेल के बाद काम का अपना पुराना रवैया जारी रखा। जब सन् १९५६ मे वह कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के गृह-अर्थशास्त्र विभाग की चेयरमैन होकर एक नये पद पर और एक नये वातावरण मे गई तो वह एक पियानो, तीन-चार कैमरे, सगीत की [illegible] का एक सग्रह, जिसमे मुख्यत शास्त्रीय सगीत के रिकार्ड थे, आदि सामान भी अपने साथ लेती गई। इसके अलावा वह यह भी चाहती थी कि उसे एक [illegible] कुत्ता मिल जाए जो उसके भूतपूर्व बड़े बालोवाले टैरियर कुत्ते का स्थान ले सके

स्कूल के दिनो मे उसका नाम ग्लैडिस एण्डरसन था, और अन्य बहुत-सी लडकियो की तरह वह भी अपने अध्ययन के अधिकाश विषयो मे रुचि लेती थी, और किन्ही विशेष विषयो की ओर उसका रुझान नही था। फोर्ट वर्थ के ग्रड स्कूलो मे पढते समय वह अपनी मा के प्रिय विषय गणित और पिता के प्रिय विषय इतिहास मे समान रूप से रुचि लेती थी। इसके बाद उसका परिवार एल रेनो, ओकलाहोका, चला गया। वहा हाई स्कूल मे उसे पता चला कि लैटिन और रसायन मे भी उसकी उतनी ही रुचि है जितनी गणित, इतिहास और दूसरे सामाजिक विज्ञानो मे। कभी-कभी उसे महसूस होता था कि उसे सार्वजनिक मच से भाषण देने मे सबसे अधिक आनन्द आता है, विशेष रूप से उसे यह अनुभूति उन दिनो हुई जब उसने स्टेट चैम्पियनशिप की विजेता टीम का नेतृत्व किया था। जब भी वह दिवास्वप्नो मे खोई होती तो उसे लगता है कि उसका अभीष्ट या तो थिएटर दे सकता है, अथवा भाषण-मच। हाई स्कूल के दिनो मे चाहे उसकी प्रतिभा कैसी भी क्यो न रही हो, इतना तय है कि उसके शिक्षको मे से किसीको भी इस बात का गुमान नही था कि एक दिन पचास से भी कम की अवस्था मे इस लडकी को वैज्ञानिक सफलताओ के लिए इसके समकक्ष वैज्ञानिक आदर-सम्मान देंगे।

जब वह ओकलाहोका मे कॉलेज मे पढ रही थी, तभी रगमच की अभिनेत्री बनने का उसका चाव समाप्त हो गया। उस वर्ष कॉलेज के ड्रामा एसोसिएशन ने शेक्सपियर के 'ऐज़ यू लाइक इट' को रगमच पर प्रस्तुत करने का निश्चय किया, और तुरन्त ही ग्लैडिस उस नाटक मे रोज़ेलीन बनने के ख्वाब देखने लगी। जब अन्तिम रूप से पात्रो का निश्चय हुआ तो उसे पता चला कि उसे विलियम की भूमिका मिली है, जिसे कि शेक्सपियर ने एक देहातिन दासी ऑड्रे के प्रेमी गवार मसखरे के रूप मे चित्रित किया है। उसने वह भूमिका तो अदा की, किन्तु इस घटना से उसकी रगमच-सम्बन्धी आकाक्षाओ पर वज्रपात हो गया। अब केवल भाषण-मच रह गया।

सच बात तो यह है कि यदि रसायन ने ग्लैडिस एण्डरसन को अपनी ओर आकृष्ट न किया होता तो अधिक सम्भावना इसी बात की थी कि वह एक सफल अध्यापक बनती। जब से उसने एक वैज्ञानिक के रूप मे नाम कमाना शुरू किया है तब से एक सार्वजनिक वक्ता के रूप मे उसकी माग बराबर रही है। माउट

होलियोक, विल्सन, वर्नार्ड तथा अन्य महिला कॉलेजो ने उसे अपने मचो पर आमन्त्रित किया है। येल, हारवर्ड ब्राउन, पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय तथा दूसरे विश्वविद्यालय, रैन्सेलरि पॉलीटैक्नीक और कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय का मेडिकल स्कूल, उसे भाषण देने अथवा अपने छात्रो के लिए विचार-गोष्ठियो का आयोजन करने के लिए बुला चुके है। रौटरी, किवानीज व दूसरे क्लब उसे अपने यहा निमन्त्रित कर चुके है। इसके अलावा वह वैज्ञानिक सम्मेलनो मे भी प्राय भाग लेती रहती है और वहा विचार-विनिमय मे सम्मिलित होती है, अथवा लेख पढती है।

हाई स्कूल के दिनो की भाति ही कॉलेज मे उसकी रुचि किसी विषय-विशेष मे नही थी, क्योकि उसे कोई एक ऐसा विषय नजर नही आता था जो अन्य विषयो की अपेक्षा अधिक आकर्षित कर सके। ओकलाहोका से उसने बैचलर की दो डिग्रिया प्राप्त की—भौतिकी और रसायन मे बी० एस० तथा इतिहास और अग्रेजी मे ए० बी०। छात्र-सरकार की प्रेसिडेंट होने के नाते वह हफ्ते मे एक बार मच पर आने के अपने अभ्यास को बढाती थी। यद्यपि वह कॉलिज के चोटी के खिलाडियो मे नही गिनी जाती थी तथापि थोडा-बहुत टेनिस खेलते रहने से यह लडकी, जिसे तमाम उम्र लोग-बाग सराहना की दृष्टि से देखते रहे, चुस्त और फुर्तीली नजर आती थी। वह कॉलेज की गतिविधियो मे खुलकर भाग लेती थी, और दो वर्षो के लिए रसायन और भौतिकी मे मिले टीचिंग असिस्टेण्ट के पद की जिम्मेदारिया भी निभाती थी। फिर भी वह पियानो पर रियाज करने के लिए समय निकाल लेती थी, तथा छात्र-जीवन के हर प्रकार के आमोद-प्रमोद मे पूरा-पूरा हिस्सा बंटाती थी।

कॉलेज में उसके सामने यह विकल्प था कि वह विज्ञान अथवा इतिहास दोनो मे से किसी एक विभाग मे सहायक अध्यापक का पद स्वीकार करे। उसने विज्ञान को प्राथमिकता दी। ग्रेजुएट पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष के लिए उसने अपना यह निर्णय सुरक्षित रखा। इसके बाद वह स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय चली गई और अगले वर्ष सहायक अध्यापक रहते हुए उसने वहा से इतिहास मे एम० ए० कर लिया। अगले वर्ष वह ओकलाहोका सिटी मे एक जूनियर हाई स्कूल मे सामाजिक विज्ञानो के विभाग की अध्यक्ष हो गई।

तब, २३ वर्ष की अवस्था मे ग्लैडिस एण्डरसन ने उस मार्ग पर पहला कदम

रखा जिसपर चलकर २६ वर्ष बाद उसे रसायन मे विशिष्ट कार्य करने पर गार्वन पदक प्राप्त हुआ। उसके पास अध्यापन का सुअवसर प्रदान करनेवाले दो आकर्षक आमन्त्रण आए जिनमे से एक आर्ट्स का था और दूसरा विज्ञान का। दूसरा आमन्त्रण बर्कले-स्थित कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के पोषण-विभाग मे एक फेलोशिप के रूप मे था। अब उसके सामने ग्रेजुएट कक्षाओ मे विज्ञान का अध्ययन करने का सुअवसर भी था, और इस बात का निर्णय अविलम्ब कर लेना उसके लिए आवश्यक हो गया था कि वह सामाजिक विज्ञानो और जीवरसायन मे से किसे चुने। उसने विज्ञान मे उच्चतर अध्ययन का सुअवसर प्रदान करनेवाली कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय की इस फेलोशिप को स्वीकार कर लिया।

बर्कले मे पहले साल काम कर लेने के बाद उसकी रुचि जीवविज्ञान मे सुस्थि हो गई। तीन साल कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय मे पढने और एक साल आयो स्टेट कॉलेज मे नौकरी करने के बाद वह कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय लौट आ और जीव-पोषण और जीव-रसायन मे सन् १९३२ मे उसने वहा से पी-एच० डी० की डिग्री प्राप्त कर ली। इसीके आसपास अन्य अनेक युवती वैज्ञानिको की भाति उसने भी अपने एक सह-वैज्ञानिक के नाम पर अपना नाम परिवर्तित कर लिया।

जीवरसायनज्ञ के रूप मे उसकी शिक्षा मे एक बडी कमी यह रह गई थी कि वह अधिकार के साथ जर्मन नहीं पढ पाती थी, और न उसमे वार्तालाप ही कर पाती थी। वह जिन विषयो पर काम करना चाहती थी उनका अधिकाश भाग पहले जर्मन मे प्रकाशित होता था, और वैज्ञानिक सभा-सम्मेलनादि की प्रकृति इतनी अन्तर्राष्ट्रीय होती है कि जर्मन मे वार्तालाप करने की क्षमता होने से बडी सहूलियत हो जाती है। इसके अलावा युवा डा० एमर्सन का यह विश्वास था कि विदेश मे रहकर, विख्यात जर्मन वैज्ञानिको के सपर्क मे रहकर और उनके अधीन काम करके वह अपना सम्यक् विकास कर सकेगी। इसलिए उसने एक साल तक विदेश मे अध्ययन करने का निश्चय किया और इसके लिए गौटिंजेन विश्वविद्यालय को चुना, जहा कि एडोल्फ विंडौस रसायन के प्रोफेसर और विश्वविद्यालय की प्रयोगशालाओ के निदेशक थे। कुछ वर्ष पहले विंडौस को विटामिनो के सन्दर्भ मे स्टेरोल (Sterols) के अनुसन्धान पर नोबल पुरस्कार मिल चुका था। स्टेरोल आणविक अलकोहलो का एक वर्ग है। इस वर्ग मे सामान्य जन क

सर्वाधिक परिचय कोलेस्टेरोल से है। डा० एमर्सन इस विषय मे पहले से ही रुचि लेने लगी थी।

गौटिंजेन मे उस वर्ष के अनुभव वैसे आनन्दप्रद नही सिद्ध हुए जैसीकि उसे आशा थी। ग्लैडिस एमर्सन के पहुचने के छ महीने वाद ही जर्मनी पर नाजियो का अधिकार हो गया। विश्वविद्यालयो से शीघ्र ही लोग गायव होने लगे, और गौटिंजेन भी इसका अपवाद नही था। नाजियो के यहूदी-विरोधी आदेशो का कुप्रभाव प्रो० विडौस पर नही पडा और डा० एमर्सन उनके, फैकल्टी के दूसरे असाधारण सदस्यो तथा ग्रेजुएट छात्रो के साथ अपने काम मे लगी रही। इन्ही साथियो मे से एक एडोल्फ व्यूटेनैंट इन दिनो 'हारमोन्स' नाम से विख्यात शरीर-रसायनो पर काम कर रहा था जिसपर कुछ वर्षो वाद उसे नोवल पुरस्कार मिला जो उसे अस्वीकार करना पडा, क्योकि नाजियो के आदेशानुसार उन दिनो कोई जर्मन वैज्ञानिक नोवल पुरस्कार नही स्वीकार कर सकता था। यद्यपि हालात नाजुक होते जा रहे थे किन्तु डा० एमर्सन ने गौटिंजेन मे अपने एक वर्ष मे अपने व्यवसाय से सम्बन्धित अनेक लोगो से मैत्री-सम्बन्ध स्थापित किए। जब नाजियो की शक्ति कुचल दी गई, और जर्मन विश्वविद्यालयो, विज्ञान और उद्योगो का पुनर्गठन हुआ, तो गौटिंजेन के इन वहुत-से साथियो ने उस पुनर्गठन का नेतृत्व किया, तव उनसे डा० एमर्सन के सम्वन्ध फिर से नये हो उठे।

डेढ वर्ष विदेश मे रहने से उसे सवसे अधिक निराशा इस वात से हुई कि ऐसे वातावरण मे रहकर और काम करके भी, जहा कि हर समय जर्मन वोली जाती थी, वह धाराप्रवाह जर्मन वोलना नही सीख सकी।

"मै इसे पढ तो आसानी से लेती हू," उसका कहना है, "और जर्मन मे वात-चीत मे अपने मतव्य को किसी कदर स्पष्ट भी कर देती हू। लेकिन मेरी जर्मन कर्णकटु होती है और मैं अनुमान लगा सकती हू कि भाषा के जानकार को यह कैसी लगती होगी। फिर भी, जव कभी मैं यूरोप जाती हूं तो जर्मन का ही प्रयोग करने का प्रयत्न करती हू—और हर वार मेरे श्रोता मेरी वातो का जवाव शुद्ध अग्रेज़ी मे देते है।"

सौभाग्य से, वातचीत मे धाराप्रवाह जर्मन न वोल पाने से उसे उन प्रयोगगत जतुओ से संपर्क स्थापित करने मे कोई परेशानी नही उठानी पडी जिनपर घर लौटने के वाद उसने काम शुरू किया। यहा वोले गए शब्दो का कोई महत्त्व

नही था जब उसने सफेद चूहो, कुत्तो और दुष्ट प्रकृति, तुनुकमिजाज व महगे छोटे रीसस (Rhesus) बन्दरो पर प्रयोग किए तब भी उच्चरित भाषा की सहायता उसे नही लेनी पडी। योग्यताप्राप्त वैज्ञानिक जानते हैं कि ये सब जानवर प्रायोगिक कार्य का जवाब ऐसे शब्दहीन सदेशो से देते है जिनकी व्याख्या वैज्ञानिक अपनी भाषा मे कर सकता है।

उस अगले वर्ष, अमरीका लौट आने पर, डा० एमर्सन को कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रायोगिक जीव-विज्ञान सस्थान मे रिसर्च एसोशिएट का पद दिया गया और पोषण-विभाग का इन्चार्ज वनाया गया। उसने भोजन मे व्यवस्थित प्रयोगो द्वारा यह पता लगाने और इसकी व्याख्या करने का काम शुरू किया कि हमारे भोजन मे निहित रासायनिक पदार्थों का मानवो पर क्या प्रभाव पडता है, और जानवरो पर प्रयोग करके इस दिशा मे क्या कुछ जानकारी हासिल की जा सकती है। यह कोई नया काम नही था, बल्कि उसने अपने पहले किए गए काम को ही आगे बढाने का निश्चय किया था। इस काम मे सफेद चूहो, हेम्सटरो (एक प्रकार के बडे चूहो) और कुत्तो पर प्रयोग किए जाने थे, क्योकि मनुष्यो की भाति ये भी स्तनधारी है। इन्हे 'स्तनधारी' इसलिए कहा जाता है क्योकि इनकी मादाओ के दूध देनेवाली स्तन-ग्रथि होती हैं जिसके कारण इनके लिए अपने बच्चो को दूध पिलाना सभव होता है। उन दिनो, और आज भी, प्रायोगिक कार्यो के लिए सबसे अधिक प्रयोग सफेद चूहो का होता था इसका एक कारण तो यह है कि इन्हे पैदा करने और इनकी देखभाल करने मे खर्च कम होता है, दूसरे, अन्य निम्न कशेरुकी वर्ग (Lower vertebrates) की अपेक्षा सफेद चूहो पर भोजन और दवाओ की प्रतिक्रिया बहुत कुछ वही होती है जो मानवो पर होती है।

सन् १९३३ मे वह बर्कले, अपने इस्टीट्यूट लौटी तो वहा विटामिन 'ई' पर काम हो रहा था। इसके निदेशक हरबर्ट एम० ईवास इस विटामिन को खोजकर, इसका नामकरण कर चुके थे। अभी से इसे 'प्रजनन-विटामिन' कहा जाने लगा था, क्योकि यह सिद्ध हो चुका था कि जिन चूहो को विटामिन 'ई' की कमीवाली खूराक दी गई, उनकी प्रजनन-शक्ति नष्ट हो गई। तब यह मान लिया गया था कि प्रजनन-शक्ति का ह्रास विटामिन 'ई' की कमी के कारण हुआ है। यदि ऐसा है, तो क्या विटामिन 'ई' की कमी मनुष्यो को प्रजनन-शक्तिहीन बना सकती है? यह एक ऐसी समस्या थी जिसपर अभी अनुसधान होना था। यह तो

ज्ञात हो चुका था कि विटामिन 'ई' अनाज, सब्जियो, गोश्त और दूध मे होता है, और गेहू के अकुर मे यह विटामिन-विशेष प्रचुरता से होता है। इस आखिरी मान्यता के कारण दुनिया के कुछ हिस्सो मे यह रिवाज चल निकला था कि विवाहित युवतिया, विशेष रूप से गर्भिणी महिलाए, रोज एक मुट्ठी गेहू के दाने खाने लगी ताकि वे ससार को स्वस्थ बच्चे दे सकें। फिर, वह रिवाज किसी तर्क-सगत आधार पर था या यह एक तर्कहीन अधविश्वास-भर था ?

आज वैज्ञानिक हमे इस प्रश्न का आशिक उत्तर देते हुए बताते है कि यह सिद्ध नही हो सका कि मानवीय पोषण के लिए विटामिन 'ई' अनिवार्य है। यदि गेहू के दाने वास्तव मे स्वस्थ बच्चे पैदा करने मे कोई मदद देते है तो इसका कारण उनमे निहित विटामिन 'ई' नही है। फिर भी, इस प्रकार की बात तब तक नही कही जा सकती थी जब तक कि वैज्ञानिक, अन्य कारणो के अभाव मे, इस विटामिन-विशेष के प्रभाव का अध्ययन न कर लेते। प्रकृति इसे केवल पेचीदे और दूसरी चीजो के साथ मिले हुए रूप मे ही उत्पन्न करती है, इसलिए इसपर सतोषजनक प्रायोगिक कार्य आरम्भ करने के पहले इसे खालिस रूप मे प्राप्त करना जरूरी था।

डा० ईवास और दूसरे अनुसधाता विटामिन 'ई' को पृथक करने का प्रयत्न कर रहे थे। इसी समय डा० एमर्सन भी उनका हाथ बटाने बर्कले आ पहुची। वे लोग विटामिन 'ई' को अलग करने के काम मे तो कृतकृत्य हुए ही, सन् १९३६ तक उन्होंने इसे तीन भिन्न रूपो मे पृथक कर लिया और तीनो के नाम अल्फा, बीटा और गामा टोकोफैरोल रख दिए। इन तीनो को गेहू के अकुर, मक्का के अकुर और बिनौलो के तेलो से प्राप्त किया गया था। जब पृथक् किए गए विटामिन 'ई' के अध्ययन से उसकी रचना स्पष्ट हो गई, और उसे सश्लेषणात्मक रूप से प्रयोगशाला मे तैयार करना सभव हो गया, तब इस सश्लिष्ट विटामिन 'ई' और प्राकृतिक साधनो से प्राप्त विटामिन 'ई' के प्रभावो का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। इस अध्ययन का निष्कर्ष यह निकला कि प्राकृतिक और सश्लिष्ट दोनो प्रकार के विटामिनो की शक्ति एक ही है। अब, बर्कले के अनुसंधाता प्रयोगगत जीवो पर इनके प्रयोग करने मे जुट गए। उन्हे आशा थी कि शायद उन्हे कोई ऐसी उपलब्धि हो जाए जो चिकित्सा-पद्धति का एक अग बनकर मानव जाति का कुछ कल्याण कर सके।

यद्यपि, जैसाकि पीछे कह चुके है, मानव की प्रजनन-प्रक्रियाओ मे विटामिन

'ई' का क्या महत्त्व है—इस बात का निर्णय अभी तक नही हो सका है, परतु फिर भी प्रयोगो से इतना तो पता चल ही गया है कि सफन प्रजनन के लिए इसे अनिवार्य माननेवाली प्राचीन मान्यता सही है। सन् १९३९ मे डा० ईवास और डा० एमर्सन ने सफेद चूहो की चार पीढियो का अध्ययन किया। जिनमे कुल मिलाकर लगभग ३०० चूहे थे। इस अध्ययन से पता चला कि विटामिन 'ई' की कमीवाली खूराक देने से पीढी-दर-पीढी उत्पादन-क्षमता किस प्रकार कम होती जाती है। यह भी स्पष्ट हो गया कि चुहियो को उदर-नली की सहायता से विटामिन 'ई' की खूराके देकर, चौथी पीढी मे, उनमे फिर से उत्पादन-क्षमता उत्पन्न की जा सकती है।

अगले वर्ष एक और प्रयोग मे पहले की ही भाति विटामिन 'ई' दिया गया। इस प्रयोग से पता चला कि विटामिन 'ई' की कमीवाली खूराक पर पलनेवाली चुहियो का दूध पीने मे जिन बच्चो मे पेशीगत दुष्पोषण हो गया है उसे रोका जा सकता है, बशर्ते कि प्रसव के दिन से ही जननेवाली चुहियो को विटामिन 'ई' दिया जाए। अनुसधाताओ ने कुछ चुहियो को साथ-साथ विटामिन 'ई' की कमीवाली खूराकें दी। जब एक दिन उनमे दो चुहियो के साथ-साथ बच्चे हुए तो उन्होंने उन सभी बच्चो को मिलाकर उन्हे दो भागो मे बाटा। इसके बाद एक भाग के बच्चो को एक चुहिया का दूध पिलाया और दूसरे भाग के बच्चो को दूसरी का। अब उन्होंने एक चुहिया को तो पहले जैसी खूराक पर ही रहने दिया, मगर दूसरी को विटामिन 'ई' देना शुरु कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि यद्यपि सभी बच्चो को मिला दिया गया था और यह नही कहा जा सकता था कि कौन बच्चा किस चुहिया का है, फिर भी पहली चुहिया का दूध पीनेवाले बच्चे पेशीगत दुष्पोषण से नही बच सके, मगर दूसरी चुहिया, जिसे प्रसव के बाद से विटामिन 'ई' दिया गया था, का दूध पीनेवाले बच्चे पेशीगत दुष्पोषण का शिकार नही हुए।

इन दिनो मि० ज्यॉर्ज डब्ल्यू० मर्क इस इस्टीट्यूट मे अक्सर आते-जाते रहते थे। वे उस समय मर्क एण्ड कम्पनी के प्रैसीडेण्ट थे। इस कपनी की राहवे, न्यूजर्सी-स्थित प्रयोगशालाए अमरीका और विश्व के अन्य भागो मे दवाओ आदि के लिए विख्यात हैं। मर्क चिकित्सीय शोध इस्टीट्यूट भी इसी कपनी से सम्बद्ध था और उसमे भी बहुत कुछ वही प्रायोगिक कार्य होता था जो डा० एमर्सन के इस्टीट्यूट मे होता था। फर्क सिर्फ यह था कि मर्क इस्टीट्यूट मे यह काम अपेक्षाकृत बडे

पैमाने पर होता था। मि० मर्क व मर्क इस्टीट्यूट के कई वैज्ञानिक डा० एमर्सन के कृतित्व व व्यक्तित्व से परिचित थे और वे इस निष्कर्ष पर पहुचे थे कि यदि डा० एमर्सन उनके इस्टीट्यूट मे आ जाए तो वहा के कर्मचारी मण्डल को चार चाद लग जाएगे। उन्होने डा० एमर्सन को इस बात का आश्वासन दिया कि न्यूजर्सी मे उपलब्ध सुविधाओ को देखते हुए, यह परिवर्तन उसके हित मे ही रहेगा। इस प्रकार सन् १९४२ मे ३९ वर्ष की उम्र मे डा० एमर्सन मर्क इस्टीट्यूट के जन्तु पोषण विभाग की अध्यक्षा बनकर न्यूजर्सी चली गई। अब उसके विभाग का सारा खर्च एक सफल फार्मेस्युटिकल कपनी उठा रही थी, और उसे अपने प्रायोगिक कार्य के लिए, प्राय आर्थिक कष्टग्रस्त सामान्य विश्वविद्यालय की अपेक्षा कही अधिक सुविधाए प्राप्त थीं।

इस परिवर्तन के साथ डा० एमर्सन ने औद्योगिक ससार मे पदार्पण किया जहा कि आजकल अनेक नवयुवतिया नौकरी कर रही हैं और वैज्ञानिक कार्यो को हाथ मे लेना चाहती हैं, यद्यपि उनकी शैक्षिक योग्यता रसायन मे बैचलर से अधिक नही होती। डा० एमर्सन के पास उच्चतर डिग्रिया थी, वर्षो का अनुभव था जिसके कारण उसे पशुओ पर प्रयोग करने मे विशेष निपुणता प्राप्त हो गई थी, प्रशासनिक योग्यता थी, और इसके अलावा अपने तथा दूसरे क्षेत्रो के लोगो से अच्छे सबध बनाए रखने की अद्भुत क्षमता थी—इन सब बातो के कारण वह इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पद के लिए पूर्णत. योग्य थी।

इस नई नौकरी मे कम योग्यताप्राप्त युवतियो को प्रायोगिक कार्यो की तकनीको मे प्रशिक्षित करने का काम भी उसे दिया गया। वह ऐसे शोध-कार्य के आयोजन और निदेशन मे लगी हुई थी जो फार्मेसी और पोषण के क्षेत्रो मे उपयोगी सिद्ध हो सकता था। प्रशिक्षित सहकर्मियो की आवश्यकता प्रतिदिन बढती ही जा रही थी क्योंकि अमरीका युद्ध मे कूद पडा था, और वैज्ञानिक प्रयोगशालाओ मे नारियो की माग बढ रही थी। स्वय वैज्ञानिको को अपनी प्रयोगशाला मे आपत्कालीन ड्यूटी देने आना पडता था, और आपत्काल मे खुद डा० एमर्सन को अपना कुछ समय वैज्ञानिक शोध एव विकास कार्यालय मे देना पडता था। युद्ध-समाप्ति के बाद व्याख्याता, या वैज्ञानिक विचार-गोष्ठियो की नेत्री के रूप मे उसकी माग बढ गई। मर्क इस्टीट्यूट चाहता था कि वह इस प्रकार के शिक्षा-कार्यो को अपना कुछ समय देती रहे।
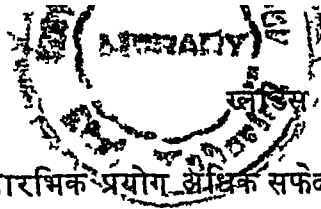
मर्क मे उसने अपने आरभिक प्रयोग अधिक सफेद चूहो पर ही किए। ये प्रयोग मुख्यत विटामिनो के 'बी' कॉम्प्लेक्स परिवार से सबद्ध थे। ये विटामिन वाकई बडे पेचीदा थे। इनके बारे मे ज्ञात नवीन तथ्यो से पता चलता था कि इस परिवार के हर विटामिन का स्वास्थ्य की दृष्टि से उपयोग है, इसलिए ओषधि निर्माताओ के इनके सश्लिष्ट रूप का निर्माण व्यापारिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बन गया था। अनुसधानो से पता चला कि आरम्भ मे जिसे विटामिन 'बी' के नाम से पुकारा जाता था, वह एक विटामिन नही बल्कि एक विटामिन वर्ग है जिसमे कम से कम सात या इससे भी अधिक विटामिन है। डा० एमर्सन का यह काम पहले किए गए काम से मिलता-जुलता ही था, नवीनता यह थी कि अब जिस विशिष्ट विटामिन या एकाधिक विटामिनो का अध्ययन करना होता था उससे रहित भोजन देकर पहले पशुओ मे तरह-तरह की बीमारिया उत्पन्न कर ली जाती थी। जिन चूहो, हेम्सटरो, और कभी-कभी कुत्तो को इन विटामिनो से रहित भोजन दिया जाता था। उनके शरीर मे या तो असामान्य वृद्धि हो जाती थी, अथवा उनकी आख, त्वचा या अन्य अगो की स्थितियो मे असामान्यता दिखाई देने लगती थी। जब उक्त पशुओ के मृत शरीरो का विच्छेदन किया जाता था तो कभी-कभी जिगर, गुर्दे तथा दूसरे हिस्सो को भी असामान्य स्थिति मे पाया जाता था। इस बात का निर्धारण करना भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था कि इन विकृतियो को (ये विकृतिया बहुत कुछ इसी रूप मे मनुष्यो मे पाई जाती हैं) विटामिन की सर्वश्रेष्ठ खूराक देकर किस प्रकार कम या बिलकुल दूर किया जा सकता है। इस बात का पता लगाने का प्रयत्न किया गया कि ये विटामिन इजैक्शन के रूप मे सुई से दिए जाए या खूराको के रूप मे मुह से। ये सब बाते चिकित्सा के क्षेत्र मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी।

सन् १९४०–५० तक उसने विटामिनो पर काम किया। इस काम ने और विश्वविख्यात स्लोन-केटरिंग इस्टीट्यूट फॉर रिसर्च मे एसोशिएट के पद पर नियुक्त हो जाने के बाद अर्बुदो की उत्पत्ति पर कॉर्टिजोन और आहार के प्रभाव पर किए गए काम ने डा० एमर्सन को उसके सबसे प्रिय अनुसधान-क्षेत्र मे प्रवृत्त किया। वह एक जीवरसायनज्ञ थी, और इस शब्द का अर्थ ही है एक ऐसा रसायनज्ञ जो जीवित शरीरो पर रासायनिक पदार्थो के प्रभावो का अध्ययन करे। अब वह धमनी-काठिन्य या धमनियो का कडा होना (Arteriosclerosis) को जन्म देने-

वाले कुछ पोपण-सम्बन्धी कारको के प्रभाव का अध्ययन करने मे प्रवृत्त हुई। धमनी-काठिन्य एक ऐसा रोग है जो वृद्धो को प्राय हो जाता है। इससे उनकी मृत्यु कुछ जल्दी ही हो जाती है। जब मर्क इस्टीट्यूट ने उसे रीसस बन्दरो पर प्रयोग करने की सुविधा प्रदान की, ताकि इस बीमारी के कारणो और इसके इलाज के बारे मे अधिक से अधिक जानकारी हासिल की जा सके, तो उसने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया, यद्यपि रीसस बन्दर दुष्ट प्रकृति के छोटे जानवर होते है जिन्हे वह 'जगली, निर्दय-नन्हे हैवान' कहती है, और उन पर प्रयोग करना खतरे से खाली नही है।

बहुत दिनो से वैज्ञानिक लोग यह मानते चले आ रहे थे कि वानर-परिवार के जन्तु भोजन की प्रतिक्रियाओ और पोपण-विपयक बीमारियो की ग्रहणशीलता मे मानव-परिवार से बहुत कुछ समानता रखते है, और इनके अध्ययन से मानव-जाति के कल्याण के लिए अमूल्य जानकारी प्राप्त हो सकती है। सन् १९५० के दशक मे बुशमैन पर आहार की कमियो का अध्ययन कर लेने के बाद तो वैज्ञानिकों का यह मत और भी दृढ हो गया। बुशमैन शिकागो के लिंकन पार्क जू का प्रसिद्ध गुरिल्ला था जो बाईस वर्ष की उम्र मे सात महीने की बीमारी के बाद मर गया था। अपनी बीमारी के दौरान उसने अनेक मनुष्यो की भाति जराकालीन ह्रास के परिणाम भुगते। यद्यपि उसका आहार तत्कालीन मानदण्डो की दृष्टि मे ठीक था, फिर भी उसके एक हाथ और एक टाग के कुछ भाग पर फालिज गिर गया था। इसके अलावा वह धमनी-काठिन्य और एक प्रकार के तन्त्रिका-शोथ (Neuritis) से पीडित था जो एक प्रकार के विटामिन 'बी' की कमी के कारण हो जाता है। यद्यपि बुशमैन को वैज्ञानिक लोग अपनी समझ से 'उपयुक्त' आहार देते थे फिर भी उसकी शव-परीक्षा मे पता चला कि उसके शरीर मे कुछ और परिवर्तन भी हुए थे जिनका कारण पोपण की कमिया ही थी।

यद्यपि गुरिल्लो और मनुष्यो की आहार-विपयक आवश्यकताए एक नही होती तथापि बुशमैन के शरीर के वैज्ञानिक अध्ययन ने डा० एमर्सन आदि वैज्ञानिकों को यह मानने का एक और आधार प्रदान किया कि धमनी-काठिन्य मे सम्बद्ध उनका पोपण-विपयक अनुसधान ठीक दिशा मे प्रगति कर रहा है। मर्क इंस्टीट्यूट की प्रयोगशाला मे कुत्ता और बन्दरो पर प्रयोग किए जा रहे थे। पहले त्रुटिपूर्ण आहार देकर उनकी धमनियो को कडा किया जाता था और फिर उस आहार के

स्थान पर उन्हे ऐसी वस्तुएं दी जाती थी जो ह्रासोन्मुख रुधिर-वाहिकाओ को प्राकृतिक या बहुत कुछ प्राकृतिक अवस्था में ला सकें। इस प्रकार के अनुसधान-कार्य के लिए, रीसस बन्दरो का प्रयोग आसान या खतरे से खाली नही है, और डा० एमर्सन अपने उन निडर सहयोगियो के प्रति वस्तुत कृतज्ञ है जो इस काम मे उसकी सहायता करते थे।

धमनी-काठिन्य के बारे मे किए गए अध्ययन का सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है अपने पहले के वैज्ञानिको के काम को आगे बढाते हुए मर्क के अनुसधाताओ ने पन्द्रह बन्दरो को चार से लेकर चौदह महीनो तक बी-६ की कमीवाला आहार दिया। समय-समय पर बन्दरो के शरीरो का विच्छेदन करके उनका अध्ययन किया गया। ज्ञात हुआ कि चार महीनो मे ही उनकी धमनिया कठोर होनी शुरू हो गई थी और दूसरे अग भी प्रभावित होने लगे थे। जिन बन्दरो का विच्छेदन सबसे पहले किया गया था उनके शरीरो मे आए विकार अणुवीक्षण यत्र की सहायता से ही देखे जा सकते थे, किन्तु जिनका विच्छेदन काफी समय बाद किया गया उनमे ये विकार केवल आख से दिखाई दे जाते थे। तदनतर, जो बन्दर जीवित थे, और जिनमे इन बीमारियो के लक्षण पाए जाते थे, उन्हे विटामिनयुक्त आहार दिया गया, और कुछ समय बीत जाने पर, जब उनके शरीर मे काफी मात्रा मे विटामिन पहुच गया, एक-एक करके उनका भी विच्छेदन किया गया व उनकी धमनियो तथा दूसरे अगो की परीक्षा की गई। उनके शरीरो मे लिखित सदेशो और उनके आहार-विषयक वैज्ञानिक प्रयोगो के परिणामो की व्याख्या करने के बाद यह निष्कर्ष निकाला गया कि ये परीक्षण मानवीय रोगो के इलाज मे सहायक सिद्ध हो सकते है। मर्क इस्टीट्यूट के अधिकारियो की इन अनुसधानो मे कितनी अधिक दिलचस्पी थी इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि कभी-कभी इन प्रयोगगत जन्तुओ के नाम मर्क इस्टीट्यूट के उपप्रधानो के नाम पर रख दिए जाते है, और यह गौरव का विषय समझा जाता है।

जब सन् १६५६ मे कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय से उसके पास एक आकर्षक निमत्रण आया तो डा० एमर्सन यह सोचकर उदास हो गई कि उसे अपना शोध-कार्य, विशेष रूप से धमनी-काठिन्य-विषयक अनुसधान छोडना होगा। उसे गृह-अर्थशास्त्र विभाग की चेयरमैन के पद पर आमंत्रित किया गया था। जब कभी इस सुअवसर की बात चलती है तो डा० एमर्सन यह कहे बिना नही चूकती कि

शिक्षक के पद के लिए मुझमे कोई असाधारण योग्यता नही थी। यूसीएलए (यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया, लॉस एंजिल्स) मे १६००० से अधिक पूर्णकालिक छात्र थे, और यह पद, मुख्य रूप से प्रशासनिक होने के कारण उसकी रुचि का था। उसे इस बात का भी आश्वासन दिया गया कि वह मर्क मे परामर्शदाता के रूप मे भविष्य मे भी काम कर सकेगी। जब मर्क इस्टीट्यूट कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय को २९ बंदर उपहार-स्वरूप देने को तैयार हो गया ताकि डा० एमर्सन अपना अनुसन्धान जारी रख सके, तो वह इस सुअवसर का लाभ उठाए बिना न रह सकी। लॉस एंजिल्स पहुचने के कुछ ही महीने बाद विश्वविद्यालय के नर्सरी स्कूल ने उससे एक बदर की फरमाइश की ताकि बच्चे उसे पालकर अपना मनोरंजन कर सकें। अब उसे महसूस हुआ कि एक वैज्ञानिक की प्रयोगशाला से उसका एकेडैमिक जीवन कितनी दूर ले जाया जा सकता है, क्योकि कोई व्यक्ति इन जानवरो की उचित देखभाल करने के लिए उत्सुक नही था जो नन्हे पालतू जानवर बनने के लिए नही, बल्कि उच्चतर वैज्ञानिक अनुसधान के उपयुक्त थे।

जब ग्लैडिस एमर्सन कैलिफोर्निया-स्थित अपने नये घर मे प्रविष्ट हुई तो वह ५३ वर्ष के लगभग की एक स्वस्थ-आकर्षक महिला थी। तब तक वह वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओ मे लगभग १०० लेखादि प्रकाशित करा चुकी थी, जिनमे या तो उसके अध्ययन के निष्कर्ष थे अथवा, जैसाकि वैज्ञानिक अनुसन्धान मे सामान्यत. होता है, दूसरो के सहयोग मे किए गए अनुसन्धान का विवरण था। उसे गार्वन स्वर्ण-पदक प्रदान किया जा चुका था। उसके समकक्ष वैज्ञानिको का कहना है कि वह इस पदक की सर्वथा सुयोग्य पात्र थी। भावी जीवन के प्रति उसके मन मे अनेक आशाए थी। वह विश्व स्वास्थ्य सघ तथा दूसरी संस्थाओ के सहयोग से विश्व के उन भागो के निवासियो को श्रेष्ठतर पोषण देने के तरीको और साधनो की खोज करना चाहती है जहा पुष्टिवर्द्धक आहार उपलब्ध नही है। इस दिशा मे योजनाए बन रही है, और काम भी हो रहा है। डा० एमर्सन लॉस एंजिल्स अन्तर्राष्ट्रीय मामलो की परिषद् की गतिविधियो और अपने विश्वविद्यालय के छात्र-वर्गो मे समान रूप से सक्रिय रुचि ले रही है।

उसका भविष्य जो भी हो, उसके दोस्तो का यकीन है कि वह सिर्फ काम मे ही नही डूबी रहेगी। लॉस एंजिल्स मे जाकर उसने सबसे पहले एक कुत्ता पाला—

यह चॉकलेटी रग का एक छोटा-सा पूडिल है। शीघ्र ही उसने एक ग्रुप आयोजित किया जो साथ-साथ लोकगीतो को गाने का अभ्यास करता था। इस ग्रुप के सदस्य सभी तरह के साज़ बजाते थे, जिनमे पियानो, गिटार, एकॉर्डियन और रिकॉर्डर आदि सभी कुछ था। उसे पहले फुटबाल का बडा शौक था, लेकिन बहुत दिनो से वह उसकी उपेक्षा करती आ रही थी। अव उसने फुटबाल का लुत्फ उठाना भी शुरू कर दिया। आगामी वर्षो मे उसका विचार इन सब चीज़ो का, और यात्रा और दूसरी चीज़ो का जी भरकर आनन्द उठाने का है। वह अपने मित्रो से मधुर सम्बन्ध बनाए रखने मे विश्वास करती है, और प्रयोगशाला के अन्दर अपने सहयोगियो और उसके बाहर अपने मित्रो से कभी नाराज़ नही होती।

डोरोथी रुडनिक

जीवन के पहले बीस वर्षों मे डोरोथी रुडनिक बहुत कुछ सोचती थी। वह वैज्ञानिक अध्ययन, विशेष रूप से प्रायोगिक अध्ययन का डटकर प्रतिरोध करती रही। होश सभालने के बाद १६ वर्ष की अवस्था तक उसने अपने भविष्य के प्रति जो कामनाए की थी उनमे वैज्ञानिक बनने की आकाक्षा शामिल नही थी।

ओकोनोमोवोक, विस्कासिन, के एक प्राइवेट सैनिटोरियम मे उसे पहली बार जीवन की पृथक् सत्ता का भान हुआ। उसकी शिकागो-वासी मा अपने प्रसव के लिए इसी स्थान को चुनती थी। उसका एक भाई बड़ा था और एक छोटा। दोनों ही उदीयमान भौतिकविद् थे और पिता रसायनज्ञ। इस वातावरण का उसके विकास पर प्रभाव पडना स्वाभाविक ही था। उसीके शब्दो मे, "मैं एक ऐसे घर मे पली जहा हम सब सास ही विश्लेषणशील वायुमडल मे लेते थे।"

इसमे उसके लिए दु:खी होने की कोई बात न थी। वह एक ज़हीन बच्ची थी, और जल्दी ही उसकी समझ मे आ गया कि विज्ञान और विश्लेषणात्मक मनोवृत्ति —दोनो ही मनोरंजक हैं। फिर भी, उसके बाल-मन मे कोई ऐसी चीज़ थी जो उसे यह नहीं मानने देती थी कि विज्ञान इतना रोचक विषय हो सकता है जिसमें वह अपना सारा जीवन लगा दे। उसके सामने और बहुत-सी सभावनाए थी, यद्यपि यह सच है कि वह यह निश्चय नही कर पाती थी कि अपना जीवन-व्यापी व्यवसाय किसे चुने।

डोरोथी ने अपनी शिक्षा अपने भाइयो के साथ शिकागो के दक्षिण में स्थित पब्लिक स्कूलो मे प्रारम्भ की। वह पार्कर हाई में पढ़ती थी। पार्कर एक अच्छा

हाईस्कूल था, और इसे याद करके अब भी वह अपने गुरुओ के प्रति कृतज्ञता से भर उठती है। एकाध अपवाद को छोडकर इस स्कूल के सभी अध्यापक छात्र-समुदाय के आदर-पात्र थे—वे भी जो सुधी नही थे। "जब मैं उन दिनो को याद करती हू तो इस बात से प्रभावित हो उठती हूं कि स्कूल के अध्यापक वर्ग मे कितनी बडी सख्या मे ऐसे स्त्री-पुरुष थे जिनका व्यक्तित्व वस्तुत गरिमामय था, और जो अपने अध्यापन-कार्य के प्रति वस्तुत समर्पित थे। वे हमसे काम की आशा करते थे और हममे से अधिकाश लगन से काम करते थे।"

पार्क हाई अपना डिप्लोमा प्राप्त करने के लिए छात्रो को विषय-निर्वाचन मे कुछ छूट देता था, और १३-१४ वर्ष की होते-होते डोरोथी निश्चित रूप से समझने लगी थी कि उसे क्या पढना है, क्या नही। उसकी विशेष रुचि इतिहास और भाषाओ मे थी, और जब भी मौका मिलता, वह अपने अध्ययन के लिए इन्हे अवश्य चुनती थी। उसने त्रिकोणमिति (Trigonometry) भी ली क्योकि, "मेरे बडे भाई ने कहा, त्रिकोणमिति लेना मत भूलना, बडा मज़ेदार विषय है, और उसकी बात ठीक निकली। मैंने त्रिकोणमिति पढी, और मुझे उसमे वाकई मज़ा आया।" वह रसायन या भौतिकी नही लेना चाहती थी, और पार्कर हाई से डिप्लोमा प्राप्त करने के लिए ये विषय लेना ज़रूरी भी नही था, इसके अलावा इन्हे बिना लिए ही वह शिकागो विश्वविद्यालय मे प्रवेश भी पा सकती थी, इसलिए उसने खुशी-खुशी इन दोनो विषयो को तिलाजलि दे दी। सन् १९२२ मे वह ग्रेजुएट हुई तो उसके पास साधारण अप्रायोगिक शरीर-क्रियाविज्ञान और मामूली-सी फिजियोग्राफी (भौताकृति विज्ञान) को छोडकर विज्ञान का कोई विषय नही था।

इस सचाई के अलावा, कि उसके पास विज्ञान का कोई विषय नही था, काली आखो और काले बालोवाली इस छरहरे बदन की पन्द्रह वर्षीय लडकी के बारे मे, जो जल्दी ही शिकागो विश्वविद्यालय मे कोर्स शुरू करनेवाली थी, कुछ और बाते भी स्पष्ट हैं। सबसे पहली बात तो यही है कि अपने अधिकाश सहपाठियो की अपेक्षा उसका बौद्धिक विकास कही अधिक तीव्र गति से हो रहा था। दूसरी बात यह है कि वह अपने परिवार द्वारा निर्धारित पैटर्न मे अपनी सगति बिठाने मे कठिनाई अनुभव कर रही थी। यह एक ऐसा तथ्य है जो उसे अपने सामाजिक, आर्थिक और बौद्धिक वर्ग के उन अधिकाश नवयुवाओ से पृथक् करता है जो बिना किसी प्रकार की हील-हुज्जत के अपने परिवार द्वारा निर्धारित पैटर्न का अनुगमन

करते थे। डोरोथी रुडनिक की परम आकाक्षा कॉलेज मे पढने की नही, एक वर्ष के लिए यूरोप-भ्रमण करने की थी। यह सम्भव नही था, और वह इसके कारणो को भी समझती थी। वह जानती थी कि वह अभी बच्ची ही है, यद्यपि उस वर्ष गर्मियो मे साढे पन्द्रह वर्ष की उम्र को वह जितना अधिक समझती थी उतना फिर कभी नही समझा। उसके मन मे यह बात साफ थी कि एक साल यूरोप मे रहने पर जो खर्चा आएगा वह अपने मा-बाप से लेने का उसे कोई अधिकार नही है, क्योकि आगामी वर्षो मे रुडनिक-परिवार के बच्चो की उच्चतर शिक्षा पर काफी रुपया खर्च होना था, और वह जानती थी कि उनका पिता, जोकि आरमर लेबोरेटरीज मे रसायनज्ञ था, कभी अमीर नही होगा। इसलिए यूरोप जाने की अपनी आकाक्षा को अपने मन मे ही दबाए वह सतुष्ट मन से शिकागो विश्व-विद्यालय मे बैलचर ऑफ फिलासफी के लिए अपने अध्ययन मे जुट गई। उसने भाषाओ को अपना प्रमुख विषय चुना।

उसने मुख्यत फ्रैंच और इटालियन भाषाओ को चुना, यद्यपि उसके पितामह जब अपने मूल निवास-स्थान से यहा आकर बसे थे तो जर्मन बोलते थे। उसे विश्व-विद्यालय के अध्ययन मे बडा आनन्द आया। भौमिकी (Geology) उसे सबसे पसन्द आया और इस विषय मे उसकी विशेष रुचि हो गई। उसका कहना है, "मुझे इस बात की खुशी है कि शिकागो विश्वविद्यालय मे विषय-निर्वाचन मे छूट नहीं थी, क्योकि यदि वहा पी-एच० डी० के लिए भौमिकी अनिवार्य विषय न होता तो मैने उसे कभी न पढा होता।" कॉलेज मे वह कभी बोर नहीं हुई। फिर भी, दो साल बाद उसने कॉलेज छोड दिया। अब, वह साढे सत्रह वर्ष की हो चुकी थी—नौकरी करने काबिल, और खुद कमाना चाहती थी। एक साल नौकरी करके और धन जमा करके वह एक वर्ष के लिए विदेश जाने की अपनी चिर-अभिलाषा पूर्ण कर सकती थी।

यह बात सन् १९२४ की है। उन दिनों शिकागो मे नौकरी मिलना मुश्किल न था। शिकागो मण्डी मे एक आलीशान इमारत मे स्थित एक बैंक ने उसे बुक-कीपर रख लिया, जोड लगानेवाली मशीन से काम लेने और चैक छाटने मे उस लडकी को क्या परेशानी हो सकती थी जिसे त्रिकोणमिति जैसा विषय मनोरजक लगा हो। उसके मा-बाप ने उसकी कमाई मे से अपने लिए कुछ नही लिया। विश्व-विद्यालय मे उसकी मैत्री एक ऐसी लडकी से हो गई थी जिसका परिवार अगले

वर्ष विदेश मे रहने के लिए जा रहा था। इसलिए, डोरोथी और उसकी सहेली ने कुछ दिनो के लिए साथ-साथ यात्रा करने की योजना बनाई। उन्होने सोचा, कभी सिर्फ वे दोनो, और कभी सहेली के परिवार के साथ, अपने मन की हौंस निकालेंगी—वे इटली मे कुछ चीजें देखेंगी और आस्ट्रिया मे सगीत का रस लूटेगी। लेकिन डोरोथी ने अपनी योजना अपने ही बल-बूते पर, और अधिकतर अकेली रहने के विचार से बनाई।

इस प्रकार, शिकागो विश्वविद्यालय और बैंक की नौकरी छोडकर अट्ठारह वर्ष की यह स्वतन्त्र युवती अपने पैसे से यूरोप-भ्रमण के लिए निकल पडी। यह एक रगीन और साहसपूर्ण कार्य था। उसका चिर-स्वप्न सार्थक होने वाला था। अब वह युवा हो गई थी, और इस साहसपूर्ण कृत्य का आनन्द और पुलक, यहा तक कि श्राम और कठिनाई का भी पूरा-पूरा आनन्द उठा सकती थी। वह जानती थी कि उसने यह आनन्द खुद कमाए पैसे से खरीदा है। यह आखिरी बात उसके लिए विशेप महत्त्व रखती थी कि उसने यह सब कुछ खुद खरीदा है। विश्लेपण-शील वातावरण उस अश के अलावा जो उसके व्यक्तित्व मे रस-बस गया था, पीछे छूट चुका था, और अब वह भावात्मक उमग मे भरकर यूरोप जा रही थी। यह उमग बनी ही रही और पैसा खत्म हो गया, मगर इसके पहले ही वह काफी हद तक अपने मन की निकाल चुकी थी। उसने टायरॉल पर पर्वतारोहण का आनन्द लूटा और अकेली पेरिस गई। जब वह पेरिस पहुची तो वसन्त का मौसम था और वह अपने खर्च पर कुछ महीने वहा रही।

यूरोप भ्रमण मे उसने बडी मितव्ययिता बरती। वह अपने पैसे से अधिक से अधिक दिन यूरोप मे रहना चाहती थी। उसका कहना है, "पेरिस मे मैं १० डालर प्रति सप्ताह खर्च करती थी, और अमीरो की तरह रहती थी। वहा मेरे परिचय मे आनेवाले अधिकतर लोग ५ डालर प्रति सप्ताह ही खर्च करते थे।" मितव्ययिता से काम लेने के कारण वह एक वर्ष की बजाय डेढ वर्ष विदेश-भ्रमण का आनन्द लूट सकी। भ्रमण के अन्तिम दिनो मे उसने अपने मा-बाप से कुछ पैसा उधार लिया, "यद्यपि यह रकम ज्यादा नही थी—और मैंने इसकी पाई-पाई चुका दी।" इधर डोरोथी विदेश-भ्रमण का आनन्द लूट रही थी, और उधर उसके मा-बाप के मित्रादि उनके प्रति जरूर हमदर्दी ज़ाहिर कर रहे होगे, क्योकि ऐसे मा-बाप कहा होगे जो अपनी उस अट्ठारह वर्षीय लडकी के लिए थोड़े-बहुत चिन्तित न हो उठें

जो उनमें बेहत दूर दुनिया की सैर कर रही हो। लेकिन आखिरकार यह सैर भी खत्म हुई, और पैसे की कमी की वजह से उसे रवाना होने के तीसरे वर्ष सर्दियो मे फिर शिकागो लौट आना पड़ा।

अब उसे कुछ दिन दु ख मे बिताने पड़े। तथ्य आखिर तथ्य थे, और अब उसे इस बात का निर्णय कर लेना जरूरी जान पड़ा कि उसका भावी जीवन-क्रम किस प्रकार का रहेगा। अगर वह बाहर जा पाती, और वहा उसे लेखक के रूप मे कोई काम मिल जाता, तो वह तुरन्त उसे स्वीकार कर लेती। लेकिन जिस प्रकार फ्लोरेंस वैन स्ट्रैटन ने महसूस किया था, "लेखक बनने का निर्णय करके इस विषय का कुछ वर्षो तक अध्ययन करने के बाद जीविका नही कमाई जा सकती," और यह महसूस करने के बाद वह मौसम-विज्ञान की ओर उन्मुख हो गई थी, उसी प्रकार डोरोथी रुडनिक भी अपनी अकेन्द्रीभूत प्रवृत्ति को पहचानने का प्रयास करते हुए इस निर्णय पर पहुची कि उसे किसी न किसी वैज्ञानिक विषय का अध्ययन करना चाहिए। अब वह पछताने लगी—काश इसे वह पहले पहचान पाती!

जब आकर, उसके मन मे कम से कम एक बात स्पष्ट हो चुकी थी। "मैं जान गई थी कि मैं केवल परोक्ष अनुभवो पर जीवित नही रह सकती। यद्यपि पुस्तकीय अध्ययन की ओर मेरी रुचि थी— शायद एक हद तक अपनी इसी रुचि के कारण विदेश-भ्रमण मे मैं ब्रिटिश म्यूजियम और बिब्लियोथिक नेशनल मे घटो बैठी पढ़ती रहती थी—किन्तु अन्तत मैं इस सचाई को पहचान गई थी कि मुझे प्रायोगिक विज्ञान से प्राप्त प्रत्यक्ष अनुभव की परम आवश्यकता है।" इसलिए, उस वर्ष उसने विश्वविद्यालय लौटने का निश्चय किया। उसने निश्चय किया कि वह अपना प्रमुख विषय भाषाओ को ही रखेगी लेकिन कोई वैज्ञानिक विषय, सभवत जीवविज्ञान भी ले लेगी, यद्यपि उस समय किसी विषय का उसके लिए इतना महत्त्व नही था, महत्त्व सिर्फ इस बात का था कि वह विषय विज्ञान से सबद्ध हो।

इस निर्णय के साथ ही उसने एक और निर्णय भी लिया, जो इतना कठिन नही था। उसने फैसला किया कि वह जो कुछ भी पढेगी, रुचिपूर्वक पढ़ेगी। इसमे कोई सन्देह नही कि बीस वर्ष की अवस्था को पार करके जो नई मिस रुडनिक आविर्भूत हो रही थी वह पहल करनेवाली, क्षमतावान और व्यक्तिगत

उत्तरदायित्व को समझनेवाली युवती थी जो यह समझ गई थी कि अपनी क्षमताओ को वढाने के लिए उसे अपनी प्रवृत्तियो को किसी एक विन्दु पर केन्द्रित करना ही होगा।

जल्दी ही एक ऐसी वात हुई जो आशातीत और चौंका देनेवाली थी । प्राणि-विज्ञान मे एक आरम्भिक कोर्स करते हुए वह प्राणियो मे पाए जानेवाले रचनात्मक पैटर्नों की अनेकविधता की ओर आकृष्ट हो गई। उसके मस्तिष्क मे (उसका कहना है, "यह मूलत. एक इतिहासज्ञ का मस्तिष्क है।") यह वात आई कि भ्रूणविज्ञान ही इन रूपो के विकास का अध्ययन और इनका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष है। इसलिए उसने भ्रूणविज्ञान मे एक कोर्स ले लिया और शीघ्र ही उसे पता चला कि प्राणियो के रूपों के इतिहास का 'विश्लेषण' करने के लिए इस विपय मे वौद्धिक और तकनीकी उपकरण प्रचुर मात्रा मे विद्यमान है। इस अनुभूति के वाद उसका अनिश्चय समाप्त हो गया। अब उसके लिए भ्रूण ऐसे सुन्दर और रहस्यमय पदार्थ हो गए जो उचित प्रश्न किए जाने पर प्रश्नकर्त्ता को अपने गोपनीय रहस्य बता सकते है, और प्रोफेसर वी० एच० विलियर जैसे वैज्ञानिक की छात्रा को प्रश्न करने का उचित ढग सीखने मे कठिनाई क्या हो सकती थी। सक्षेप मे, "भ्रूणविज्ञान ने मुझे आकृष्ट कर लिया। अब भी मै इसे आकर्षक पाती हू।" यह विपय उसके लिए 'आवश्यक' हो गया।

आशा के अनुरूप उसने जमकर काम किया और तेजी से प्रगति की। सन् १९२८ मे उसने भाषाओ मे पी-एच० डी० किया और 'फाई वीटा कैप्पा' के लिए चुन ली गई। ग्रेजुएट कक्षा मे पहले वर्ष उसने फैलोशिप के लिए अर्जी नही दी, क्योकि वह समझती थी कि दूसरे विद्यार्थी उमसे कही अधिक जरूरतमन्द हैं। लेकिन जब एक वर्ष वाद उसे पता चला कि फैलोशिप से उसे वडी सुविधाएं मिल सकती थी तो उसने अर्जी दे दी और शिकागो विश्वविद्यालय मे अगले दो वर्षों मे उसे फैलोशिप मिलती रही।

प्राणिविज्ञान विभाग के प्रोफेसर विलियर वाले सेक्शन मे उसे जल्दी ही भ्रूणविज्ञान की एक विशेष समस्या, या समस्याओ के एक वर्ग पर काम करना पडा जो आज तक उसकी रुचि का प्रमुख विषय है—इस समस्या को 'विभेदीकरण' (Differentiation) कहते हैं। इसे इस प्रकार समझा जा सकता है: भ्रूणवैज्ञानिक अध्ययन का सम्बन्ध प्राणियो की भ्रूण अवस्था से है जो मानवो में

गर्भाधान के बाद तीन महीनों तक, और दूसरे जानवरो मे इससे कम या अधिक समय तक रहती है। मिस रुडनिक और उसके साथियो ने भ्रूणविज्ञान के अपने कोर्स मे प्राणियो की रचना का अध्ययन उनके विकास की 'प्रक्रिया' को समझने के लिए किया था। विभेदीकरण इसी प्रक्रिया का एक पक्ष है। मिस रुडनिक के मन मे यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि ऐसा क्यो होता है कि एक भ्रूण का कोई छोटा-सा हिस्सा या कई हिस्से तो फेफडा बन जाता है, और दूसरा हिस्सा दाहिना कान या दुम का पर बन जाता है। उसमे इस प्रक्रिया मे लगनेवाले समय और घटना-क्रम का निश्चयात्मक ज्ञान प्राप्त करने की भी इच्छा उत्पन्न हुई।

उदाहरणार्थ नवदीक्षित भ्रूणवैज्ञानिको के प्रिय उपकरण अडे को देखते ही वह समझ जाती थी कि यह एक समेचित अडा है, तो यदि इसकी उचित देख-भाल की जाए तो—यह एक मुर्गी के बच्चे का रूप धारण कर सकता है। जब इसी अडे को एक प्लेट मे तोड दिया जाता था तो इसे देखते ही वह समझ जाती है कि इसकी जर्दी वह एकत्रित भोजन है जो भ्रूण या शावक चूज़े के काम आता, बशर्ते कि इस अण्डे को प्लेट मे तोडने के बजाय अण्डे सेने की मशीन मे रखा जाता। उसकी रुचि उस ज़रा-सी सफेदी मे थी जो अण्डे का छिलका तोडते ही उसकी जर्दी के ऊपर रह जाती है। यह सफेदी वस्तुत. जीवित जीवद्रव्य (Protoplasm) था, जिसमे छिलके को फोडकर बाहर आनेवाले चूज़े की शक्ल मे बदल जाने की स्वाभाविक क्षमता होती है। वह जानती थी कि जीवित जीवद्रव्य की उस ज़रा-सी चिन्दी मे ऐसे अदृश्य तत्त्व है जो एक दिन एक भरे-पूरे, परोवाले चूज़े के प्रत्येक भेदीकृत अग—ऊतक, अस्थि और शरीर के दूसरे अगो मे परिवर्तित हो जाएगे। उसे अचरज इस बात का था कि जीवद्रव्य की इस छोटी-सी चिन्दी मे वह तत्त्व कहा है जो चूज़े की पेषणी (Gizzard) बनेगा, वह चीज़ कहा है जो उसकी बायीं पलक बनेगी और वह चीज़ कहा है जो उसके दाहिने पैर का मुडा हुआ पजा बनेगी। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह था कि इन अदृश्य चीज़ो को चूज़े के विभिन्न अगो और उपागो मे रूपायित करनेवाली यह प्रक्रिया कब शुरू होती है, और कैसे आगे बढती है।

डा० विलियर के सुझाव पर उसने चूज़े के थाइरॉयड मूल को खोजने के इरादे से एक शोध-कार्य प्रारभ किया। यह शोध-कार्य पूरा हुआ और जब वह ग्रेजुएट विद्यार्थी के रूप मे दूसरे वर्ष मे पढ रही थी तब प्रायोगिक जीव विज्ञान

और चिकित्सा की गतिविधियो मे इसका उल्लेख किया गया। इस खोज से साफ-साफ पता लग गया कि अन्तत चूजे मे थाइरॉयड का रूप लेनेवाले ऊतको का मूल दो विशिष्ट क्षेत्रो मे है। वह जीवित जीवद्रव्य (या ब्लेस्टोडर्म) मे किसी भी समझदार व्यक्ति को इन दोनो क्षेत्रो की स्थिति समझा सकता है—जीवद्रव्य जिसे पचासो बार उसने इस हसरत से देखा है कि वह उसके कुछ रहस्यो पर प्रकाश डाल सके।

ग्रेजुएट स्कूल-कार्य के आरम्भ से ही उसने एक भ्रूण के छाटे गए भाग दूसरे भ्रूण मे प्रतिरोपित करने की सूक्ष्म तकनीको के विकास का कार्य आरम्भ कर दिया था। वस्तुत अपने इसी कार्य के कारण उसे विभेदीकरण के क्षेत्र मे विशेष ख्याति प्राप्त हुई है। यह तकनीक उसकी मौलिक नही थी, किन्तु इसमे इतने अधिक हस्त-कौशल की अपेक्षा है कि इने-गिने भ्रूणवैज्ञानिक और आनुवशिकविज्ञ ही इसका प्रयोग सफलतापूर्वक कर सकते है। सन् १९३१ मे उसे शिकागो विश्व-विद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि मिली और सन् १९४० मे वह न्यू हैवन मे एलवर्ट्स मैगनस कॉलेज मे प्राणिविज्ञान की असिस्टेंट प्रोफेसर बनी। इन दोनो घटनाओ के बीच के वर्षों मे उसे एक के बाद दूसरी फेलोशिप मिलती रही। पहले उसने येल-स्थित ऑसबर्न प्राणिविज्ञान प्रयोगशाला मे तीन वर्ष तक प्रायोगिक शोध की। इसके बाद तीन वर्ष तक वह रौचेस्टर विश्वविद्यालय मे अनुसधान-रत रही। फिर वह पहली बार कनैक्टीकट मे कृषि-सम्बन्धी अनुसधान केन्द्र मे वेतनभोगी प्रशिक्षक बनी। इसके बाद उसने वैलजली मे नौकरी की।

इन वर्षों मे डा० रुडनिक इस बात पर बराबर शोध मे लगी रही कि भ्रूणो मे चीजें कैसे, क्यो और कब होती हैं। अलबत्ता, अध्यापन के क्षेत्र मे आने के बाद वह अनुसधान को अपेक्षाकृत कम समय दे पाई। उसका एक तरीका यह था कि वह एक भ्रूण के अग दूसरे भ्रूण मे प्रतिरोपित कर देती थी, और सूक्ष्म विश्लेषण द्वारा यह देखने का प्रयत्न करती थी कि कब और क्या परिणाम निकलते हैं। सन् १९४२ की गर्मियो मे वह एक ऐसा प्रयोग करने वाली थी जिससे दो प्रश्नो का उत्तर मिल सकता था। पहला प्रश्न था यदि किसी ताज़े भ्रूण का कोई हिस्सा लेकर किसी दूसरे भ्रूण मे प्रतिरोपित कर दिया जाय तो क्या वह हिस्सा इस नये भ्रूण मे भी वही अग बनेगा जो वह पहलेवाले भ्रूण में रहकर अपने स्वाभाविक विकास-क्रम मे बनता? चूजो के भ्रूणों पर किए जानेवाले इन

प्रयोग की तुलना उस प्रयोग से की जा सकती है जिसमे बाल्डविन सेवो की कलम मैकिनतोश सेव के तने पर लगाई गई थी और उस कलम से बाल्डविन सेव ही उत्पन्न हुए थे।

अपने प्रयोग के लिए डा० रुडनिक ने क्रीपर (एक प्रकार की छोटी टांगों-वाली मुर्गी) के भ्रूण के कुछ खंड सफेद लैगहॉर्न मुर्गियो के अण्डो से प्राप्त भ्रूणो मे प्रतिरोपित करने का निश्चय किया। क्रीपर जो अण्डे देती है उनमे से एक-चौथाई मे से तो बच्चे पैदा ही नही होते। इन अण्डो के भ्रूण छिलको मे ही मर जाते है। इनमे से जो भ्रूण बच जाते है और विकसित होते है उनके पैर सिर्फ छोटे नही बल्कि वेहद छोटे होते है।

यह प्रयोग स्टोर्स लेबोरेटरीज मे किया गया, जहा वह पहले भी काम कर चुकी थी, और अब फिर वापस आ गई थी। सफेद लैगहार्न के अडो को लगभग ६० घण्टे और क्रीपर के अडो को सिर्फ २४–३० घण्टो तक अडे सेने की मशीन मे रखा गया। प्रयोग मे काम आने वाले अडे को इस प्रकार के प्रकाश मे देखा गया कि उसका भ्रूण दिखाई देने लगे और फिर जहा वह स्थित था उस जगह छिलके पर एक निशान बना दिया गया। अब डा० रुडनिक ने एक छोटी-सी आरी ली और इस निशान के चारो ओर एक छोटी-सी खिड़की-सी बना दी, और खिडकी के किवाट को लगा ही रहने दिया—इसे बाद को हटाना था। तब नमक के गर्म घोल से भरी एक पैट्री डिश मे क्रीपर का एक अंडा तोडा गया। अपने द्विनेत्री विच्छेदक सूक्ष्मदर्शी के प्रयोग से डा० रुडनिक ने उसके भ्रूण (या ब्लेस्टोडर्म) को अलग किया और फिर शीशे की एक नली से नमक के घोल को बार-बार फूंककर उस भ्रूण को पैट्री डिश मे फैला दिया।

अब उसने एक शीशे की सुई से, जो शीशे की एक छड़ को मद्धम गैस लपट मे पिघलाकर बनाई गई थी, फैले हुए, भ्रूण के केन्द्र मे स्थित साइनस रॉम्बोइडेलिस (Sinus rhomboidalis) की दाहिनी और बायी ओर से दो खण्ड काटकर अलग कर लिए। इन दोनो खण्डो मे अग-निर्माता क्षेत्र सम्मिलित था किन्तु ये खण्ड उस क्षेत्र-विशेष से बडे थे। अंडों को सेने की मशीन मे रखने का यह समय इतना कम था कि एक अग-निर्माता खण्ड को प्रतिरोपित करना सम्भव नहीं था। अब उसने पहलेवाले अडे की खिडकी का किवाड़ हटा दिया, अन्दर की झिल्ली को कुछ दूर तक चीर दिया और उसे छोटी-छोटी चिमटियो से पकड़े रही। इसके

बाद उसने अपने सूक्ष्मदर्शी का प्रकाश खुली हुई खिडकी के नीचे स्थित भ्रूण पर केन्द्रित किया और भ्रूण की कोख मे एक छोटा-सा सूराख कर दिया। अब उसने शीशे की नली से क्रीपर के भ्रूण से अलग किया गया पहला खण्ड मुह मे चूस लिया (दूसरा खण्ड लैंगहार्न के दूसरे भ्रूण मे प्रतिरोपित करना था) और सूक्ष्मदर्शी की सहायता से काम करते हुए लैंगहॉर्न के भ्रूण की कोख मे किए गए सूराख से उसे प्रतिरोपित कर दिया। इसके बाद खिडकी पर छिलके का वही किवाड लगा दिया गया, पैराफीन से बन्द कर दिया गया, और अडे को फिर से अडे सेने की मशीन मे रख दिया।

इस सारे ऑपरेशन मे १०-१५ मिनट लगे और "यह मुश्किल नही है," यह उसका कथन है—इस कथन को उस कलाकार के उन शब्दो की भाति ही समझना चाहिए जिनका वह आपको अपनी एचिंग दिखाते समय प्रयोग करता है। अपनी सूक्ष्म तकनीको की पूर्णता से डोरोथी रुडनिक को वह कलात्मक सतोष प्राप्त होता है जो उसे कठिनाइयो की ओर से बेखबर कर देता है।

अगर यह कठिन नही है (उसके लिए!) तो भी इस तरह के शोध को सतोषजनक रूप से पूर्ण करना टेढी खीर है, क्योकि इसमे बहुत अधिक अडो की दरकार होगी। यद्यपि सन् १९४५ मे 'दि जर्नल ऑफ एक्सपेरीमेटल जूओलॉजी' मे उसने पूर्वोक्त प्रयोग से सबद्ध अपना जो लेख प्रकाशित कराया उससे यह नही पता चलता कि इस प्रयोग मे कितने अडे काम आए, फिर भी उससे यह तो पता चल ही जाता है कि कुल मिलाकर १५९ पृथक्-पृथक् आपरेशन किए गए, जिनमे लैंगहॉर्न अडो मे प्रतिरोपण के बाद ६ से १४ दिन तक भ्रूण जीवित था। १५९ जीवित भ्रूणो मे से ९३ मे प्रतिरोपित खडो का विकास हुआ। इनमे से लगभग एक-तिहाई मे साफ पता चल रहा था कि भ्रूण लैंगहॉर्न का होते हुए भी उसमे से जो पाव या पख के भाग निकल रहे है वे क्रीपर के है।

इन प्रतिरोपित अगो के परीक्षण से सिद्ध हो गया कि उसके सवाल का जवाब 'हा' मे था—अर्थात्, यदि एक भ्रूण के कुछ खड किसी दूसरे भ्रूण मे प्रतिरोपित कर दिए जाए तो वे इस नये भ्रूण मे भी उन्ही अगो के रूप मे विकसित होगे जिनमे वे अपने वास्तविक भ्रूण मे होते।

दूसरे प्रश्न का उत्तर भी मिल गया। यह प्रश्न था असामान्यता अग-निर्माता क्षेत्र के 'भीतर' स्थित किसी कारण से होती है (जैसाकि कुछ वैज्ञानिको का कहना

है), अथवा उस क्षेत्र के वाहर से आई किसी चीज के कारण, जैसे अंग-मुकुल (Limb bud) के आकार ग्रहण करते समय अल्प प्रवाह या रुधिर-प्रवाह का विपाक्त हो जाना। इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए उसने अगनिर्माता क्षेत्रो से (इसके पहले कि भ्रूणो मे उनका अपना रुधिर-संचार तत्र विकसित हो सके) प्रतिरोपणीय खड ले लिए। इन खडो का सम्बन्ध सामान्य रुधिर-सचार से ही रहा था। परीक्षणो से पता चला कि सफल प्रतिरोपणो मे से एक-चौथाई मे प्रतिरोपित खडो के कारण टागें वहुत छोटी (क्रीपर जैसी) है। यह वही प्रतिशत है जो क्रीपर के अडो मे से सामान्यतया विकसित होता है (मगर अडे के छिलके मे ही मर जाता है)। इस प्रयोग मे यह सिद्ध हो गया कि असामान्यता का कारण अगनिर्माता क्षेत्र मे ही विद्यमान है।

अगो के इस प्रतिरोपण के समय अडे वहुत कम समय के लिए सेने की मशीन मे रखे जाते है—कुल १४--३० घटे तक। इससे, सामान्य-जन इस वात का कुछ अदाजा लगा सकता है कि भ्रूण की कितनी आरम्भिक अवस्था मे यह पता लगाया जाता है कि जीवित जीवद्रव्य की उस छोटी-सी विंदी मे उस चीज की स्थिति का पता लगाया जाता है जो विकसित होकर टाग या पख वनती है। वह यह भी समझ सकता है कि इस प्रकार के अनुसधान के लिए प्रभूत परिश्रम की अपेक्षा है। इसकी कष्टसाध्य शारीरिक प्रक्रियाए लवा समय चाहती है, परीक्षणो और विश्लेपण मे तो और भी अधिक समय लगता है, तव कही जाकर परिणाम निकलता है।

भावी अंग-निर्माता सामग्री के विभेदीकरण का अध्ययन करने के वाद उसने चूजो पर और भी काम किया जिसका सम्वन्ध उनके फेफडे, दिल, यकृत, आत और तत्रिका-तत्र से था। येल-स्थित ऑसवर्न जूऑलॉजिकल लेवोरेटरी की फेलो के रूप मे वह डा० जे० एस० निकोलस के साथ चूहो के भ्रूणो पर भी कुछ काम कर चुकी थी। उन प्रयोगो मे सिद्ध हो चुका था कि यदि चूहो के भ्रूणो को हटाकर जीव के शरीर के वाहर ऊतकों के संवर्द्धनो (Cultures) मे प्रतिरोपित कर दिया जाए तो मा के शरीर के वाहर भी उनके आंगिक विकास, स्पंदनयुक्त दिल आदि का निर्माण हो सकता है। ऐसे एक प्रयोग मे एक सौ सफल प्रतिरोपण किए गए और उनके परिणामो की रिपोर्ट तैयार की गई। फिर भी मिस रडनिक का ध्यान विशेप रूप से चूजो के भ्रूणो पर ही रहा। सन् १९५० के आरम्भ मे उसे जगन-

हाइम पुरस्कार मिला। इस पुरस्कार की सहायता से वह एलबर्टस मैगनस कॉलेज मे अपने अध्यापकीय और प्रशासकीय कार्य से मुक्त होकर चूजो के भ्रूणो पर अपना काम आगे बढा सकी। सन् १६४८ मे वह इस कॉलेज मे प्रोफेसर बना दी गई थी।

जगनहाइम पुरस्कार उसे विशेष रूप से चूज़ो के भ्रूणो मे प्रोटीन के सश्लेपण से सबद्ध प्रकिण्व तत्र का अध्ययन करने के लिए दिया गया था। यह काम यकृत (पूरी मुर्गी मे प्रोटीन सश्लेषण का केन्द्र) के विभेदीकरण पर किए गए उसके काम का ही विकसित रूप था। उसने अडे की ज़र्दी मे से यकृत को अलग करके उसे जीवित भ्रूण मे पहुचा दिया, जहा उसका उपयोग अग-निर्माता सामग्री के रूप मे किया गया। अब उसने इस बात पर ध्यान दिया कि प्रोटीन का सश्लेषण कब शुरू होता है—उसका उद्देश्य इस सश्लेषण से सम्बद्ध प्रकिण्व-विषयक गति-विधियो का अध्ययन करना था। वह यह जानना चाहती थी कि भ्रूण-यकृत मे सघटित प्रकिण्वो को जल्दी से जल्दी कब पहचाना जा सकता है ?

यह प्रयोग डा० मेला और डा० वैल्श के सहयोग से डा० वैल्श की प्रयोग-शाला मे किया गया। भ्रूणवैज्ञानिक डा० रुडनिक को जीवरसायनज्ञ डा० वैल्श की प्रयोगशाला मे जाकर प्रकिण्वो का अध्ययन करने की सूक्ष्म विधियो को सीखना एक सुखद अनुभव प्रतीत हुआ। उन्हे प्रकिण्व के इतिहास की प्रमुख विशेषताओ पर प्रकाश डालने मे सफलता मिली। वे इस निष्कर्ष पर पहुचे कि प्रकिण्व पहले खास भ्रूण के बाहर, अडे की ज़र्दी के चारो ओर लिपटी रहनेवाली झिल्ली मे प्रकट होता है। बाद मे, भ्रूण-यकृत के प्रकट होने पर, यह उसमे पाया गया और काफी बाद मे मस्तिष्क मे पाया गया।

स्वाभाविक था कि इस सफलता से उत्साहित होकर डा० रुडनिक के मन मे चूज़ो के तन्त्रिका-तत्र के ऊतको (मस्तिष्क और मेरु रज्जु) के बारे मे विस्तार से जानने की इच्छा उत्पन्न हुई, बाद मे उसने डा० वैल्श के साथ इस विषय का अध्ययन भी किया। अभी (सन् १६५६ मे) इसके कुछ भाग पर काम जारी ही है लेकिन यह काम शुरू करने के पहले डा० रुडनिक ने जगनहाइम पुरस्कार-वर्ष पूरा किया। इस क्रम मे वह चार या पाच महीने बाहर भी गई और यूरोप मे उसने भ्रूणवैज्ञानिक कार्य को देखा और समझा। उसने एटिएन वुल्फ लेबोरेटरी, स्ट्रासबर्ग, मे छ सप्ताह काम किया, और बोलोग्ना मे एक विचार-गोष्ठी मे इटालियन भाषा मे भाषण दिया। "मुझे बहुत अभ्यास करना पडा," उसका

कहती है।

डा० रुडनिक उन वैज्ञानिको मे से है जिन्हे अध्यापन और अनुसंधान—दोनो मे सतोप मिलता है, और न्यू हैवन मे उसका पद ऐसा है कि उसे दोनो ही के लिए सुअवसर प्राप्त है। आँसवर्न जूओलॉजिकल लेबोरेटरी मे उसकी एक छोटी-सी प्रयोगशाला है जहा वह ऑसवर्न की ओर से मिलनेवाली सुविधाओ के सहारे अपना शोध-कार्य करती रहती है। यहा से, कार मे, चंद मिनटो मे ही वह एलबर्टस मैगनस कॉलेज पहुंचकर अपनी कक्षाओ और प्रयोगशालाओ मे काम कर सकती है। अनुसधान-कार्य प्राय. वह सप्ताहात मे, गर्मियो मे और दूसरी छुट्टियो मे ही करती है, क्योकि पढाने मे उसे काफी समय देना पडता है। जब कभी कोई प्रयोग या अनुसधान जरूरी होता है तो वह शाम को या तीसरे पहर आकर ऑसवर्न मे काम करती है।

अनुसधान और अध्यापन के अतिरिक्त डा० रुडनिक ने कुछ वर्षो तक 'सोसाइटी फॉर दि स्टडी ऑफ ग्रोथ एड डेवेलपमेट' द्वारा प्रकाशित वार्षिक ग्रंथ में सपादक के रूप मे भी काम किया। इस ग्रथ मे सोसाइटी द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित परिसवाद मे पढे गए लेखादि भी प्रकाशित किए जाते है। उसे लिखने मे अब भी आनन्द आता है, और उसने पाठ्य-पुस्तको और दूसरे प्रकाशनो मे लेखक के रूप मे अपना योगदान दिया है। भ्रूणविज्ञान के अपने क्षेत्र मे वह एक मान्य अधिकारी विद्वान है। अभी उसके सामने वर्षों का सक्रिय जीवन है, और उसे आशा है कि भ्रूणविज्ञान उसके लिए आकर्षणहीन कभी नही होगा, और वह उसमे और महत्त्वपूर्ण कार्य करेगी।

* * *

1352

मुद्रक राष्ट्रीय प्रिंटिंग वर्क्स, दिल्ली-६